महाकवि केशवदास
की
कवि-प्रिया

[सटीक]

सगुन पदारथ अर्थयुत, सुबरनमय सुभसाज।
कंठमाल ज्यों कविप्रिया, कंठ करो कविराज॥

टीकाकार
श्री लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी, एम० ए०
साहित्य रत्न, शास्त्री, हिन्दी प्रभाकर, कविरत्न
आचार्य
मधुसूदन-विद्यालय-इंटर कालेज,
सुलतानपुर

प्रकाशक
।।त-भाषा-मन्दिर, दारागंज, प्रयाग

मवार] सन् १९५० [मू० ४।।

दो शब्द

राष्ट्र भाषा के पद पर प्रतिष्ठित हो जाने के बाद हिन्दी के प्राचीन साहित्यिक ग्रंथों का पठन पाठन परमावश्यक हो गया है। प्राचीन ग्रंथ प्रायः ब्रजभाषा में हैं, इससे आज कल की हिन्दी के वातावरण मे उनका समझना जटिल हो गया है। उनमें केशवदास को समझना तो और भी कठिन है। उनके लिए प्रसिद्ध है कि "कवि को देन न चहै बिदाई। पूछै केसव की कविताई"। खिझकर लोग उनको "कठिन काव्य का प्रेत" भी कहते हैं

तुलसी, सूर, कबीर, बिहारी और देव आदि महाकवियों के ग्रंथों की टीकायें मिलती हैं, पर अभी तक केशवदास के ग्रंथों की कोई प्रामाणिक टीका उपलब्ध नहीं थी, इससे भारतीय विश्व-विद्यालयों और अन्य शिक्षण-संस्थाओं के विद्यार्थियों और अध्यापकों को भी उनकी दुरूह कविता का अर्थ समझने में बड़ी कठिनाई पड़ती थी। हर्ष की बात है कि स्थानीय मधुसूदन विद्यालय इंटर कालेज के आचार्य प० लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी, एम० ए०, शास्त्री, साहित्य-रत्न, हिन्दी-प्रभाकर, कविरत्न ने यह कमी पूरी कर दी है। मैंने उनकी लिखी टीका देखी है। टीका अच्छी और उपयोगी है। मूल पाठ में कहीं-कहीं अशुद्धियाँ रह गई हैं। अगले संस्करण में शुद्ध और बहुत ही प्रामाणिक पाठ देना चाहिये।

रामनरेश त्रिपाठी

वसंत निवास सुलतानपुर,
२८-९-५२

महाकवि केशवदास

[१६१८-१६७४]

[संक्षिप्त परिचय]

अन्य महाकवियों की भाँति महाकवि केशवदास जी के जीवन-चरित्र मे अनुमान से काम नहीं लेना पड़ता, क्योंकि उन्होंने कविप्रिया में अपना विस्तृत परिचय स्वय ही दिया है। यह सनाढ्य ब्राह्मण थे। उनका गोत्र भारद्वाज और अल्ल ' मिश्र ' थी। उनके पूर्वज ब्रजमण्डल के डीग कुम्हेर नामक स्थान के निवासी थे। ओरछा के संस्थापक राजा रुद्रप्रताप के समय उनके पितामह कृष्णदत्त मिश्र ओरछा में आकर बस गये। उन्हें राजा रुद्रप्रताप ने पुराण-वृत्ति पर नियुक्त किया था। राजा रुद्रप्रताप के उत्तराधिकारी मधुकरशाह हुए जिन्होंने इनके पिता काशीनाथ मिश्र का बड़ा सम्मान किया। वह उन्ही के दरबार में रहते थे। केशवदास जी के दो भाई और थे। बड़े बलभद्र मिश्र और छोटे कल्याणदास। मधुकर शाह के बाद उनके जेष्ठ पुत्र राम शाह ओरछा की गद्दी पर बैठे। उनके आठ भाई थे, जिनमें इन्द्रजीत पर उन्हें अधिक विश्वास था। राज्य का सारा भार उन्होंने इन्ही पर डाल रखा था। राज्य की देख-भाल यही करत थे। इन्ही इन्द्रजीत ने महाकवि केशवदास जी का बडा सम्मान किया और २१ ग्राम भेंट मे दिए। वह इन्हें अपना गुरू मानते थे। इसी नाते राजा रामशाह भी इन्हें आदर की दृष्टि से देखते थे।

केशवदास जी बड़े स्वाभिमानी तथा निस्पृह थे। अपनी निस्पृहता के दो उदाहरण उन्होंने 'कविप्रिया' में दिए हैं। एक बार जब यह राजा इन्द्रजीत के साथ तीर्थ यात्रा को गये, तब उन्होंने प्रयाग में इनसे

कुछ मागने को कहा तो इन्होंने केवल यही मागा कि 'आपकी कृपा के सिवा मुझे और कुछ न चाहिए। 'आप जैसी कृपा मुझपर करते आए हैं, वैसी सदैव करते रहिए।' दूसरी बार जब यह बीरबल महाराज के यहा गये, तब उन्होंने भी कुछ मागने के लिए कहा। तब भी इन्होंने धन की कामना नही की और केवल यहीं कहा कि 'आपके दरबार मे मुझे कोई न रोके।'

इनका कुल विद्वानों का कुल था। इनके सभी पूर्वज सस्कृत के प्रकाड पंडित थे। इनके एक पूर्वज भाऊराम ने वैद्यक के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भाव प्रकाश' की रचना की थी। पिता काशीनाथ मिश्र ने ज्योतिष की प्रसिद्ध पुस्तक 'शीघ्रबोध' लिखी।

इन्होंने कुल मिला कर नौ ग्रन्थो की रचना की जिनके नाम (१) रामचन्द्रिका (२) कविप्रिया (३) रसिक प्रिया (४) विज्ञान गीता (५) रत्नबावनी (६) वीर सिंह देव चारित्र (७) जहागीर जस चन्द्रिका (८) नख-शिख तथा (९) राम अलकृत मजरी हैं। इनमें से अन्तिम दो पुस्तकें प्राप्य नहीं है। शेष सात पुस्तकों में से 'रामचन्द्रिका', 'कविप्रिया, तथा रसिक प्रिया एव विज्ञानगीता को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

विषय-सूची

कवि - प्रिया

पहला प्रभाव

श्री गणेश-वन्दना

गजमुख सनमुख होत ही, विघन विमुख ह्वै जात।
ज्यों पग परत प्रयाग-मग, पाप-पहार विलात ॥१॥

श्री गणेश जी के अनुकूल होते ही विघ्न इस प्रकार दूर हो जाते हैं, जिस प्रकार प्रयाग के मार्ग में पैर पड़ते ही पापों का पहाड़ लुप्त हो जाता है।

श्री वाणी वन्दना

वाणी जू के वरण युग सुवरण-कण परमान।
सुकवि सुमुख कुरुखेत परि, होत सुमेरु समान ॥२॥

'वाणी' जी (श्रीसरस्वती देवी) के दो अक्षर, वास्तव में स्वर्ण के कण हैं जो सुकवि के सुन्दर मुख रूपी कुरुक्षेत्र में पड़कर सुमेरु के समान हो जाते हैं।

गणपति दन्त वर्णन

सत्त्व सत्त्व गुण को कि सत्य ही की सत्ताशुभ,
सिद्धि की प्रसिद्धि की सुबुद्धि वृद्धि मानिये।
ज्ञान ही की गरिमा कि महिमा विवेक ही की,
दरशन ही को दरशन उर आनिये॥
पुण्य को प्रकाश वेद-विद्या को विलास किधौं,
यश को निवास 'केशौदास' जग जानिये।
मदन-कदन-सुत-वदन-रदन किधौं,
विघन विनाशन की विधि पहिचानिये ॥३॥

इसे सत्त्व-गुण का सार या सत्य की शुभसत्ता या सिद्धियों की ख्याति अथवा सुबुद्धि की वृद्धि माने। अथवा ज्ञान की गरिमा या विवेक का महत्त्व अथवा दर्शनशास्त्र का दर्शन ही समझें। या पुण्य का प्रकाश या वेदविद्या की शोभा अथवा (केशवदास कहते हैं कि) ससार में यश का निवासस्थान माने। इसे कामदेव को मारनेवाले (श्रीशिव जी) के पुत्र (श्री गणेश जी) के मुख का दाँत मानें या विघ्न को नष्ट करने का उपाय समझें।

ग्रन्थ-रचना-काल

दोहा

प्रगट पञ्चमी को भयो, कवि-प्रिया अवतार।
सोरह से अट्ठावनो, फागुन सुदि बुधवार॥४॥
नृप कुल बरनौं प्रथम ही, अरु कवि केशव वश।
प्रगट करी जिन कवि-प्रिया, कविता को अवतश॥५॥

संवत् १६५८ में फालगुन सुदि पचमी बुद्धवार को कवि प्रिया का आरभ किया गया है। सबसे पहले इसमें राजवश का वर्णन किया गया है। इसके बाद केशव कवि के वश का वर्णन है जिन्होंने कविता की शोभा इस 'कविप्रिया' की रचना की है।

नृपवंश वर्णन

ब्रह्मादिक की विनय ते, हरण सकल भुविभार।
सूरजवंश करयो प्रगट, रामचन्द्र अवतार॥६॥
तिनकेकुल कलिकालरिपु, कहि केशव रणधीर।
गहरवार विख्यात जग, प्रगट भये नृप वीर॥७॥
करण नृपति तिनके भये, धरणी धरमप्रकास।
जीति सबै जगती करयो, वाराणसी निवास॥८॥
प्रगट करणतीरथ भयो, जगमे तिन के नाम।
तिनके अर्जुनपाल नृप, भये महोनी ग्राम॥९॥

गढ़कुँडार तिनके भये, राजा सोहनपाल।
सहजकरण तिन के भये, कहि केशव रिपुकाल ॥१०॥
राजा नौनिकदे भये, तिन के पूरणसाज।
नौनिकदे के सुत भये, पृथुज्यों पृथ्वीराज ॥११॥
रामसिंह राजा भये, तिन के शूर समान।
राजचन्द्र तिनके भये, राजा चन्द्र प्रमान ॥१२॥
राय मेदिनीमल भये, तिन के केशवदास।
अरिमद मरदन मेदिनी, कीन्हों धरम प्रकास ॥१३॥
राजा अर्जुनदे भये, तिन के अर्जुन रूप।
श्रीनारायण को सखा, कहैं सकल भुविभूप ॥१४॥
महादान षाड़श दये, जीती जग दिशिचारि।
चारौ वेद अठारहौ सुने पुराण विचारि ॥१५॥
रिपुखण्डन तिन के भये, राजा श्री मलखान।
युद्ध जुरे न मुरे कहूँ, जानत सकल जहान ॥१६॥
नृप पतापरुद्र सु भये, तिन के जनु रणरुद्र।
दया दान को कल्पतरु, गुणनिधि शीलसमुद्र ॥१७॥
नगर ओरछो जिन रच्यो, जगमें जागति कृत्ति।
कृष्णदत्त मिश्रहि दई, जिन पुराणकी वृत्ति ॥१८॥
भरतखण्ड मण्डन भये, तिन के भारतचन्द।
देश रसातल जात जिहिं, फेरयो ज्यों हरिचन्द ॥१९॥
शेरशाहि असलम के, उर शाली शमशेर।
एक चतुरभुज हू नयो, ताको शिर तेहि वेर ॥२०॥

ब्रह्मादिक की विनय से समस्त पृथ्वी का भार दूर करने के लिए सूर्यवंश में श्रीरामचन्द्र का अवतार हुआ। उसी सूर्यवंश के अन्तर्गत जगत-प्रसिद्ध गहरवार कुल में, कलियुग के वैरी और रणधीर राजा वीरसिंह प्रकट हुए। उनके पुत्र राजा करण हुए जिन्होंने पृथ्वीपर

धर्म का प्रकाश फैलाया और सारे जगत को जीतकर काशी में निवास किया। वहाँ उनके नाम से करण-तीर्थ अब भी प्रसिद्ध है। उनके पुत्र अर्जुनपाल राजा हुए, जो महोनी गाँव में रहने लगे। उनके पुत्र राजा साहनपाल हुए जिन्होंने गढकुंडार में निवास किया। उनके पुत्र सहज करण हुए जो शत्रुओं के लिए काल स्वरूप थे। उनके पुत्र राजा 'नौनिकदेव' हुए और नौनिक देव के पुत्र पृथु के समान 'पृथ्वीराज' हुए। उनके पुत्र सूर्य के समान राजा रामसिंह हुए और 'रामसिंह' के पुत्र चन्द्रमास्वरूप राजचन्द्र हुए। 'राजचन्द्र' के पुत्र राय 'मेदिनीमल' हुए जिन्होंने शत्रुओं का घमंड चूर करके पृथ्वी पर धर्म का प्रकाश फैलाया। उनके पुत्र अर्जुन स्वरूप राजा अर्जुन देव हुए जिन्हें पृथ्वी के सभी राजा श्रीनारायण का मित्र ही कहा करते थे और जिन्होंने षोडष महा-दान दिये तथा चारों दिशाओ के राजाओ को जीत लिया और चारों वेद तथा अठारहों पुराणों को सुना। उनके पुत्र, वैरियों को मारनेवाले श्री मलखानसिंह हुए जो कभी युद्ध होने पर पीछे नहीं मुड़े और जिन्हें सारा जगत जानता था। उनके पुत्र युद्ध में रुद्ररूप धारण करनेवाले 'प्रतापरुद्र' हुए जो दया तथा दान के कल्पतरु और गुणों के कोष तथा शील के समुद्र थे। उन्होंने 'ओरछा' नगर बसाया जिससे संसार में उनकी कीर्ति फैली तथा कृष्णदत्त मिश्र को पुराण सुनाने की वृत्ति प्रदान की। उनके पुत्र भारतवर्ष की शोभा-स्वरूप भारतीचंद हुए जिन्होंने हरिचंद के समान देश को रसातल जाने से बचा लिया और शेरशाह असलेम की छाती में तलवार घुसेड़ दी। अपने समय में उन्होंने श्री चतुर्भुज नारायण को छोड़ और किसी दूसरे को सिर नहीं झुकाया।

उपजि न पायो पुत्र तेहि, गयो सु प्रभु सुरलोक।
सोदर मधुकरशाह तब, भूप भये भुवलोक ।।२१।।
जिन के राज रसा बसे केशव कुशल किसान।
सिन्धु दिशा नहिं वारही पार बजाय निशान ।।२२।।

तिनपर चढ़िआये जे रिपु, केशव गये ते हारि।
जिनपर चढ़ि आपुन गये, आये तिनहिं सँहारि ॥२३॥
सबलशाह अकबर अवनि जीतिलई दिशि चारि।
मधुकरसाहि नरेश गढ़, तिन के लीन्हें मारि ॥२४॥
खान गनै सुल्तान को, राजा रावत वाद।
हारयो मधुकरसाहि सों, आपुन साहिमुराद ॥२५॥
साध्यो स्वारथ साथहीं, परमारथ सो नेह।
गये सो प्रभु वैकुंठमग, ब्रह्मरन्ध्र तजि देह ॥२६॥
तिनके दूलहराम सुत, लहुरे होरिलराउ।
रिपुखण्डन कुलमण्डनौं, पूरण पुहुमि प्रभाउ ॥२७॥
रनसूरो नरसिंह पुनि, रननमेनि मुनि ईश।
बांध्यो आपु जलालदीं, बानो जाके शीश ॥२८॥
इन्द्रजीत, रणजीत पुनि, शत्रुजीत बलवीर।
विरसिंह देव प्रसिद्ध पुनि, हरिसिंहौ रणधीर ॥२९॥
मधुकरसाहि नरेश के, इतने भये कुमार।
रामसिंह राजा भये, तिन के बुद्धि उदार ॥३०॥
घर बाहर वरणहि तहाँ, केशव देश विदेश।
सब कोई यहई कहैं, जीतै राम नरेश ॥३१॥
रामसाहि सों शूरता, धर्म न पूजै आन।
जाहि सराहत सर्वदा, अकबर सो सुलतान ॥३२॥
कर जोरे ठाढ़े तहाँ, आठौ दिशि के ईश।
ताहि तहाँ बैठक दियो अकबर सो अवनीश ॥३३॥
जाके दरशन को गये, उघरे देव किवाँर।
उपजी दीपति दीप की, देखति एकहिबार ॥३४॥
ता राजा के राज अब, राजत जगती माँह।
राजा, राना, राउ सब, सोवत जाकी छाँह ॥३५॥

तिन के सुत ग्यारह भये, जेठ साहि संग्राम।
दच्छिण दच्छिणराज सों, जिन जीत्यो संग्राम ॥३६॥
भरतखण्ड भूषण भये, तिन के भारतसाहि।
भरत, भगीरथ, पारथहि, उनमानत रूप ताहि ।३७।
सुत सोदर नृप रामके, यद्यपि बहु परिवार।
तदपि सबै इन्द्रजीत शिर, राजकाज को भार ॥३८॥
कल्पवृच्छ सो दानि दिन, सागर सो गम्भीर।
केशव शूरो सूरसो, अर्जुन सो रणधीर ।३९॥
ताहि कछावाकमल सो, गढ़ दीन्हों नृप राम।
विधि सों साधत बैठि वहँ, भूपति वाम, अवाम ॥४०॥

उनके कोई पुत्र उत्पन्न नहीं होने पाया कि वह स्वर्ग लोक सिधार गये। तब उनके सगे भाई मधुकरशाह राजा हुए। उनके राज्य में किसान कुशलपूर्वक निवास करते थे। उन्होंने सिन्धु नदी के इस ओर ही नहीं, प्रत्युत उस ओर-दूसरे किनारे पर भी अन्य राजा के राज्य में विजय का डंका बजाया। उनपर जो शत्रु चढ़कर आये, वे हार कर गये और जिन पर उन्होंने स्वय चढाई की, उन्हें वे मार कर आये। महाप्रतापी अकबर ने पृथ्वी की चारों दिशाओं को जीत लिया था, परन्तु मधुकरशाह ने उसके किले भी अपने अधीन कर लिए। सुलतान (अकबर) को तो वह साधारण खान (सरदार) समझते थे और अन्य राजा-रावों को तो कुछ गिनते ही न थे। स्वय मुरादशाह मधुकरशाह से हार गये थे। उन्होंने अपने स्वार्थसाधन के साथ ही साथ परमार्थ से भी स्नेह किया और वह ब्रह्मरंध्र मार्ग द्वारा (तालूफटजाने से) शरीर छोड़कर स्वर्ग सिधारे। उनके बड़े पुत्र दूलहराम तथा छोटे होरिलराव हुए जो वैरियों को मारने वाले और अपने वंश की शोभा थे तथा समस्त पृथ्वी पर उनका प्रभाव था। फिर (तीसरे) रण-बाकुरे नृसिंह और (चौथे) रत्नसेन थे, जिन्होंने जलालुद्दीन अकबर शाह को हराया था और जिनकी बड़ी प्रशंसा थी।

फिर (पाँचवे) शत्रुओं को जीतनेवाले इन्द्रजीत और (छठवें) बलवान शत्रुजीत थे तथा (सातवें) प्रसिद्ध वीरसिंह देव और (आठवें) रणधीर हरिसिंहदेव थे। मधुकरशाह के इतने पुत्र हुए उनमें रामसिंह राजा हुए जो बड़ी उदारबुद्धिवाले थे। उनकी घर-बाहर तथा देश-विदेश सभी स्थानों में, लोग प्रशंसा करते हुए यहीं कहा करते थे 'कि राजारामसिंह सदा विजयी रहते हैं।' रामसिंह से वीरता और धार्मिकता में, कोई दूसरा बराबरी नहीं कर सकता था। और जिनकी प्रशंसा स्वयं सुलतान अकबर करते थे। जहाँ पर आठो दिशाओं के राजा हाथ जोड़े खड़े रहते थे, वहाँ पर अकबर जैसे बादशाह ने उन्हें सम्मानपूर्वक बैठाया था। जिनके (श्रीबद्रीनाथ जी के) दर्शनार्थ जाने पर देव-मंदिर के दरवाजे स्वयं खुल गये थे और उनके एक बार देखते ही दीपक में भी ज्वाला उत्पन्न हो गई थी। उसी राजा का राज्य अब इस पृथ्वी पर सुशोभित हो रहा है और उसकी छाया (आश्रय) में राजा, राना, राव, सभी सुख पूर्वक सोते हैं। उनके ग्यारह पुत्र हुए जिनमें सबसे बड़े संग्राम सिंह थे, जिन्होंने दक्षिण के राजा से संग्राम जीता था। उनके पुत्र भारतीशाह हुए जो भरतखंड की शोभा थे और जिन्हें लोग भरत भगीरथ और अर्जुन की उपमा दिया करते थे। यद्यपि राजा रामसिंह के बेटे, भाई तथा और बहुत सा परिवार था तथापि राज-काज का सारा भार इन्द्रजीत पर था। वह कल्प-वृक्ष से दानी, समुद्र के समान गम्भीर, सूर्य जैसे तेजस्वी और अर्जुन जैसे रण-धीर थे। राजा रामसिंह ने उन्हें अपना कछोवागढ़ प्रदान किया था जहाँ बैठकर वह शत्रु और मित्र से यथाविधि बर्त्ताव करते थे।

> कियो अखारो राज को, शासन सब संगीत।
> ताको देखत इन्द्र ज्यों, इन्द्रजीत रणजीत ॥४१॥
> बाल वयक्रम बल सब, रूप शील गुण वृद्ध।
> यदपि भरो अवरोध पट, पातर परम प्रसिद्ध ॥४२॥

रायप्रवीण प्रवीण अति, नवरंगराइ सुवेश।
अति विचित्रनैना निपुण, लोचन नलिन सुदेश ॥४३॥
सोहत सागर राग की, तानतरंग तरंग।
रंगराइ रँगवलित गति, रँगमूरति अँग अँग ॥४४॥
तन्त्री, तुम्बुर, सारिका, शुद्ध सुरनि सों लीन।
देवसभा सी देखिये, रायप्रवीण प्रवीन ॥४५॥
सत्या, रायप्रवीणयुत, सुरतरु, सुरतरु गेह।
इन्द्रजीत तासों बँध्यो, केशवदास सनेह ॥४६॥
सुरी, आसुरी, किन्नरी, नरी रहति सिरु नाइ।
नवरस नवधाभक्ति स्यों, शोभित नवरँग राइ ॥४७॥
हाव-भाव संभावना, दोला सम सुखदाय।
पियमन देति झुलाय गति, नवरस नवरगराय ॥४८॥
भैरवयुत गौरी संयुत, सुरतरंगिनी लेखि।
चन्द्रकला सी सोहये, नैनविचित्रा देखि ॥४९॥
नैन वैन रति सैन सम, नैनविचित्रा नाम।
जयन्न शील पति मैन मन, सदा करति विश्राम ।५०।
नागरि सागर राग की, सागर तानतरंग।
पति पूरणशशि दरसि दिन, वाढ़ति तान तरंग ॥५१॥
तानति तानतरंग की, तन मन वेधति प्राण।
कलाकुसुमशर शरन की, अति अयानि तनत्राण ॥५२॥
रंगराय की आंगुरी, सकल गुणन की मूरि।
लागत मूढ़ मृदंग मुख, शब्द रहत भर पूरि ॥५३॥
रंगरायकर मुरजमुख, रँगमूरति पद चारु।
मनो पढ़्यो है साथही, सब सगीत विचारु ॥५४॥
अँग जिते संगीत के, गावत गुणी अनंत।
रँगमूरति अँग अंग प्रति, राजत मूरतिवंत ॥५५॥

रायप्रवीण प्रवीण सों, परवीणन कहँ सुःख।
अपरवीण केशव कहा, परवीणन मन दुःख ॥५६॥
रतनाकर लालित सदा, परमानन्दहि लीन।
अमल कमल कमनीय कर, रमा कि रायप्रवीन ॥५७॥
राय प्रवीण कि शरदा, शुचि रुचि रंजित अंग।
वीणा पुस्तक धारणी, राजहँस सुत संग ॥५८॥
वृषभवाहिनी अगयुत, व.सुकि लसत प्रवीण।
शिव सँग सोहति सर्वदा, शिवा कि रायप्रवीण ॥५९॥
नाचत गावत पढत सब, सबै बजावत वीण।
तिन में करत कवित्त यक रायप्रवीण प्रवीण ॥६०॥
सविताजू कविता दई, जाकहँ परम प्रकास।
ताके कारज कविप्रिया, कीन्हीं केशवदास ॥६१॥

राज्य का भली-भाँति शासन प्रबन्ध करने के बाद इन्द्रजीतसिंह ने स गीत का अखाड़ा जमाया और वह उस अखाड़े में इन्द्र के समान ही आनन्द लेते थे। यद्यपि रूप, शील और गुण में बढ़ी हुई नवयुवती बालाओं से उनका अन्तःपुर भरा हुआ था, परन्तु उनमें छः वेश्यायें बहुत प्रसिद्ध थीं। उनमें (पहली) अत्यन्त चतुर प्रवीणराय, (दूसरी) सुन्दर वेशवाली नवरगराय, (तीसरी) अत्यन्त निपुणा और कमल जैसे नेत्रवाली विचित्रनयना, (चौथी) राग के समुद्र की लहर के समान तानतरग, (पाँचवीं) आनन्दमूर्ति रगराय तथा (छठवीं) सर्वांगसुन्दरी रगमूर्ति थी। इनमें चतुर प्रवीणराय की वीणा देवसभा के समान प्रतीत होती थी, क्योंकि जिस प्रकार देवसभा तंत्री (वृहस्पति) तुँबुरु गन्धर्व, सारिका अप्सरा और शुद्ध (सत्वगुणवाले) देवताओं से युक्त रहती है उसी प्रकार उसकी वीणा भी तंत्री (तार), तुँबुरु (तू बा), सारिका (घोरिया) और शुद्ध स्वरों से युक्त है। रायप्रवीण सत्या (सत्यभामा) के समान है, क्योंकि जिस प्रकार उसके घर

रायप्रवीण प्रवीण अति, नवरंगराइ सुवेश।
अति विचित्रनैना निपुण, लोचन नलिन सुदेश ॥४३॥
सोहत सागर राग की, तानतरंग तरंग।
रंगराइ रंगवलित गति, रंगमूरति अँग अँग ॥४४॥
तंत्री, तुम्बुर, सारिका, शुद्ध सुरनि सों लीन।
देवसभा सी देखिये, रायप्रवीण प्रवीन ॥४५॥
सत्या, रायप्रवीणयुत, सुरतरु, सुरतरु गेह।
इन्द्रजीत तासों बँध्यो, केशवदास सनेह ॥४६॥
सुरी, आसुरी, किन्नरी, नरी रहति सिरु नाइ।
नवरस नवधाभक्ति स्यों, शोभित नवरंग राइ ॥४७॥
हाव-भाव संभावना, दोला सम सुखदाय।
पियमन देति झुलाय गति, नवरस नवरंगराय ॥४८॥
भैरवयुत गौरी संयुत, सुरतरंगिनी लेखि।
चन्द्रकला सी सोहिये, नैनविचित्रा देखि ॥४९॥
नैन बैन रति सैन सम, नैनविचित्रा नाम।
जयन्न शील पति मैन मन, सदा करति विश्राम ।५०।
नागरि सागर राग की, सागर तानतरंग।
पति पूरणशशि दरसि दिन, वाढ़ति तान तरंग ॥५१॥
तानति तानतरंग की, तन मन बेधति प्राण।
कलाकुसुमशर शरन की, अति अयानि तनत्राण ॥५२॥
रंगराय की आतुरी, सकल गुणन की मूरि।
लागत मूढ़ मृदंग मुख, शब्द रहत भर पूरि ॥५३॥
रंगरायकर मुरजमुख, रंगमूरति पद चारु।
मनो पढ्यो है साथही, सब संगीत विचारु ॥५४॥
अँग जिते संगीत के, गावत गुणी अनंत।
रँगमूरति अँग अंग प्रति, राजत मूरतिवंत ॥५५॥

रायप्रवीण प्रवीण सों, परवीणन कहँ सुःख ।
अपरवीण केशव कहा, परवीणन मन दुःख ॥५६॥
रतनाकर लालित सदा, परमानन्दहि लीन ।
अमल कमल कमनीय कर, रमा कि रायप्रवीन ॥५७॥
राय प्रवीण कि शरदा, शुचि रुचि रजित अंग ।
वीणा पुस्तक धारणी, राजहँस सुत संग ॥५८॥
वृषभवाहिनी अगयुत, वासुकि लसत प्रवीण ।
शिव सँग सोहति सर्वदा, शिवा कि रायप्रवीण ॥५९॥
नाचत गावत पढत सब, सबै बजावत वीण ।
तिन में करत कवित्त यक रायप्रवीण प्रवीण ॥६०॥
सविताजू कविता दई, जाकहँ परम प्रकास ।
ताके कारज कविप्रिया, कीन्हीं केशवदास ॥६१॥

राज्य का भली-भाँति शासन प्रबन्ध करने के बाद इन्द्रजीतसिंह ने संगीत का अखाडा जमाया और वह उस अखाड़े में इन्द्र के समान ही आनन्द लेते थे। यद्यपि रूप, शील और गुण में बढी हुई नवयुवती बालाओं से उनका अन्तःपुर भरा हुआ था, परन्तु उनमें छः वेश्यायें बहुत प्रसिद्ध थीं। उनमें (पहली) अत्यन्त चतुर प्रवीणराय, (दूसरी) सुन्दर वेशवाली नवरगराय, (तीसरी) अत्यन्त निपुणा और कमल जैसे नेत्रवाली विचित्रनयना, (चौथी) राग के समुद्र की लहर के समान तानतरग, (पाँचवी) आनन्दमूर्ति रगराय तथा (छठवीं) सर्वांगसुन्दरी रगमूर्ति थी। इनमें चतुर प्रवीणराय की वीणा देवसभा के समान प्रतीत होती थी, क्योंकि जिस प्रकार देवसभा तंत्री (वृहस्पति) तुँबुरु गन्धर्व, सारिका अप्सरा और शुद्ध (सत्वगुणवाले) देवताओं से युक्त रहती है उसी प्रकार उसकी वीणा भी तंत्री (तार), तुँबुरु (तूंबा), सारिका (घोरिया) और शुद्ध स्वरों से युक्त है। रायप्रवीण सत्या (सत्यभामा) के समान है, क्योंकि जिस प्रकार उसके घर

में सुरतरु (पारिजात वृक्ष) था, उसीप्रकार इसके घर में सुरतरु (स्वरों का वृक्ष) है। (ऐसी वीणा है, जिसमें सातो स्वर निकलते हैं)। जिस प्रकार उसपर इन्द्रजीत (श्रीकृष्ण, जो इन्द्र को जीत कर पारिजात लाये थे) अनुरक्त थे, उसी प्रकार इस प्रवीणराय से इन्द्रजीतसिंह स्नेह बद्ध हैं। नवों रसों और नवों प्रकार की भक्ति के सहित नवरंगराय वेश्या ऐसी सुशोभित होती थी कि उसे देखकर नारियाँ, किन्नरियाँ, असुर तथा देव स्त्रियाँ सिर झुका लेती थीं। नये ढंग के हाव-भाव में नवरंगराय अपने प्रियतम के मन को भुला देती है, इसलिए भूला जैसी सुखदायक है। नयनविचित्रा चन्द्रकला के समान सुशोभित है, क्योंकि जिसप्रकार चन्द्रकला, भैरव, गौरी (पार्वती) और सुरतरंगिनी (गंगा) से युक्त है, उसी प्रकार वह भी भैरव तथा गौरी रागों से युक्त है और सुरतरंगिनी अर्थात् स्वरों की तो मानो नदी ही है। नयन विचित्रा नाम की वेश्या नयन और बचन में रति-समय की चेष्टाओं के समान है तथा अपने कामदेव स्वरूप पति के मन को जीतनेवाली है तथा उसके मन में सदा विश्राम करती है। तानतरंग वेश्या बड़ी चतुर तथा रागों की सागर है और अपने पूर्ण चन्द्रमा जैसे पति के दर्शन के दिन उसके मन में रागों की लहरें उठा करती हैं। तानतरंग की तानें तन, मन और प्राणों को वेध डालती हैं। वे तानें कामदेव के वाणों की कला रखती हैं जिनसे बचने के लिए अज्ञान ही तनत्राण (कवच) का कामदेता है अर्थात् अज्ञानी ही उन कलाओं से बच सकता है। रंगराय की उँगलियाँ सब गुणों की मूल हैं जो मूढ़ मृदंग के मुख में लगते ही उसे शब्दों से भरपूर कर देती हैं। रंगराय के हाथों, मृदंग के मुख तथा रंगमूर्ति के सुन्दर पैरों ने मानो एक साथ ही संगीत विद्या को पढ़ा है। संगीत के जितने अंग हैं और जिन्हें अनन्त गुणी जन गाया करते हैं, वे सब रंगमूर्ति के अंग-अंग में मूर्तिमान रहते हैं। रायप्रवीण की वीणा से प्रवीणों (चतुरों) को सुख होता है।

अप्रवीणो की तो बात ही क्या कहूँ उसके विरोधियों की वीणाओं तक को मन में दुःख होता है (कि हम इसके हाथ से न बजाई गईं)। यह रायप्रवीण है या लक्ष्मी है, क्योंकि जिस प्रकार लक्ष्मी, रत्नाकर (समुद्र) से लालित हैं उसी प्रकार यह भी रत्नाकर (रत्नों के समूह) से लालित रहती है। जिस प्रकार लक्ष्मी परमानन्द (भगवान् विष्णु) में लीन रहती हैं उसी प्रकार यह भी अत्यन्त आनन्द में लीन रहती है। जिस प्रकार लक्ष्मी के हाथों में निर्मल कमल रहता है उसीप्रकार यह भी हाथों में कमल नामक कंकण पहने रहती है। यह प्रवीण राय है या शारदा है? क्योंकि, जिस प्रकार शारदा का शरीर स्वच्छ कान्ति से युक्त है उसी प्रकार इसका शरीर भी शृंगार से सुशोभित है। जैसे शारदा वीणा और पुस्तक धारण करती हैं, वैसे यह भी वीणा और पुस्तक लिये रहती है। जिस प्रकार शारदा राज हंस के पुत्र अर्थात् राजहंस के साथ रहती हैं, उसी प्रकार यह भी हंस-सुत अर्थात् सूर्य वंशी-राजा के साथ रहा करती है। यह राय प्रवीण है या पार्वती, क्योंकि जिस प्रकार शिव की अर्द्धांङ्गिनी होने के कारण पार्वती वृषवाहिनी (बैल पर सवार) हैं उसी प्रकार यह भी वृष वाहिनी (धर्म पर सवार) है। जिस प्रकार उनके अंग में वासुकि (नाग) पड़ा रहता है उसी प्रकार इसके अंग में भी वासुकि (सुगंधित पुष्पहार) रहता है। वह जैसे शिव के संग रहती है, वैसे यह भी शिव (सुशोभितरूप) के साथ रहती है। वैसे तो सभी वेश्याएं नाचती, गाती, पढ़ती और वीणा बजाती हैं परन्तु उनमें काव्य रचना अकेली रायप्रवीण करती है। श्री सूर्य देव ने उसे कविता करने की प्रकाशमयी प्रतिभा दी है। उसी की शिक्षा के लिए केशवदास ने यह 'कविप्रिया' बनाई है।

दूसरा प्रभाव

कविवंश वर्णन

ब्रह्मादिक के विनय ते, प्रकट भये सनकादि।
उपजे तिनके चित्त ते, सब सनाढ्य की आदि ॥१॥
परशुराम भृगुनद तब, तिनके पायँ पखारि।
दिये बहत्तरि ग्राम सब, उत्तम विप्र विचारि ॥२॥
जगपावन वैकुंठपति, रामचन्द्र यह नाम।
मथुरा-मंडल में दिये, तिन्हैं सात सै ग्राम ॥३॥
सोमवश यदुकुल कलश, त्रिभुवनपाल नरेश।
फेरि दिये कालकाल पुर, तेई तिनहि सुदेश ॥४॥
कुंभवार उद्देश कुल, प्रकटे तिन के बस।
तिन के देवानन्द सुत, उपजे कुल अवतंस ।५॥
तिनके सुत जगदेव जग, थापे पृथ्वीराज।
तिनके दिनकर सुकुल सुत, प्रगटे पंडितराज ॥६॥
दिल्लीपति अल्लावदी, कीन्ही कृपा अपार।
तीरथ गया समेत जिन, अकर कियो कै बार ॥७॥
गया गदाधर सुत भये, तिनके आनँदकन्द।
जयानन्द तिनके भये, विद्यायुत जगबन्द ॥८॥
भये त्रिविक्रम मिश्र तब, तिनके पण्डितराय।
गोपाचल गढ दुर्गपति, तिनके पूजे पाँय ॥९॥
भावशर्म तिनके भये, तिनके बुद्धि अपार।
भये शिरोमणि मिश्र तब, षटदरशन अवतार ॥१०॥
मानसिंह सो रोष करि, जिन जीती दिशि चारि।
ग्राम वीस तिनको दये, राना पायँ पखारि ॥११॥

तिनके पुत्र प्रसिद्ध जग, कीन्हें हरि हरिनाथ।
तोमरपति तजि और सों, भूलि न ओड्यो हाथ ॥१२॥
पुत्र भये हरिनाथ के कृष्णदत्त शुभ वेष।
सभा शाह संग्राम की जीती गढ़ी अशेष।१३॥
तिनको वृत्ति पुराण की, दीन्हीं राजा रुद्र।
तिनके काशीनाथ सुत, सो भे बुद्धिसमुद्र ॥१४॥
जिनको मधुकरशाह नृप, बहुत कियो सनमान।
तिनके सुत बलभद्र बुध, प्रकटे बुद्धिनिधान ॥१५॥
बालहि ते मधुशाह नृप तिनसों सुन्यो पुरान।
तिनके सोदर द्वै भये, केशवदास कल्यान ॥१६॥
भाषा बोलि न जानहीं, जिनके कुल के दास।
भाषा कवि भो मन्दमति, तेहि कुल केशवदास ॥१७॥
इन्द्रजीत तासों कह्यो मांगन मध्य प्रयाग।
माग्यो सब दिन एक रस, कीजै कृपा सभाग ॥१८॥
योहीं कह्यौ जु वीर वर, मांगु जु मन में होय।
माग्यो तब दरबारमे, मोहि न रोकै कोय ॥१९॥
गुरु करि मान्यो इन्द्रजित, तनमन कृपा विचारि।
ग्राम दये इकवीस तब, ताके पाँय पखारि ॥२०॥
इन्द्रजीत के हेतु पुनि, राजा राम सुजान।
मान्यो मन्त्री मित्र कै, केशवदास प्रमान ॥२१॥

ब्रह्माजी के चित्त से सनकादि प्रकट हुए और उनके चित्त मे सनाढय ब्राह्मणो की उत्पत्ति हुई। (अर्थात् ब्रह्माजी के मानसिक पुत्र सनकादि थे और सनकादि के मानसिक पुत्र सनाढय ब्राह्मण हुए)। भृगुनन्द परशुराम ने उन्हें उत्तम ब्राह्मण समझ कर पैर पखारे और ७२ गाँव दिये। जग-पावन वैकुंठपति श्री रामचन्द जी ने मथुरा मण्डल में उन्हें ७०० गाँव प्रदान किये। फिर सोमवश के यदुकुल-श्रेष्ठ तथा त्रिभुवन पालक श्री कृष्ण महाराज ने भी कलियुग मे उन्हें वही (मथुरा

मण्डल) देशप्रदान किया। उनके वश के उद्देसकुल में कु भवार उत्पन्न हुए। उनके पुत्र-अपने वश की शोभा-देवानन्द हुए। उनके पुत्र जयदेव और जयदेव के पुत्र पडितराज दिनकर हुए। उनपर दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन बडी कृपा रखता था। उन्होंने गया समेत अनेक तीर्थों की यात्रा बहुत बार की थी। उनके पुत्र आनन्दकद तथा गदाधर हुए और उनके पुत्र जयानन्द हुए जो विद्वान और जगत्प्रतिष्ठित थे। उनके पुत्र पडितराज त्रिविक्रम मिश्र हुए जिनके पैरो की पूजा गोपाचल किले के राजा ने की थी। उनके पुत्र भावशर्मा हुए जो बड़े बुद्धिमान थे। भावशर्मा के पुत्र शिरोमणि मिश्र हुए जो षट् दर्शनो के मानों अवतार ही थे। मानसिह पर क्रोध प्रकट करके उन्होंने चारो दिशाओ को जीता और राणा ने उनके पैर धोकर बीस गाँव प्रदान किये। उनको भगवान् ने जगत्-प्रसिद्ध हरिनाथ पुत्र दिया, जिन्होंने तोमरपति के छोड़ और किसी के आगे भूलकर भी हाथ नहीं फैलाया। हरिनाथ के शुभ वेसवाले कृष्णदत्त हुए जिनको राजा रुद्रने पुराण की वृत्ति प्रदान की। उनके पुत्र बुद्धि के समुद्र काशीनाथ हुए जिनका राजा मधुकरशाह ने बडा सम्मान किया और बालक पन से ही मधुकरशाह ने उनसे पुराणों को सुना। उनके दो भाई और हुए जिनके नाम केशवदास और कल्याणदास थे। जिसके कुल में (सस्कृत को छोड़) लोग भाषा को बोलना तक न जानते थे उसी कुल में भाषा-कवि मदमति केशवदास उत्पन्न हुआ। उससे जब इन्द्रजीत ने, प्रयाग न कुछ मागने के लिए कहा तब उसने कहा कि 'आप इसीप्रकार सदा कृपा करते रहिए'। इसी प्रकार बीरबल ने भी कहा था 'कि तुम्हारे मन में जो कुछ हो माग लो'। तब यही मागा था कि 'आपके दरबार में मुझे कोई न रोके। उसको इन्द्रजीत ने अपना गुरू समझकर सदा तन मन से कृपा की और उसके पैर धोकर इक्कीस गाँव प्रदान किये। उन्हीं इन्द्रजीत के हितू राजा रामशाह जी ने केशवदास को अपना मत्री तथा मित्र समझकर आदर किया।

तीसरा प्रभाव

[काव्य-दूषण]

दो० । समुझैं बाला बलकन, बर्णन पन्थ अगाध ।
कविप्रिया केशव करी छमियहु कवि अपराध ॥१॥

केशवदास कहते हैं कि मैंने इस कविप्रिया पुस्तक को इसलिए लिखा है कि जिससे कविता के अगाध रहस्य को स्त्री तथा बालक भी समझ सकें, अतः कविगण मेरा अपराध क्षमा करें ।

अलंकार कवितान के, सुनिगुनि विविध विचार ।
कविप्रिया केशव करी कविता को शृंगार ॥२॥

कविता के अलकारादि विविध गुणों को विचारपूर्वक सुनने और समझने के बाद 'केशव' ने, कविता की शोभा इस कविप्रिया को लिखा है ।

सगुन पदारथ अरथयुत, सुबरन मय, शुभ साज ।
कंठमाल ज्यों कविप्रिया, कंठ करहु कविराज ॥३॥

हे कविराज ! इस 'कविप्रिया' को गले के हार के समान गले में पहन लो (कंठस्थ करलो) । इसमें काव्य के गुण (ओज, प्रसाद, माधुर्य) का डोरा है । काव्यार्थ ही इसके पदार्थ (मणि-माणिक्य-रत्नादि) हैं और सुन्दर अक्षर ही इसके सोने के गुरियाँ हैं और यह भली भाँति सजाया गया है ।

चरण धरत चिंता करत, नींद न भावत शोर ।
सुबरण को सोधत फिरत, कवि, व्यभिचारी, चोर ॥४॥

कवि, व्यभिचारी और चोर सदा सुबरण (सुँदर अक्षर, सुन्दर रंग, और सोना) ढूंढते रहते हैं । कवि, छन्द का एक एक चरण

रचते समय अच्छी तरह सोचता-विचारता है। उसे न नींद अच्छी लगती है और न कोलाहल सुहाता है। वह सुन्दर अक्षर खोजता है। व्यभिचारी, एक एक चरण (पैर) सोच-समझ कर रखता है। उसको (दूसरो की) नींद (निद्रा) तो अच्छी लगती है परन्तु कोलाहल अच्छा नहीं लगता। वह सुन्दर रंग की नायिका खोजता है। चोर भी एक-एक चरण (पैर) रखते समय सोचता-विचरता है (संभल कर पैर रखता है कि कहीं कोई आहट न सुन ले) और उसे भी दूसरों को नींद (निद्रा) अच्छी लगती है और कोलाहल नहीं सुहाता। वह सोना ढूंढता रहता है।

राजत रंच न दोष युत कविता, बनिता मित्र।
बुंदक हाला परत ज्यों, गंगा घट अपवित्र ॥५॥

कविता, स्त्री तथा मित्र में थोड़ा सा भी दोष हो तो वे इस प्रकार अच्छे नहीं लगते जिस प्रकार मदिरा की एक बूंद के पड़ते ही गंगा जल का भरा हुआ पूरा घड़ा अपवित्र हो जाता है।

विप्र न नेगी कीजइ, मुग्ध न कीजै मित्त।
प्रभु न कृतघ्नी सेइये, दूषणसहित कवित्त ॥६॥

ब्राह्मण को नेगी (अधिकारी) और मूर्ख को मित्र, न बनाना चाहिए। कृतघ्न स्वामी की सेवा न करनी चाहिए तथा दोष युक्त कविता नहीं रचनी चाहिए।

दोषों के नाम और लक्षण

अन्ध, बधिर अरु पंगु तजि, नगन, मृतक मतिशुद्ध।
अन्ध विरोधी पन्थ को, बधिर जो शब्दविरुद्ध ॥७॥

हे मतिशुद्ध (शुद्ध बुद्धि वाले) तुम 'अन्ध,' 'बधिर,' 'पंगु,' 'नग्न,' तथा मृतक (इन पाँच दोषों) को छोड़ दो। कविता के पन्थ का विरोधी 'अन्ध' दोष है अर्थात् कविता की बंधी हुई प्राचीन परम्पराओं से हटना अन्ध दोष कहलाता है। विरुद्ध (परस्पर विरोधी) शब्दों का प्रयोग 'बधिर' दोष है।

छन्द विरोधी पंगु गुनि, नगन जो भूषण हीन।
मृतक कहावै अरथ बिन, केशव सुनहु प्रवीन ॥८॥

'केशव' कहते हैं कि हे प्रवीणराय सुनो। छन्द-शास्त्र के विरुद्ध रचना 'पंगु' तथा भूषण-हीन (अलंकार-रहित) 'नग्न' और अर्थ रहित मृतक कहलाती है।

उदाहरण

(१) पथविरोधी 'अन्ध' दोष।

सवैया

कोमलकंजसे फूल रहे कुच, देखतही पति चन्द विमोहै।
बानर से चल चारु विलोचन कोये रचे रुचि रोचन कोहै॥
माखन सो मधुरो अधरामृत, केशव को उपमाकहुँ टोहै।
ठाढी है कामिनी दामिनी सी, मृगभामिनिसी गजगामिनिसोहै॥९॥

कोमल-कंज जैसे कुच फूल रहे हैं जिन्हें देख कर पति रूपी चन्द्र मोहित होता है। बन्दर जैसे चंचलनेत्र है और उन नेत्रों के कोए रोरी जैसे लाल हैं। अधरामृत मक्खन सा है। बिजली जैसी गजगामिनी नायिका मृगभामिनी (हिरनी) जैसी खड़ी है।

[इसमें कुचो का वर्णन करते हुए उन्हें कमल के समान कहा गया है जो कवि परम्परा के विरुद्ध है अतः पथविरोधी अन्ध दोष है। कमल के साथ पति को चन्द्र कहना भी पथविरोध है क्योंकि कमल और चन्द्रमा का परस्पर विरोध है। इसी प्रकार नेत्रों को बन्दर के नेत्रों की उपमा तथा कोयों को रोरी जैसा लाल कहना भी पंथ-विरुद्ध दोष है। ओंठों को मक्खन जैसा बतलाना कवि परम्परा के विरोधी है, क्योंकि ओंठों को मक्खन जैसा श्वेत और कोमल होना भद्दा समझा जाता है। 'गजगामिनी स्त्री मृग-भामिनी (मृगी) जैसी खड़ी है' इस वाक्य में भी पथविरोध है]

से) कहते हैं कि मैं तुम्हारी सभी चूक सहलूँगी परन्तु तुम जो मेरे मुख को चूमकर चल दिये, यह मैं सहन न करूँगी। अतः या तो मुझे फिर अपना मुख चूमने दो, नहीं तो मैं अपनी धाय से जाकर कह दूँगी।

[इस छन्द में कोई भी चमत्कारपूर्ण अलकार नहीं है अतः नग्न दोष है]

(५) अर्थहीन मृतक दोष।

सवैया

काल कमाल करील करालनि शालनि चालनि चाल चली है।
हाल बिहालन ताल तमाल, प्रबालक वालक बाललली है॥
लोल बिलोल कपोल अमोलक, बोलक मोलक कोलकली है।
बोल निचोल कपोलनि टोलति, गाल निगोलक लोल गली है ॥१४॥

[इस छन्द मे सभी शब्द अर्थ शून्य हैं, अतः इसमें अर्थहीन 'मृतक' दोष है।]

कुछ अन्य दोष

दोहा

अगन न कीजै हीनरस, अरु केशव यतिभग।
व्यर्थ अपारथ हीन क्रम कबि कुल तजौ प्रसग ॥१५॥

'केशवदास' कहते हैं कि हे कवियों ! तुम 'अगण' 'हीनरस' 'यतिभग' 'व्यर्थ,' 'अपार्थ', और 'हीन क्रम' दोषों के प्रयोगों को छोड़ दो।

वर्ण प्रयोग न कर्णकटु, सुनहु सकल कविराज।
शब्द अर्थ पुनरुक्तिके, छोड्हु सिगरे साज। १६॥

सब कविराज सुनो ! कर्णकटु (कानो को अप्रिय लगने वाले) वर्णों का प्रयोग न करो तथा शब्द तथा अर्थ की पुनरुक्ति को भी छोड़ दो।

देशविरोध न वरणिये, कालविरोध निहारि।
लोक न्याय आगमन के, तजौ विरोध विचारि ॥१७॥

'देशविरोध', 'काल विरोध', 'लोकविरोध', न्याय और आगम (शास्त्र) के विरोधों को भी विचारपूर्वक छोड़ दो।

(१) गनागनफल वर्णन।

केशव गन शुभ सर्वदा, अगन अशुभ उरआनि
चारिचारि विधि चारु मति, गन अरु अगन बखानि ॥१८॥

'केशवदास' कहते हैं कि गण (सुगण) सर्वदा शुभ माने जाते हैं और 'अगण' (कुगण) क सदा अशुभ समझना चाहिए। बुद्धिमानों ने 'गण' और 'अगण' को चार-चार तरह का बतलया है।

गनागन नाम वर्णन

मगन, नगन, पुनि भगन, अरु यगन, सदा शुभ जानि।
जगन रगन अरु सगन पुनि, तगनहि अशुभ बखानि ॥१९॥

'मगण', 'नगण', 'भगण' और 'यगण' इन्हें सदा शुभ समझा जाता है अर 'जगण', 'रगण', 'सगण', तथा 'तगण' को अशुभ माना गया है।

गनागनरूप वर्णन।

मगन त्रिगुरुयुत त्रिलघुमय केशव नगन प्रमान।
भगन आदिगुरु आदिलघु, यगन बखानि सुजान ॥२०॥

'केशवदास' कहते हैं कि तीनो गुरु अक्षरों से युक्त 'मगण' और तीनो लघु अक्षरों वाला 'नगण' कहलाता है। जिसके आदि में गुरु होता है उसे 'भगण' तथा जिसके आदि में लघु होता है उसे 'यगण' कहते हैं।

जगन मध्यगुरु जानिये, रगन मध्यलघु होइ।
सगन अंतगुरु अंतलघु, तगन कहत सब कोइ ॥२१॥

जिसके मध्य में गुरु हो उसे 'जगण' और जिसके मध्य में लघु हो उसे 'रगण' समझिए। इसी प्रकार जिसके अंत में गुरु होता है उसे 'सगण' और जिसके अंत में लघु होता है उसे 'तगण' कहते हैं।

आठौं गन के देवता अरु गुन दोष विचार।
छंदोग्रथनि में कह्यो, तिनको बहु विस्तार ॥२२॥

इन आठों गणों के देवता तथा गुण-दोषों का भी छन्द-ग्रन्थों में विचारपूर्वक वर्णन किया गया है। उनका बड़ा विस्तार है।

गण देवता वर्णन।

मही देवता मगन को, नाग नगन को देखि।
जल जिय जानहु यगन को, चंद भगन को लेखि ॥२३॥

'मगण' का देवता पृथ्वी, 'नगण' का शेषनाग, 'यगण' का जल और 'भगण' का चन्द्र समझो।

सूरज जानहु जगन को, रगन शिखीमय मान।
वायु समुझिये सगनको, तगन अकाश बखान ॥२४॥

'जगण' का देवता सूर्य और 'रगण' का अग्नि जानो। इसीप्रकार 'सगण' का वायु तथा 'तगण' का आकाश समझो।

गण मित्रामित्र वर्णन।

मगन नगन को मित्रगनि, यगन भगन को दास।
उदासीन ज त जानिये, र स रिपु केशवदास ॥२५॥

'केशवदास' कहते हैं कि 'मगण' और 'नगण' का नाम मित्र समझो तथा 'यगण' और 'भगण' की दास संज्ञा मानो। इसी तरह 'जगण' और 'तगण' की संज्ञा उदासीन तथा 'रगण' और 'सगण' की शत्रु जानो।

गण देवता तथा फल वर्णन

छप्पय

भूम भूरि सुख देय, नीर नित आनँदकारी।
आगि अंग दिन दहै, सूर सुख सोखै भारी।
केशव [illegible] अकाश, वायु कित देश उदासै।
मंग [illegible] अ[illegible]ग बहु बुद्धि प्रकासै ॥

यहिविधि-कवित्त फल जानिये कर्ता अरु जा हित करै।
तजि तजि प्रबन्ध सब दोष गन, सदा शुभाशुभ फल धरै ॥२६॥

'पृथ्वी' अत्यन्त सुख देती है और 'जल' सदा आनन्द कारी होता है। 'अग्नि' प्रतिदिन अंग को जलाती है और 'सूर्य' सुख को सुखा डालता है अर्थात् दुखदायी होता है। केशवदास कहते हैं कि 'आकाश' निष्फल होता है तथा 'वायु' देश से उच्चाटन कर देता है। 'चन्द्र' अनेक मंगलों को देनेवाला और 'नाग' बुद्धि को बढ़ाने वाला है। इस तरह कविता के शुभाशुभ फलों को जानना चाहिए। ये फलाफल कविता करनेवाले तथा जिसके लिए कविता की जाय दोनों के लिए हैं अतः अपनी रचना में सभी दोषों को छोड़ते हुए शुभाशुभ फलों पर सदा विचार कर लेना चाहिए।

द्विगण वर्णन

जो कहुँ आदि कवित्त के, अगन होइ बड भाग।
तातें द्विगत विचार चित, कीन्हों वासुकिनाग ॥२७॥

हे बड़भागि ! यदि कहीं कवित्त के आरम्भ में 'अगण' आ ही पड़े तो उसके निवारण के लिए वासुकि नाग ने विचार कर 'द्विगण' का नियम बनाया है।

कवित्त

मित्र तें जु होइ मित्र, बाढ़ै बहु रिद्धि-सिद्धि
मित्र तें जु दास आस युद्ध मे न जानिये।
मित्र तें उदास गन होत, गात दुख देत
मित्र तें जु शत्रु होइ मित्र बन्धु हानिये ॥
दास तें जु मित्र गन काज सिद्ध केशौदास,
दास तें जु दास बस जीव सब मानिये।
दास तें उदास होत धन नास आस-पास,
दास तें जु शत्रु मित्र शत्रु सो बखानिये ॥२८॥

मित्र गण के साथ यदि मित्र गण हों तो ऋद्धि-सिद्ध बढ़ती हैं। 'मित्र गण' के साथ 'दास गण' होने पर युद्ध में त्रास नहीं होता (हारना नहीं पड़ता)। मित्र गण के साथ उदासीन गण आवैं तो गोत्र या कुटुम्ब को दुख देते हैं और जो मित्र गण तथा शत्रु गण साथ हों तो बन्धु-हानि होती है। 'केशवदास' कहते हैं कि यदि दास गण और मित्र गण साथ पड़े तो कार्य सिद्ध होता है और जो दास गण साथ-साथ पड़ें तो सभी जीवों को वश में कर लेते हैं। यदि 'दास गण' और 'उदासीन गण' साथ-साथ हों तो आस-पास धन का नाश होता है तथा 'दास गण' और शत्रु गण के एक साथ होने पर मित्र भी शत्रु जैसा हो जाता है।

कवित्त

जानिये उदास तें जु मित्र गन तुच्छ फल,
प्रगट उदास तें जु दास प्रभुताइये।
होइ जो उदास तें उदास तो न फलाफल,
जो उदास हीं तें शत्रु तो न सुख पाइये॥
शत्रु तें जु मित्रगन ताहि सो अफलगन,
शत्रु तें जु दास आशु वनिता नसाइये।
शत्रु तें उदास कुल नाश होय केशौदास
शत्रु तें जु शत्रु नाश नायक को गाइये॥२६॥

यदि 'उदासीन गण' और 'मित्रगण' साथ हों तो तुच्छ फल समझो। 'उदासीनगण' और 'दास गण' के मेल से प्रभुता प्राप्त होती है। यदि उदासीनगण साथ-साथ हों तो फलाफल कुछ नहीं होता और जो उदासीनगण तथा 'शत्रु गण' का साथ हो तो सुख नहीं मिलता। जो 'शत्रु गण और 'मित्रगण एक साथ हों तो विफल होते है और यदि शत्रु गण का 'दास गण के साथ मेल हुआ तो शीघ्र ही स्त्री का नाश हो जाता है। 'केशवदास' कहते हैं कि 'शत्रु गण' और 'उदासीन

गण के साथ से कुल का नाश और 'शत्रु गण' के साथ 'शत्रु गण' पड़ने पर नायक का नाश हो जाता है।

गणागण के उदाहरण।

दोहा

राधा राधारमन के, मन पठयो है साथ।
ऊधव ह्या तुम कोनसो, कहो योगकी गाथ ॥३०॥
कहा कहौं तुम पाहुने प्राणनाथ के मित्त।
फिर पीछे पछिताहुगे, ऊधौ समुझौ चित्त ॥३१॥
दोहा दुहूं उदाहरन, आठौ आठौ पाय।
केशव गन अरु अगनके, समुझौ सबै बनाय ॥३२॥

हे उद्धव ! राधा ने अपना मन राधा-रमण (श्रीकृष्ण) के साथ भेज दिया है अतः तुम यहाँ किससे योग की बात कहते हो। हे उद्धव क्या कहूँ ! तुम पाहुने हो और प्राणनाथ (श्रीकृष्ण) के मित्र हो। अपने हृदय में विचार करो नहीं तो फिर पीछे पछताओगे। 'केशवदास' कहते हैं कि इन दोनों दोहों के आठ चरण गण और अगण के उदाहरण हैं, इन्हें अच्छी तरह समझ लो।

इन दोहों में जो गणागण का मेल दिखलाया गया है, वह इस प्रकार है:—

(१) राधारा धारम = मगण + भगण (मित्र और दास)
(२) मनप ठयो है = नगण + यगण (दास और मित्र)
(३) ऊद्धव ह्यातुम = भगण + भगण (दास और दास)
(४) कहो यो गकीगा = यगण + यगण (दास और दास)
ये शुभ गण हैं
(५) कहाक हौं तुम = जगण + भगण (उदासीन और दास)
(६) प्राणना थकेमि = रगण + यगण (शत्रु और दास)
(७) फिरिपीछेपछि = सगण + भगण (शत्रु और दास)
(८) ऊधौस मु झौ चि = तगण + यगण (उदासीन और दास)

ये अशुभ गण है।

कवित्त सख्या २८ और २६ के अनुसार पहले और दूसरे उदाहरण का फल विजय होगा क्योंकि मित्र गण और दास गण साथ साथ पड़े हैं। तीसरे और चौथे उदाहरण में दास गणों का मेल हुआ है अतः परिणाम सर्वजीवों को वश में करनेवाला होना चाहिए। पाँचवें उदाहरण में उदासीन और दासगणों का साथ है, इसलिये परिणाम प्रभुता प्राप्ति होगा। छठें और सातवें उदाहरण में शत्रु और दास गण साथ साथ आ पड़े हैं इसलिए इसका परिणाम वनितानाश होना चाहिए। आठवें उदाहरण में उदासीन और दास गणों का मेल है, अतः परिणाम प्रभुता-प्राप्ति होना चाहिए।

छठे और आठवें उदाहरण में 'मि' 'चि' ह्रस्व होते हुए भी दीर्घ माने गये हैं क्योंकि पिंगलशास्त्र के अनुसार सयुक्त अक्षर के पहले का अक्षर दीर्घ माना जाता है। 'केशवदास' जी भी नीचे लिखे दोहे में यही बात कहते हैं:—

गुरु-लघुभेद वर्णन

संयोगी के आदि युत, बिंदु जु दीरघ होय।
सोई गुरु लघु और सब, कहैं सयाने लोय ॥३३॥

सयाने (चतुर या बुद्धिमान) लोग कहते हैं कि सयुक्ताक्षर के पहलेवाला अक्षर, बिंदु (अनुस्वार) युक्त तथा स्वय दीर्घ अक्षर ही गुरु कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त और सभी 'अक्षर लघु' हैं।

दीरघहू लघु कै पढ़ै सुखहो मुख जिहि ठौर।
सोऊ लघु करि लेखिये, केशव कवि सिरमौर ॥३४॥

'केशवदास' कहते हैं कि हे कवि शिरोमणि! जहाँ दीर्घ अक्षर को लघु करके पढने में मुख को सुविधा होती हो, वहाँ उसे भी लघु ही समझना चाहिए।

उदाहरण

सवैया

पहिले सुखदै सबही को सखी, हरिही हितकै जुहरी मति मीठी।
दूजे लै जीवनमूरि अकूर, गयो अँग अंग लगाय अँगीठी॥
अबधौं केहिकारण ऊधव ये, उठिधाये लै केशव झूँठी बसीठी।
माथुर लोगनिके सँगकी यह बैठक तोहि अजौं न उबीठी॥३५॥

हे सखी। पहले तो हरि (श्री कृष्ण) ने सबको सुख दिया और प्रेम करके सुबुद्धि हर ली। फिर अक्रूर आकर उन जीवनमूरि (श्री कृष्ण) को ले गये और इस तरह मानो उन्होंने अग-अग में अगीठी लगा दी (जलन उत्पन्न कर दी-दुख दे दिया)। 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते हैं कि अब यह ऊधव झूठा सदेश लेकर क्यों आये हैं? मथुरा के लोगों के साथ का उठना-बैठना तुझे अब भी अरुचिकर नहीं हुआ?

(इस सवैया के पहले चरण में 'को' को दीर्घ लिखा गया है परन्तु उसका उच्चारण ह्रस्व की तरह होता है। इसी तरह दूसरे चरण में 'जे' और' 'लै' अक्षर ह्रस्व की तरह पढ़े जाते हैं। तीसरे चरण में 'ये' और 'ल' का उच्चारण भी ह्रस्व ही होता है।)

संयोगी के आदि युत, कबहुँक बरन विचारु।
केशवदास प्रकासबल, लघुकरि ताहि निहारु॥३६॥

केशवदास कहते हैं कि सयुक्तअक्षर के आदि के अक्षर को भी कभी-कभी अपनी बुद्धि के बल से 'लघु' ही समझना चाहिए। अर्थात् कभी-कभी संयुक्ताक्षर के पहले का अक्षर भी लघु माना जा सकता है)

उदाहरण

दोहा

अमल जुन्हाई चन्दमुखि, ठाढ़ी भई अन्हाय।
सौतिनिके मुखकमल ज्यौं, देखि गये कुम्हिलाय॥३७॥

चन्दमुखी जब स्नान करके खड़ी हुई तब उसकी चन्द्रमुख की निर्मल चाँदनी को देख कर सपत्नियों के मुखकमल मुर्भा गये।

[इस दोहे में 'जुन्हाई' तथा 'अन्हाय' शब्दों के 'जु' तथा 'अ' अक्षर स युक्ताक्षर के पहले होने के कारण दीर्घ माने जाने चाहिए परन्तु यहाँ वे 'लघु' ही हैं।]

(२) हीनरस दोष

दोहा

बरनत केशवदास रस, जहाँ विरस ह्वै जाय।
ना कवित्तको हीनरस, कहत सकल कविराय ॥३८॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ किसी रस का वर्णन करते करते विरस हो जाय अर्थात् उसका पूर्ण परिपाक न हो तो उस कवित्त को सभी कविराज 'हीन रस' कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

दै दधि दीन्हों उधार हे केशव दान कहा जब मोललै खैहैं।
दीन्हें बिना तौ गई जु गई न गई न गई घरही फिरि जैहैं॥
गो हित बैर किया, कबहो हित, बैर किये बरु नीके ह्वै रैहे।
बैरकै गोरस पेचहुगी अहो बेंचो न बेंचो तो ढारि न देहें। ९॥

(केशवदास जी एक गोपी और श्री कृष्ण का उत्तर-प्रत्युत्तर वर्णन करते हुए लिखते हैं कि) श्रीकृष्ण ने जब कहा कि 'दही दो, तब गोपी ने उत्तर दिया कि मैं तो उधार दे चुकी (अर्थात् उधार न दूँगी, मोल लो)। तब श्रीकृष्ण बोले कि हम दान लेने वाले कैसे, जो मोल लेकर खायें। और 'दान दिये बिना तो तुम जा चुकीं।' गोपी ने उत्तर दिया कि—'बिना दान दिए मैं जाऊँ या न जाऊँ, कोई चिन्ता नहीं, यदि न गई तो घर ही को लौट जाऊँगी।' तब श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया कि 'तुमने मानो इस के लिए बैर किया।' वह बोली, मेरा तुम्हारा प्रेम ही कब था? मैं तो तुमसे बैर करके ही सुखी

रहूँगी'। इस पर श्रीकृष्ण बोले कि 'तो बैर करके गोरस बेचोगी ? तब गोपी ने उत्तर दिया कि 'यदि न बेच पाऊंगी तो फेंक न दूंगी। अर्थात् न बेच सकूँगी तो अपने काम में लाऊंगी, तुम्हें न दूँगी। [इस उदाहरण में शृंगार रस का आभास होने पर भी उ पूर्ण परिपाक नहीं हुआ है। केवल मनोरंजक वार्तालाप मात्र है। अनुभाव तथा सचारी भाव कहीं दृष्टिगोचर नहीं होते, अतः इसमें हीन-रस दोष है।]

(३) यति-भंग दोष

और चरण के बरण जहँ और चरण मों लीन।
सो यतिभंग कवित्त कहि केशवदास प्रवीन ॥४०॥

जहाँ किसी एक चरण के अक्षर कटकर दूसरे चरण में चले जाय वहाँ 'केशवदास' उसे यतिभंग पूर्ण कवित्त कहत हैं अथवा 'केशवदास' कहते हैं कि हे प्रवीनराय। वह यति-भंग पूर्ण कवित्त कहलाता है-।

उदाहरण

दोहा

हर हरि केशव मदन मो, हन घनश्याम सुजान।
यों ब्रजवासी द्वारका, नाथ रटत दिनमान ॥४१॥

ब्रजवासी गण दिन-रात हर-हरि' 'केशव,' 'मदनमोहन,' 'घन-श्याम,' 'सुजान' और 'द्वारिकानाथ' रटा करते हैं। (इसमें मदनमोहन' का 'मदनमो' एक ओर आगया है और 'हन' दूसरी ओर चला गया है। इसी तरह 'द्वारकानाथ' के भी दो भाग हो गये हैं। 'द्वारका' एक हो गया है और 'नाथ दूसरी ओर। अतः यति-भंग दोष है)

(४) व्यर्थ दोष

एक कवित्त प्रबन्ध में अर्थ विरोध जु होय।
पूरब पर अनमिल सदा व्यर्थ कहैं सब कोय ॥४२॥

जब एक ही कवित्त में अर्थ विरोध हो और पूर्वा पर अनमिल हो अर्थात् पूर्वापर ठीक-ठीक बैठता न हो, तब सब लोग उसे व्यर्थ दोष कहते हैं।

उदाहरण
मरहट्टा छन्द

सब शत्रु सँहारहु जीव न मारहु, सजि योधा उमराव।
बहुबसुमतिलीजै मो मति, कीजै लीजै अपनो दाँव॥
कोउ न रिपु तेरो सब जग हेरो तुम कहियतु अतिसाधु।
कछु देहु मँगावहु भूख भगावहु हो पुनि धनी अगाधु॥४३॥

समस्त योधा उमराव सज कर शत्रुओं को मारो, तथा जीव न मारो, मेरी राय मानो, बहुतों की सम्मति लो। (शत्रु) से अपना दाँव लो। तुम्हारा कोई वैरी नहीं है। सब ससार देख डाला-तुम बड़े साधु कहलाते हो। कुछ मुझे मँगवा दो, मेरी भूख दूर कर दो, क्योंकि तुम अगाध धनी हो।

[इस छन्द में सभी बातें परस्पर विरोधी हैं। पहले कहा गया है कि 'शत्रु सहारो फिर कहा गया है कि 'जीव न मारो'। ये दोनों परस्पर विरोधी हैं। इसीतरह 'लीजै अपनो दाँव' कहने के बाद 'कोउ न रिपु तेरो' कहना विरोध है। 'अगाव धनी से 'कुछ मांगना' भी विरोध है, उससे बहुत माँगना चाहिए। अतः व्यर्थ दोष है।]

अपार्थ दोष

अर्थ न जाको समुझिये, ताहि अपारथ जानु।
मतवारो उनमत्त शिशु, केसे वचन बखानु॥४४॥

जिसका अर्थ न समझ सकों, उसे 'अपार्थ दोष' जानो और उसे मतवाले, उनमत्त और बच्चों जैसी बातें समझो।

उदाहरण
दोहा

पियेलेत नर सिंधु कहँ, है अति सज्वर देह।
ऐरावत हरि भावतो, देख्यो गर्जत मेह॥४५॥

इस दोहे की सभी बातें अटपटी है। अर्थ की सगति कहीं भी नहीं मिलती, अतः इसमें 'अपार्थ दोष है।

(६) क्रमहीन दोष

क्रमहीं गुणनि वखानिके, गुणी गुनै क्रम हीन ।
सो कहिये क्रमहीन जग, केशव कहत प्रवीन ॥४६॥

जब कुछ गुणों का क्रम से वर्णन करके फिर गुणियों का नाम गिनाते समय क्रम भंग हो जाय, तब उसे 'क्रमहीन' दोष कहते हैं।

उदाहरण

तोटक छन्द

जगकी रचना कहु कौने करी केहि राखन की जिय पैज घरी ।
अति कोपकै कौन सँहार करै। हरजू हरिजू विधि बुद्धि रटै ॥४७॥

संसार की रचना किसने की? किसने संसार की रक्षा करने का प्रतिज्ञा की? अत्यन्त क्रुद्ध होकर कौन संहार करता है? बतलाओ। उत्तर में, बुद्धि हर, हरि और ब्रह्मा का नाम रटती है।

[इस छन्द में पहले तो ब्रह्मा, विष्णु और महेश के गुणों का क्रम से वर्णन किया गया है, परन्तु बाद में, उनके नाम गिनाते समय क्रम में उलट फेर कर दिया गया है, अतः 'क्रमहीन' दोष है। वास्तव मे विधिजू, हरिजू, हरजू होना चाहिए। यही क्रम ऊपर गिनाये हुए गुणों के क्रम से मिलता है]

(७) कर्णकटु प्रयोग

दोहा

कहत न नीको लागई, सो कहिये कटुकर्ण ।
केशव दास कवित्त में, भूलि न ताको वर्ण ॥४८॥

जो कहने सुनने मे अच्छा न लगे उसे 'कर्णकटु दोष कहते हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि इस दोष को भूल कर भी कवित्त में न लाओ।

उदाहरण

दोहा

वारन वन्यो बनाव तन, सुवरण वली विशाल ।
चढ़िये राज मँगाइकै, मानहुँ राजत काल ॥४९॥

हे राजन्। जिस हाथी के शरीर की सुन्दर सजावट है, जो सुन्दर सुन्दर रंग वाला, बलवान तथा बड़ा है और जो मानो काल के समान सुशोभित है, उसे मंगाकर सवार हूजिए। (इस दोहे में 'मानहुँराजत काल' वाक्य सुनने में अप्रिय लगता है अतः कर्णकटु दोष है)

(८) पुनरुक्ति दोष

दोहा

एकबार कहिये कछू बहुरि जो कहिये सोइ।
अर्थ होय कै शब्द अब, सु न पुनरुक्ति सो होइ ॥५०॥

जब एक बार कुछ कहने के बाद फिर उसी बात को कहा जाता है, तब 'पुनरुक्ति' दोष होता है, वह चाहे शब्द में हो या अर्थ में।

उदाहरण

सोरठा

मघवा घन आरूढ इन्द्र आजु अति सोहिये।
ब्रजपर कोप्यौ मूढ, मेघ दशौं दिशि देखिये ॥५१॥

मघवा इन्द्र घन (बादलों) पर सवार है। इन्द्र आज बहुत अच्छा लगता है। वह मूढ़ ब्रजपर कुपित हुआ है। दशो दिशाओं मे मेघ दिखलाई पड़ते हैं। [इस दोहे में 'मघवा', 'इन्द्र' तथा 'घन' और 'मेघ' शब्दो मे अर्थ की पुनरुक्ति है]

दोष निवारण

दोहा

दोष नहीं पुनरुक्ति को ऐक कहत कविराज।
छांडि अर्थ पुनरुक्ति को शब्द कहौ यहि साज। ५२॥

एक कविराज कहते हैं कि यदि अर्थ की पुनरुक्ति को छोड़ कर शब्द की पुनरुक्ति करो तो कोई दोष नहीं होता।

उदाहरण

लोचन पैने शरनते है कछु तोकहँ सुद्धि।
तन बेध्यो, मन बेधिकै बेधी मनकी बुद्धि ॥५३॥

तुझे कुछ ध्यान भी है। उसके नेत्र बाणों से भी बढ़कर तीक्ष्ण हैं। उन्होंने शरीर वेध डाला, मन वेध डाला और मन की बुद्धि विवेकशक्ति भी वेध डाली।

(इसमें 'वेधना' क्रिया तीन बार भिन्न-भिन्न संज्ञाओं के साथ प्रयुक्त हुई हैं, अतः पुनरुक्ति दोष नहीं है)

देश–विरोध दोष

मलयानिल मन हरत हठ, सुखद नर्मदा कूल।
सुबन सघन घनसार मय तरुवर तरल सुफूल ॥५४॥

नर्मदा का किनारा सुखदायी है। वहाँ मलयानिल हठपूर्वक मन को हर लेता है। वहीं सुन्दर घने कपूर के वन तथा सुन्दर फूलोंवाले वृक्ष हैं। (इसमें नर्मदा नदी के किनारे मलयानिल और कपूर का वर्णन करना देश-विरुद्ध है।)

मरुसुदेश मोहन महा, देखौ सकल सभाग।
अमलकमलकुलकलितजहँ, पूरण सलिल तडाग ॥५५॥

सभी भाग्यशालियो देखो! मरुदेश बड़ा ही सुन्दर और मन को हरनेवाला है, जहाँ पानी से भरे हुए तालाबों में निर्मल कमल खिले हुए हैं। (इसमें भी मरुभूमि के जल से भरे हुए तालाबों में कमलों का वर्णन करना देश-विरुद्ध है क्योंकि मरुभूमि में तालाबों का अभाव होता है।)

काल विरोधी दोष

प्रफुलित नव नीरज रजनि, वासर कुमुद विशाल।
कोकिल शरद मयूर मधु वर्षा मुदित मराल ॥५६॥

रात में नवीन कमल और दिन में विशाल कुमुद पुष्प खिले हैं। शरद ऋतु में कोयल, वसन्त में मोर और वर्षा में हंस प्रसन्न होते हैं। (इसमें रात को कमल, दिन में कुमुदिनी, शरद ऋतु में कोयल, वसन्त में मोर और वर्षा में हंसों का वर्णन करना काल-विरुद्ध है)

लोक-विरोधी दोष

स्थायी वीर सिगार के, करुणा घृणा प्रमान।
तारा अरु मन्दोदरी कहत सतीन समान।५७॥

वीर और शृंगार के स्थायी के साथ करुणा तथा घृणा का वर्णन करना और तारा तथा मन्दोदरी को सती स्त्रियो के समान कहना लोक-विरुद्ध है।

न्याय तथा आगमविरोधी दोष।

पूजौ तीनौ वर्ण जग, करि विप्रन सो भेद।
पुनि लीबो उपवीत हम, पढि लीजै सब वेद ॥५८॥

ब्राह्मणों को छोड़कर तीनों वर्णों की पूजा करो। हम पहले वेद पढलें तब यज्ञोपवीत लेंगे। [इन दोनो वाक्यों में पहले वाक्य में नीति-विरोध है और दूसरे में आगम या शास्त्र-विरोध है]

यहि विधि औरौ जानियहु कविकुल सकल विरोध।
केशव कहे कछूक अब, मूढन के अविरोध॥५९॥

हे कवि लोगो! इस तरह विरोधों के और भी बहुत से भेद समझ लो। 'केशवदास' कहते हैं कि मैंने उनमें से कुछ ही ऐसे भेदों का वर्णन किया है जिनका मूढ़ भी विरोध न करेंगे।

केशव नीरस विरस अरु, दुःसंधान विधानु।
पातर दुष्टादिकन को, 'रसिक प्रिया' ते जानु॥६०॥

'केशवदास' कहते हैं कि 'नीरस', 'विरस' 'दुःसन्धान' और 'पात्र दुष्ट' आदि दोषों को 'रसिक प्रिया' ग्रन्थ से समझ लो।

चौथा-प्रभाव

कवि-भेद वर्णन

दोहा

केशव तीनहु लोक में, त्रिविध कविन के राय।
मति पुनि तीन प्रकार की बरनत सब सुख पाय ॥१॥
उत्तम मध्यम, अधम कवि उत्तम हरि-रस लीन।
मध्यम मानत मानुषनि, दोषनि अधम प्रवीन ॥२॥

'केशवदास' कहते हैं कि तीनों लोकों में तीन प्रकार के कवि होते हैं। साथ ही सब लोग बुद्धि को भी तीन प्रकार की बतलाते हैं। वे तीनों प्रकार के कवि (१) उत्तम (२) मध्यम और (३) अधम कहलाते हैं। इनमें से जो उत्तम कवि होते हैं वे परमात्मा के यश में लीन रहते हैं अर्थात् ईश्वर के गुणों का गान अपनी कविता में किया करते हैं। जो मध्यम होते हैं, वे मनुष्यों के चरित्रों का वर्णन करते हैं और जो अधम होते हैं वे दूसरों के दोषों का ही बखान करते रहते हैं।

उदाहरण

सवैया

जो अति उत्तम ते पुरुषारथ, जे परमारथ के पथ सोहैं।
केशवदास अनुत्तम ते नर सतत स्वारथ संयुत जो हैं॥
स्वारथ हू परमारथ भोगनि मध्यम लोगनि के मन मोहैं।
भारत पारथ-मीत कहौ परमारथ स्वारथहीन ते को हैं॥ ३ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो कवि परमार्थ के पथ पर चलते हैं, वे सर्वोत्तम, अर्थात् प्रथम श्रेणी के हैं। जो सदा स्वार्थ में लीन रहते हैं वे

अनुत्तम अथवा द्वितीय श्रेणी के हैं। अर्थात् केवल धन-प्राप्ति के लिए कविता करते हैं)। जो 'मध्यम' या तृतीय श्रेणी के कवि हैं, उनकी कविता से न तो स्वार्थ ही बनता है और न परमार्थ की प्राप्ति होती है। इस श्रेणी के कवियों के सम्बन्ध में ही महाभारत मे श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि 'हे अर्जुन ! जो परमार्थ और स्वार्थ से रहित कविता करते हैं, उन्हें क्या कहें।'

कवि रीति वर्णन

दोहा

साँची बात न बरनहीं, झूंठी बरननि बानि।
एकनि बरनैं नियम कै, कवि मत त्रिविध बखानि ॥४।

कवियों के वर्णन करने की बानि होती है कि वे (१) कभी सच्ची बात को झूठ और (२) कभी झूठी बात को सच्ची वर्णन करते हैं। एक तीसरे प्रकार के कवि ऐसे भी होते हैं जो सब बातों का वर्णन नियमानुकूल करते हैं। इस तरह कवियों के वर्णन के तीन मत (शैली) बतलाये गये हैं।

१—सत्य को मिथ्या कहना

दोहा

'केशवदास' प्रकास बहु, चदन के फल फूल।
कृष्णपक्ष की जोन्ह ज्यों, शुक्ल पक्ष तम तूल ॥५॥

'केशवदास' कहते हैं कि चन्दन के वृक्ष में प्रत्यक्ष रूप से फल और फूल दोनों रहते हैं। (परन्तु कविलोग केवल फूलों का वर्णन करते हैं।) इसी प्रकार कृष्ण और शुक्ल पक्ष मे चाँदनी और अन्धकार बराबर मात्रा में रहते हैं। (परन्तु कवि केवल शुक्ल पक्षकाही वर्णन करते है)

झूठ को सत्य कहना

जहँ जहँ बरणत सिंधु सब, तहँ तहँ रत्ननि लेखि।
सूक्षम सरवरहू कहैं, केशव हंस विशेखि॥६॥

'केशवदास कहते हैं कि कविलोग जहाँ-जहाँ समुद्र का वर्णन करते हैं, वहाँ-वहाँ रत्नो का भी उल्लेख कर देते हैं (यद्यपि प्रत्येक समुद्र मे रत्न नहीं होते।) इसी प्रकार छोटे-छोटे तालावों मे भी हसों का वर्णन किया करते हैं (यद्यपि वे केवल मानसरोवर में रहते है)।

दोहा

लेन कहैं भरि,मूठि तम, सूजनि सियनि बनाय।
अंजुलि भरि पीवन कहैं, चद्र चंद्रिका पाय।७।

(रावण का गुप्तचर बन्दरो की सेना को देखकर आने के बाद उससे कहता है कि उस सेना में ऐसे-ऐसे बन्दर हैं कि जो) अन्धकार को सुई से सीकर मुट्ठी मे भर लेने की बात कहते हैं और चन्द्रमा की चाँदनी को पाजाने पर अञ्जुलि मे भर कर पीने की चर्चा किया करते हैं। (इसमें सभी बातें मिथ्या है परन्तु सत्य की तरह वर्णन कर दी गई हैं।)

दोहा

सबके कहत उदाहरण, बाढ़ै ग्रंथ अपार।
कछू कछू तातै कहे, कविकुल चतुर विचार।।८।।

इस प्रकार सब बातों का उदाहरण देने पर ग्रन्थ बहुत बढ़ जायगा। इसलिए कुछ थोड़े उदाहरण दे दिए हैं। चतुर कवि लोग (उन्हीं के आधार पर, स्वय विचार कर लेंगे।

तम का झूठ वर्णन

कवित्त

कंटक न अटकै न फाटत चरण चपि,
बात ते न जात उड़ि अंग न उघारिये।
नेकहू न भीजत मुसलधार बरसत,
कीच न रचत रंच चित्त में विचारिये।
'केशौदास सावकाश परम प्रकास न,
उसारिये पसारिये न पिय पै बिसारिये।
चलिये जू ओढ़ पट तमही को गाढ़ो तम,
पातरो पिछौरा सेत पाट को उतारिये।९।।

(कोई दूती अपनी नायिका से कहती है कि , स्वेत रेशमी पतली चद्दर को उतार कर अंधकार की घनी चादर को ही ओढ़ कर चलिए। क्योंकि यह अंधकार की चादर न तो काँटों में उलझेगी और न पैर के नीचे दबने पर फटेगी ही। यह न मूसलधार पानी मे भीगेगी और न कीचड़ में तनिक भी सनेगी, इसे अच्छी तरह सोच लीजिए। (केशव दास, दूती की ओर से कहते हैं कि) इस चादर में बड़ी सुविधा है। इसमें प्रकाश नहीं है क्योंकि सफेद चादर की तरह दूर से चमकती नही और इसे चाहे जितना फैलाइए तथा इसमें प्रियतम के पास भूल आने का भय भी नहा है।

चाँदनी के सम्बन्ध में झूठ वर्णन।

कवित्त

भूषण सकल घनसार ही के घनश्याम,
कुसुम कलित केस रही छवि छाई सी।
मोतिन की लरी सिर कंठ कंठमाल हार,
बाकी रूप ज्योति जात हेरत हिराई सी॥
चन्दन चढाये चारु सुंदर शरीर सब,
राखी शुभ सोभा सब बसन बसाई सी।
शारदा सी देखियत देखो जाइ केशाराय,
ठाढ़ी वह कुँवरि जुन्हाई में अन्हाई सी॥१०॥

हे घनश्याम! वह कपूर ही के सब गहने पहने हैं और बालों को सफेद फूलों से सजाए हुए है जिससे शोभा फैली हुई है। सिर पर मोतियों की लड़ी तथा गले में कंठमाला है जो उसके रूप में खो से गए हैं और वह उन्हें खोजती सी जान पड़ती है। वह पूरे शरीर पर चन्दन लगाए हुए है जिसने उसकी सुन्दर शोभा भी रखी है और वस्त्र भी महका दिये है। (केशवदास किसी दूती की ओर से कहते हैं कि) वह चाँदनी मे नहाई हुई सी नायिका शारदा सी दिखलाई पड़ती है, उसे जाकर देखिए।

कविनियम वर्णन

दोहा

वर्णत चंदन मलयही, हिमगिरिही भुज पात।
वर्णत देवनि चरणते, शिरते मानुप गात।११॥

कवि लोग चन्दन का वर्णन मलयपर्वत पर ही करते हैं और भोजपत्र को हिमालय पर ही बतलाते हैं। वे देवताओं के शरीर का वर्णन करते समय चरणों से तथा मनुष्यों के रूप का वर्णन करते समय शिर से आरम्भ करते हैं।

दोहा

अति लज्जायुत कुलवधू, गणिकागण निर्लज्ज।
कुलटाको कोविद कहहि अग अलज्ज सलज्ज॥१२॥

वे (कवि लोग) कुल-वधू को लज्जा युक्त, गणिकाओं को निर्लज्ज तथा कुलटा को (प्रसंगानुसार) निर्लज्ज और सलज्ज दोनों प्रकार से वर्णन करते हैं।

वर्णत नारी नरनते, लाज चौगुनी चित्त।
भूख दुगुन साहस छगुन, काम अठगुना मित्त।१३॥

वे (कवि) स्त्री में पुरुष से चौगुनी लज्जा, दूनी भूख, साहस छः गुना और काम अठगुना वर्णन किया करते हैं।

दोहा

कोकिल को कल बोलिबो बरणत हैं मधुमास।
वरषाही हरषित कहहि, केकी केशवदास॥१४॥

केशवदास कहते हैं कि वे (कवि) लोग बसंत में कोयल के बोलने का वर्णन करते हैं और वर्षा में ही मोर का हर्षित होना बतलाते हैं।

दनुजनिसोंदितिसुतनिसो असुरै कहत बखानि।
ईशशीश शशिवृद्ध को बरणत बालकबानि।१५॥

वे (कवि) लोग दिति के पुत्रों को दनुज और असुर कहकर वर्णन करते हैं और महादेव जी के सिर पर वृद्ध (बहुत दिनों के पुराने) चन्द्रमा को बालक ही कहते हैं। (शिव जी के मस्तक का चन्द्रमा 'बाल-शशि' ही कहा जाता है)

दोहा

सहज सिंगाररति सुंदरी, यदपि सिंगार अपार।
तदपि बखानत सकलकवि, सोरहई सिंगार ॥१६॥

यद्यपि सुंदरी स्त्री सहज ही में अनेक श्रृंगार करती है परन्तु सभी कवि केवल सोलह श्रृंगारों का ही वर्णन करते हैं।

सोलह श्रृंगार

कवित्त

प्रथम सकल सुचि, मज्जन, अमल बास,
जावक, सुदेश केशपासनि सुधारिबो।
अंगराग, भूषण विविध मुख बास राग,
कज्जल कलित लाल लोचन निहारिबो॥
बोलनि, हँसनि चित चातुरीचलनि चारु,
पल पल प्रति पतिव्रत परि पारिबो।
केशौदास' सविलास करहु कुँवरि राधे,
यह विधि सोरह सिंगारन सिंगारिबो ॥१७॥

पहला सब प्रकार की शुचि क्रियाएं (दतौन, उबटन आदि), दूसरा मज्जन (स्नान), तीसरा अमलबास (निर्मल वस्त्रों का धारण करना); चौथा केश-पाश सुधारना (चोटी गूँथना), पाँचवें से लेकर दसवें तक अंगराग (जिसमें माग में सिंदूर लगाना, मस्तक पर खौर देना, गालों पर तिल बनाना, अंग में केशर लगाना और हाथों में मेंहदी लगाना सम्मलित हैं) ग्यारहवाँ और बारहवाँ सोने और फूलों के गहने पहनना, तेरहवाँ मुख-बास (पान-इलायची आदि खाना), चौदहवाँ और पन्द्रहवाँ मुखराग (मिस्सी लगाना और ओठों को रंगना) और सोलहवाँ सुंदर

काजल लगाकर चचल नेत्रों से देखना। इन सोलह शृंगारों को करके बोल, हसी, और सुन्दर चाल से प्रतिक्षण पतिव्रत का पालन करना चाहिए। 'केशवदास कहते हैं कि—'हे राधे। इस तरह सोलह शृंगारों मे अपने को सजाओ।'

दोहा

कुलटनि को पति प्रेमबस, बारबधुनि धन जानु।
जाहि दई पितु मातु सो, कुलजा को पति मानु ॥१८॥

कुलटा स्त्री का पति प्रेम और गणिकाओं का पति धन समझो और जिसे माता पिता दे दें उसे कुलवती स्त्री का पति मानो। (तात्पर्य यह है कि कुलटा स्त्री जिसे प्रेम करती है, उसे अपना पति मान लेती है, वेश्याएँ धन देनेवाले को पति समझती हैं और कुलवती स्त्री का वही पति होता है जिसे उसके माता पिता विवाह करके दे देते हैं)

महापुरुष को प्रगट ही, वरणत वृषभ समान।
दीप, थंभ गिरि गज, कलश सागर, सिंह प्रमान ॥१९॥

महापुरुष को वृषभ, दीपक, स्तम्भ, गिरि, गज, कलश, सागर, और सिंह के समान वर्णन करते हैं।

उदाहरण

कवित्त

गुण मणि आगर अरु धीरज को सागरु,
उजागर धवल धरि धर्मधुर धाये जू।
खल तरु तोरिबे को, राजै गजराज सम,
अरि गज राजन को सिंह सम गाये जू ॥
धामिन को वामदेव, कामिनि को कामदेव,
रण जय थंभ राम देव मन भाये जू।
काशी कुल कलश, सुवृद्ध जंबू दीप दीप,
केशोदास कल्पातरु इन्द्रजीत आये जू ॥२०॥

'केशवदास' कहते हैं कि गुणरूपी मणियों की खान, धैर्य के सागर यशस्वी, धर्मात्मा, खलरूपी वृक्ष को तोड़ने के लिए हाथीस्वरूप, शत्रु-

रूपी गज के लिए सिंह के समान, विरोधियों के लिए श्री शकर जैसे, स्त्रियों के लिए कामदेव स्वरूप, रण में विजय-स्तम्भ श्रीराम के समान, काशी-कुल-कलश, जबू द्वीप (भारतवर्ष) के दीपक स्वरूप कल्पवृक्ष समान इन्द्रजीत पधारे हैं। दोहा

वृषभ कध स्वर मेघसम, भुजधुज अहि परमान।
उरसम शिलाकपाट अँग, और तियानि समान ॥२१॥

पुरुषों के कंधे वृषभ के समान, उनका स्वर बादलों जैसा, भुजाए ध्वजा और साँप जैसी और उर शिला या कपाट तुल्य वर्णन किया जाता है। उनके अन्य अँगों का वर्णन स्त्रियों के अगों के समान ही किया जाता है। उदाहरण

कवित्त

मेघ ज्यों गभीर वाणी, सुनत सखा शिखीन,
सुख, अरि हृदय जवासे ज्यो जरत हैं।
जाके भुजदड भुवलोक के अभय ध्वज,
देखि देखि दुर्जन भुजंग ज्यो डरत हैं।
तोरिबे को गढतरु होत हैं सिला सरूप,
राखिबे को द्वारन किवार ज्यो अरत हैं।
भूतल को इन्द्र इन्द्रजीत राजे युग युग,
केशौदास जाके राज, राज सो करत हैं ॥२२॥

जिनकी बादलों जैसी गभीर वाणी को सुनते ही मित्ररूपी मोर सुखी होते हैं और बैरियों का हृदय जवासे के समान जल जाता है। जिसके भुजदड इस लोक की अभय ध्वजाए जैसी हैं। जिनकी सर्प जैसी भुजाए देख देख कर दुष्ट लोग डरते हैं। जिनकी भुजाए गढ रूपी वृक्षों को तोड़ने के लिए शिला समान हैं और दरवाजों की रक्षा के लिए किवाडों जैसी अढ जाती हैं, वे पृथ्वी के इन्द्र स्वरूप इन्द्रजीत सिंह युग-युग राज्य करते रहे, जिन के राज्य में केशवदास राज्य-सा करते हैं, अर्थात् राजा की तरह रहते हैं।

पांचवाँ-प्रभाव

काव्यालङ्कार

दोहा

यदपि सुजाति सुलक्षणी, सुबरनसरस सुवृत्त।
भूषण बिन न विराजई कविता वनिता मित्त ॥ १ ॥

हे मित्र ! कविता यद्यपि सुजाति (उच्चकोटि की), सुलक्षण (अच्छेलक्षणोंवाली) सुवरनसरस (अच्छे रसीले अक्षरों से युक्त) और (सुवृत्त अच्छे छन्दोंवाली) हो, तो भी बिना भूषण (अलकार) के अच्छी नहीं लगती। इसी तरह से स्त्री भी सुजाति (अच्छे वंश की) सुलक्षणी (अच्छे लक्षणोंवाली), सुवरनसरस (अच्छे रग की या गौरवर्ण तथा रसीली) और सुवृत्त (अच्छा बोलनेवाली) हो, तो भी बिना भूषण या (गहनों। के अच्छी नहीं लगती।

कविन कहे कवितानिके अलकार द्वै रूप।
एक कहे साधारणहि, एक विशिष्ट' स्वरूप ॥ २ ॥

कवियों ने काव्यालकारों के दो रूप वर्णन किये हैं। एक को साधारण कहते हैं और दूसरे को विशिष्ट।

सामान्य

सामान्यालकार को, चारि प्रकार प्रकास।
वर्ण, वर्ण्य भू-राज श्री, भूषण केशवदास ॥ ३ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि सामान्यलकार के चार प्रकार हैं। (१) वर्ण (२) वर्ण्य (३) भूमि श्री (४) राज्य-श्री।

(१) वर्णालंकार

श्वेत, पीत, कारे, अरुण, धूम्र, सुनीले, वर्ण।
मिश्रित, केशवदास कहि, सात भाँति शुभ कर्ण ॥ ४ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि कविता में श्वेत, पीला, काला, लाल, धूम्र, नीला और मिश्रित ये सातरग ही शुभकरण (मगलकारी) माने जाते है।

श्वेतवर्णन

कीरति हरिहय शरदघन, जोन्ह जरा, मंदार।
हरि हर. हरगिरि सूर, शशि सुधामौंध घनसार ॥ ५ ॥

कीर्त्ति, इन्द्र, शरदघन, चाँदनी, बुढ़ापा, कल्पवृक्ष, हरि (श्रीविष्णु) हर (श्री महादेव), कैलाश पर्वत, सूर्य, चन्द्रमा, चूना और कपूर।

बल, बक, हीरा, केवरो कौडा करका कास।
कुद कँचुली कमल, हिमि, सिकता भसम कपास ॥ ६ ॥

श्री बलदेव जी, बगुला, हीरा, केवड़ा, कौड़ी, ओला, कास, कुद, कैंचुली, कमल, बर्फ, बालू, भस्म और कपास।

खाँड, हाड, निर्भर चँवर, चदन, हंस. मुरार।
छत्र, सत्ययुग, दूध, दधि, शंख सिंह, उडमार ॥ ७ ॥

खाड (चीनी) हाड़, झरना, चँवर, चदन, हस, कमल की जड़, छत्र, सत्ययुग, दूध, दही, शख, सिंह, और तारे।

शेष, सुकृति, शुचि, सत्त्वगुण, संतन के मन, हास।
सीप चून, भोंडर, फटिक, खटिका, फेन, प्रकास ॥ ८ ॥

शेषनाग, सुकृति, (पुण्य) सत्वगुण, सज्जनो का हास्य, सीप, चूना, अबरक, स्फटिक, खड़िया, फेन और प्रकाश।

शुक्र, सुदरशन, सुरसरित, वारन वाजि, समेत।
नारद, पारद, अमलजल, शारदादि सब श्वेत ॥ ९ ॥

शुक्र, सुदर्शन, सुरसरित (गगा), सुरवारन (ऐरावत), सुरवाजि (उच्चैश्रवा), नारदमुनि, पारद (पारा), निर्मल जल, और शारदाजी (सरस्वती) ये सब श्वेत हैं।

उदाहरण (१)

कवित्त

कीन्हे छत्र छितिपति केशौदास गणपति,
दसन, बसन बसुमति कह्याचारु है।
बिधि कीन्हों आसन, शरासन असमसर,
आसन को कीन्हो पाकशासन तुषारु है।
हरि करी सेज हरिप्रिया करी नाक मोती,
हर करयो तिलक हराहू कियो हारु है।
राजा दशरथ सुत सुनो राजा रामचन्द्र,
रावरो सुयश सब जग को सिंगारु है ॥ १०॥

'केशवदास कहते हैं कि—हे राजा दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्र सुनो। आपका सुयश सारे संसार के शृंगार का कारण है, क्योंकि राजाओं ने अपने छात्र, उसीसे निर्मित किये हैं और श्री गणेशजी ने अपना दाँत भी उसीसे बनाया है। पृथ्वी ने अपना सुन्दर वस्त्र (सागर) ब्रह्मा ने अपना आसन (पुण्डरीक)कामदेव ने अपना धनुष, इन्द्र ने अपना घोड़ा (उच्चैःश्रवा), नारायण ने अपना बिछौना शेषनाग, श्रीलक्ष्मी जी ने अपनी नाक का मोती, श्रीशङ्कर जी ने अपना तिलक (चन्द्रमा) और पार्वती जी ने उसे अपना हार बनाया है।

उदाहरण (२)

कवित्त

देहदुति हलधर कीन्हीं, निशिकर कर,
जगकर वाणीवर विमल विचारु है।
मुनिगण मन मानि, द्विजन जनेऊ जानि,
संख, सखपानि पानि सुखद अपारु है॥
'केशौदास' सविलास विलसै, विलासनीन,
सुखमुख मृदुहास, उदय उदारु है।
राजा दसरथ सुत सुनो राजा रामचन्द्र,
रावरो सुयश सब जग को सिंगारु है ॥११॥

श्रीबलराम जी ने अपने शरीर की द्युति बनाया। चन्द्रमा ने अपनी किरणें, ब्रह्माजी ने वाणी और विमल विचारवाले मुनियों ने अपने मन, ब्राह्मणों ने जनेऊ और शङ्खपाणि (श्रीनारायण) ने अपने हाथ का अपार सुखदायी शङ्ख उसी यश को बनाया है। 'केशवदास' कहते हैं कि स्त्रियों में विलास और मृदुहास्य का उदार उदय उसी से होता है। अतः हे राजा रामचन्द्र! आपका सुयश सारे जगत की शोभा का कारण बन रहा है।

उदाहरण—३

कवित्त

नारायण कीन्हीं मनि, उर अवदात गनि
कमला की वाणी मनि, शोभा शुभसारु है।
'केशव' सुरभि केश, शारदा सुदेश वेश
नारद को उपदेश विशद बिचारु है॥
शौनक ऋषी विशेषि, शीरष शिखानि लेखि
गंगा की तरग देखि, विमल विहारु है।
राजा दशरथ सुत सुनौ राजा रामचन्द्र
रावरो सुयश सब जग को सिंगारु है॥१२॥

श्री नारायण ने उसे अपने उदार हृदय की मणि (कौस्तुभ) बनाया है। लक्ष्मी जी की वाणी तथा शोभा का शुभ सार भी वही है। 'केशव' कहते हैं कि चमरी गाय ने अपने केश और सरस्वती जी ने अपना सुन्दर वेश उसी यश से बनाया है। नारद जी का उपदेश तथा उनके विशद विचार उसीसे निर्मित हुए हैं। शौनकादि ऋषियों की चोटिया, गगाजी की लहरें तथा जीवों के निर्मल व्यवहार भी उसी से बने हैं। अतः हे राजा रामचन्द्र! आपका सुयश सारे ससार की शोभा का कारण बन रहा हैं।

जरावर्णन

सवैया

विलोकि शिरोरुह श्वेतसमेत, तनोरुह केशव यों गुण गायो।
उठे किधौं आयु की औधिके अंकुर, शूल कि सुःख समूल नशायो॥
लिख्यो किधौं रूपके पाणि पराजय, रूपको भूप कुरूप लिखायो।
जरा शरपजर जीव जरयो कि जुरा जरकंवर सो पहिरायो॥१३॥

शरीर के रोंओं सहित शिर के बालों को श्वेत होता हुआ देखकर 'केशव' ने उनका यों वर्णन किया है। ये सफेद बाल हैं या आयु की समाप्ति के अंकुर हैं अथवा शूल हैं, जिन्होंने सारे सुखों को समूल नष्ट कर दिया है। अथवा जरारूपी कुरूप राजा ने रूप (सुन्दरता) से चाँदी के पानी से पराजय का पत्र लिखा लिया है, (जिसके ये सफेदबाल सफेद-सफेद अक्षर हैं) या जरा (बुढ़ापे) के बाणों ने जीव को चारों ओर से घेर लिया है अथवा मृत्यु ने जीव को जरी का कम्बल उढ़ा दिया है।

सवैया

अभिराम सचिक्कन श्याम, सुगंधके धामहुते जे सुभाइकके।
प्रतिकूल सबै दृगशूल भये, किधौं शाल शृंगारके घाइकके॥
निजदूत अभूत जरा के किधौं, अफताला जरा जनलाइकके।
सितकेश हिये यहि वेश लसैं, जनु साइक अंतकनाइकके॥१४॥

जो बाल सुन्दर, चिकने, काले सुगंध के सुन्दर घर थे, वे सब अब उलटे आँखों के शूल (दुखदेनेवाले) हो गये हैं। ये सफेद बाल हैं या शृंगार (शोभा) को नष्ट करनेवाले के हाथ के शाल (अस्त्र विशेष) हैं। अथवा ये सफेद बाल बुढ़ापे के अद्भुत दूत हैं या वृद्धावस्था के योग्य अधिकारी हैं। ये सफेद बाल ऐसे ज्ञात होते हैं मानों यमराज के बाण हों।

सवैया

लसैं सितकेश शरीर सबै कि जरा जस रूपके पानी लिखायो।
सुरूपको देश उदासकै कीलनि कीलितु कैकै कुरूप नसायो॥
जरैं किधौं केशव व्याधिनिको, किधौं आधि के अंकुर अंत न पायो।
जरा शरपंजर जीव जर्यो, कि जुरा जरकंबर सो पहिरायो॥१५॥

शरीर भर में ये सफेद बाल हैं या बुढ़ापे ने चाँदी के पानी से अपनी कीर्त्ति लिखा ली है। (ये बाल मानों उसीके अक्षर हैं)। अथवा कुरूप ने सौन्दर्य के देश को उद्वासन मंत्र की कीलों को गाड़

कर नष्ट कर दिया है। 'केशव' कहते हैं कि अथवा ये सफेद बाल व्याधियों (शारीरिक रोगों) की जड़ हैं या आधि (मानसिक रोगों) के अंकुर हैं, जिनका अंत नहीं मिलता। जरा (बुढ़ापे) ने जीव को चारों ओर बाणों से घेर लिया है अथवा मृत्यु ने जीव को जरी का कम्बल पहना दिया है। (७) पीतवर्णन

दोहा

हरिवाहन, विधि, हरजटा, हरा, हरद, हरताल।
चंपक, दीपक, वीररस, सुरगुरु, मधु, सुरपाल ॥१६॥

गरुड़ ब्रह्माजी, शिवजी की जटाएँ, हल्दी, हड़ताल, चंपक दीपक, वीर-रस, बृहस्पति, मधु और इन्द्र।

सुरगिरि, भू, गोराचना, गधक, गोधनमूत।
चक्रवाक, मनशिल सदा, द्वापर, वानरपूत ॥१७॥

सुमेरु पर्वत, पृथ्वी, गोरोचना, गंधक, गोमूत्र, चकवा, मैनशिल, द्वापर युग और बन्दर का बच्चा।

कमलकोश, केशव-वसन, केसरि, कनक, सभाग।
सारोमुख, चपला, दिवस, पीतरि, पीतपराग ॥१८॥

हे सभाग! कमल का वीजकोश, केशव-वसन (श्रीकृष्ण का वस्त्र-पीताम्बर) केशर, सोना, मैना का मुख, बिजली, दिन, पीतल और पराग ये सब पीले माने जाते है।

उदाहरण

सवैया।

मंगलही जु करी रजनी विधि, याहिते मगली नाम धरयो है।
दीपति दामिनि देहसवाँरि, उड़ायदई घन जाइ वरयो है।
रोचनको रचि केतकी चंपक फूलनि में अँगवासु भरयो है।
गौरि गोराईको मैल मिलैकरि, हाटक तें करहाट करयो है ॥१९॥

श्रीब्रह्माजी ने पार्वती जी के मांगल्य गुणों से युक्त हल्दी बनाई, इसीसे उसका नाममंगली पड़ा। उनके शरीर की दीप्ति से बिजली का निर्माण

करके ऊपर उड़ादिया, जिसने जाकर बादलों को जलाना आरम्भ किया। उनके अंग की सुवास से रोचन बनाया और केतकी तथा चंपक पुष्पों मे भी सुगंध भरदी। इसके बाद गौरी जी के शरीर का मैल लेकर सोने मे करहार (कमल का बीज कोश) तक का निर्माण किया।

श्य मवरणन

दोहा

विन्ध्य, वृक्ष, आकाश, असि, अरजुन, खंजन, सांप।
नीलकंठको कंठ, शनि, व्यास, विसासी, पाप ॥२०॥

विन्ध्यपर्वत, वृक्ष, आकाश, तलवार, अर्जुन, खंजन साप, श्रीमहादेव जी का कंठ, शनि, व्यास, विश्वासघाती और पाप।

राकस, अगर, लंगूरमुख, राहु, छांह, मद, रोर।
रामचन्द्र, घन, द्रौपदी, सिंधु, असुर, तम, चोर ॥२१॥

राक्षस, अगरु, लंगूर का मुख राहु छाया, मद (नशा) रोर (दरिद्र) श्रीरामचन्द्र बादल, द्रौपदी समुद्र की मूर्ति, अंधकार और चोर।

जंबू जमुना तैल, तिल, खलमन सरसिज, चीर।
भील, करी, वन, नरक, मसि, मृगमद, कज्जल नीर ॥२२॥

जामुन फल, यमुना, तैल, तिल, सरसिज (नीला कमल), चीर (एक तरह का वस्त्र जो गहरा नीला होता है), भील करी (हाथी) वन, नर्क, मसि (स्याही), मृगमद (कस्तूरी) और काजल मिला आँसू।

मधुप, निशा, शृंगाररस, काली, कृत्या, कोल।
अपयश, ऋक्ष, कलंक, कलि, लोचन, तारे लोल ॥२३॥

भौंरा, रात शृंगार रस, काली देवी कृत्याशक्ति, कोल (सूअर) अपयश रीछ कलंक, कलियुग, और आंखों के चचल तारे।

मारग अगिनि, किसान नर, लोभ, छोभ, दुख, द्रोह ।
विरह यशोदा, गोपिका कोकिल, महिषी लोह ॥२४॥

अग्नि का मार्ग, किसान मनुष्य, लोभ, क्षोभ, दुःख, द्रोह, विरह, यशोदा, ग्वालिन, कोयल, भैंस और लोहा ।

काच, कीच, कच काम, मल, केकी काक कुरूप ।
कलह छुद्र, छल आदिदै काले कृष्णसुरूप ॥२५॥

काच, कीच, बाल, मोर, कौआ, कुत्सितरूप, कलह क्षुद्र छल आदि भाव और श्रीकृष्ण का स्वरूप-ये काले रंग के माने जाते हैं ।

उदाहरण-(१)

कवित्त

वैरिन के बहु भाति देखत ही लागि जाति,
कालिमा कमलमुख सब जग जानी है ।
जतन अनेक करि यदपि जनम भरि,
धोवत हू न छूटत केशव बखानी है ॥
निज दल जागै जोति, पर दल दूनी होति,
अचला चलति यह अकह कहानी है ।
पूरन प्रताप दीप अंजन की राजै रेख,
राजै श्रीरामचन्द्र पानि न कृपानी है ॥२६॥

सारा संसार जानता है कि श्रीरामचन्द्र की तलवार को देखते ही वैरियों के कमल-मुख में कालिमा लग जाती है । 'केशव' कहते हैं कि वह कालिमा जन्म भर यत्न करने पर भी धोने से भी नहीं छूटती । उसकी जितनी ज्योति अपने दल में होती है, उससे दूनी शत्रुओं के दल में होती है । उसके भय से पृथ्वी डगमगा जाती है; उसकी कथा अकथनीय है । श्रीरामचन्द्र के हाथ में जो तलवार सुशोभित हो रही है, वह तलवार नहीं प्रत्युत उनके पूर्ण प्रताप रूपी दीपक के काजल की रेखा है ।

उदाहरण (२)

कवित्त

हसनि के अवतंस रचे रंच कीच करि,
सुधा के सुधार मठ कांच के कलससों।
गंगाजू के अंग संग यमुना तरंग वल,
देव का बदन रच्यो वारुणी के रससों॥
केशव कपाली कंठ कूल कालकूट जैसे,
अमल कमल अलि सोहै ससि सस सों।
राजा रामचन्द्र जू के त्रास बस भारे भूप,
भूमि छोंड़ि भागे फिरें ऐसे अपजस सों॥२७॥

जिस प्रकार कीचड़ से युक्त सुन्दर हंस और काच के कलश से युक्त स्वच्छ मठ, या यमुना की तरंगों से युक्त गंगा, या मदिरा के नशे से युक्त बलदेव जी का मुख या (केशव कहते हैं कि) शिवजी का विष से युक्त गला, या कालकूट विष या भौंरों से युक्त स्वच्छ कमल या मृगांक से युक्त चन्द्रमा कलंकित होता है, उसी प्रकार पराजित होने पर अपयश से हम भी, कलंकित होंगे, यही सोचकर श्रीरामचन्द्रजी के डर के मारे, सभी राजा लोग अपना राज्य छोड़कर भागे-भागे फिरते हैं।

४—अरुण वर्णन

इंद्रगोप, खद्योत कुज, केसरि, कुसुम, विशेखि।
केशव, गजमुख, बालरवि, तांबो, तच्छक, लेखि॥२८॥

इन्द्रगोप (वीरबहूटी), खद्योत (जुगनू), कुज (मंगल ग्रह), केशर, कुसुम (एक तरह का लाल फूल), श्रीगणेशजी, बालरवि (प्रातः काल के सूर्य), तांबा और तच्छक।

रसना, अधर, दृगंत, पल, कुक्कुट शिखा समान।
मानिक, सारस सीस शुक, बानरवदन प्रमान॥२९॥

जिह्वा, ओठ, आँखों के कोने, पल (मांस), कुक्कुट शिखा (मुर्गे की चोटी), माणिक्य, सारस का शिर और बन्दर का मुख।

कोकिल, चाख, चकोर, पिक, पारावत नख नैन।
चंचु चरन कलहंसके पाकी कुंदरू ऐन ॥३०॥

कोयल, चाख (नीलकठ), चकोर, पिक (पपीहा) और पारावत (कबूतर) पक्षियों के नख तथा आँखे, हस की चोच तथा चरण और पका हुआ कुंदरू।

जपाकुसुम दाड़िमकुसुम, किंशुक कंज अशोक।
पावक, पल्लव बीटिका, रंग रुधिर सब लोग ॥३१॥

जपाकुसुम (गुड़हर का फूल), दाड़िम कुसुम (अनार का फूल) किंशुक पुष्प, कज (कमल), अशोक, पावक (अग्नि), और बीटिका (पान का बीड़ा)।

रातो चंदन, रौद्ररस, छत्रीधर्म मँजीठ।
अरुण, महावर, रुधिर, नख, गेरू, संध्या ईठ ॥३२॥

लाल चंदन, रौद्ररस, क्षत्रिय का धर्म, मजीठ, अरुण (सूर्य के सारथी), महावर, रुधिर (रक्त), नख, गेरू, और सध्या—हे मित्र। ये सभी सुन्दर लाल रंग के माने जाते हैं।

उदाहरण

सवैया

फूले पलास विलासथली बहु केशवदास हुलास न थोरे।
शेष अशेषमुखानलकी जनु, ज्वलविशाल चली दिविओरे॥
किंशुक श्रीशुकतुंडनि की रुचि, राचै रसानलमें चितचोरे।
चंचुनिचापि चहूँ दिशि डोलत, चारुचकोर अँगारनि भोरे ॥३३॥

'केशवदास' कहते हैं कि विलासथली मे बहुत से पलाश के वृक्ष फूल रहे हैं, जहाँ कम आनन्द नहीं होता। उन फूलों को देखकर ऐसा ज्ञात होता है, मानो शेषनाग जी के मुखों की अग्नि की बड़ी-बड़ी लपटें आकाश की ओर चली जा रही हैं। पलाश के पुष्प तोते की चोंच की भाँति रंगदार हैं और इस पृथ्वी भर में लोगों का चित्त चुराए लेते हैं। चकोर पक्षी (इन फूलों को) धोखे से अंगार मानकर अपनी चोंच में दबाए हुए चारों ओर घूमते हैं।

५—धूम्र वर्णन

दोहा

काककण्ठ, खर, मूषिका, गृहगोधा भनि भौंर।
करभ, कपोतन आदिदै, धूम्र, धूमलौ धूरि ॥३४॥

कौए की गर्दन, गदहा, चुहिया, गृहगोधा (छिपकली), करभ (ऊँट), कबूतर, धूमिलो (धुएं के रंग की गाय), और धूल इत्यादि धूम्रवर्ण के कहे जाते हैं।

उदाहरण

सवैया

राघवको चतुरंगचमू चपि धूरि उठी जलहूँ थल छाई।
मानो प्रताप हुताशन धूमसो, केशवदास अकास न माई ॥
मेटिकै पंच प्रभूत किधौं, विधि रेनुमई नवरीति चलाई।
दुःख निवेदनको भवभारको, भूमि मनौं सुरलोक सिधाई ॥२५॥

श्रीरामचन्द्र जी की चतुरंगिणी सेना के सिपाहियों (तथा हाथी-घोड़ों) के पैरों से दबकर जो धूल उठ रही है, वह जल और स्थल सभी जगहों पर छा गई है। 'केशवदास' कहते हैं कि वह धूल ऐसी जान पड़ती है मानो उनके प्रताप रूपी अग्नि का धुआँ है जो आकाश में भी नहीं समा पाता। अथवा (यह उड़ी हुई धूल ऐसी लगती है कि) ब्रह्माने मानो पाँच तत्वों को हटाकर केवल धूलमयी रचना करने की नई प्रणाली चलाई है। या ऐसा जान पड़ता है कि अपने भार के दुःख को सुनाने के लिए पृथ्वी स्वर्गलोक को चली जा रही है।

६—नील वर्णन

दोहा

दूब, वंश, कुवलय, नलिन, अनिल, व्योम, तृण, वाल।
मरकतमणि, हयसूरके, नीलवरण सेवाल ॥३६॥

कोकिल, चाख, चकोर, पिक, पारावत नख नैन।
चंचु चरन कलहंसके पाकी कुंदरू ऐन ॥३०॥

कोयल, चाख (नीलकंठ), चकोर, पिक (पपीहा) और पारावत (कबूतर) पक्षियों के नख तथा आँखे, हंस की चोंच तथा चरण और पका हुआ कुंदरू।

जपाकुसुम दाडिमकुसुम, किंशुक कंज अशोक।
पावक, पल्लव बीटिका, रंग रुचिर सब लोग ॥३१॥

जपाकुसुम (गुड़हर का फूल), दाडिम कुसुम (अनार का फूल) किंशुक पुष्प, कंज (कमल), अशोक, पावक (अग्नि), और बीटिका (पान का बीड़ा)।

रातो चंदन, रौद्ररस, छत्रीधर्म मँजीठ।
अरुण, महावर, रुधिर, नख, गेरू, संध्या ईठ ॥३२॥

लाल चंदन, रौद्ररस, क्षत्रिय का धर्म, मजीठ, अरुण (सूर्य के सारथी), महावर, रुधिर (रक्त), नख, गेरू, और संध्या—हे मित्र! ये सभी सुन्दर लाल रंग के माने जाते हैं।

उदाहरण

सवैया

फूले पलास विलासथली बहु केशवदास हुलास न थोरे।
शेष अशेषमुखानलकी जनु, ज्वालविशाल चली दिविओरे॥
किंशुक श्रीशुकतुंडनि की रुचि, राचै रसातलमें चितचोरे।
चंचुनिचापि चहूँ दिशि डोलत, चारुचकोर अँगारनि भोरे ॥३६॥

'केशवदास' कहते हैं कि विलासथली में बहुत से पलाश के वृक्ष फूल रहे हैं, जहाँ कम आनन्द नहीं होता। उन फूलों को देखकर ऐसा ज्ञात होता है, मानो शेषनाग जी के मुखों की अग्नि की बड़ी-बड़ी लपटें आकाश की ओर चली जा रही हैं। पलाश के पुष्प तोते की चोंच की भाँति रंगदार हैं और इस पृथ्वी भर में लोगों का चित्त चुराए लेते हैं। चकोर पक्षी (इन फूलों को) धोखे से अंगार मानकर अपनी चोंच में दबाए हुए चारों ओर घूमते हैं।

५—धूम्र वर्णन

दोहा

काककण्ठ, खर, मूषिका, गृहगोधा भनि भूरि।
करभ, कपोतन आदि दै, धूम्र, धूमली धूरि ॥३४॥

कौए की गर्दन, गदहा, चुहिया, गृहगोधा (छिपकली), करभ (ऊँट), कबूतर, धूमिली (धुएं के रंग की गाय), और धूल इत्यादि धूम्र वर्ण के कहे जाते हैं।

उदाहरण

सवैया

राघवको चतुरंगचमू चपि धूरि उठी जलहू थल छाई।
मानो प्रताप हुताशन धूमसो, केशवदास अकास न माई ॥
मेटिकै पंच प्रभूत किधौं, विधि रेनुमई नवरीति चलाई।
दुःख निवेदनको भवभारको, भूमि मनों सुरलोक सिधाई ।३५।

श्रीरामचन्द्र जी की चतुरगिणी सेना के सिपाहियों (तथा हाथी-घोड़ों) के पैरों से दबकर जो धूल उठ रही है, वह जल और स्थल सभी जगहों पर छा गई है। 'केशवदास' कहते हैं कि वह धूल ऐसी जान पड़ती है मानो उनके प्रताप रूपी अग्नि का धुआं है जो आकाश में भी नहीं समा पाता। अथवा (यह उड़ी हुई धूल ऐसी लगती है कि) ब्रह्माने मानो पाँच तत्वों को हटाकर केवल धूलमयी रचना करने की नई प्रणाली चलाई है। या ऐसा जान पड़ता है कि अपने भार के दुःख को सुनाने के लिए पृथ्वी स्वर्गलोक को चली जा रही है।

६—नील वर्णन

दोहा

दूब, वंश, कुवलय, नलिन, अनल, व्योम, तृण, वाल।
मरकतमणि, हयसूरके, नीलवरण सेवाल ॥३६॥

दूब (दूर्वा घास), कुवलय (नीला कमल), नलिन, (नीली कुमुदनी) अनिल (वायु), व्योम (आकाश), तृण, बाल (केश), मरकत मणि (नीलम) सूर्य के घोड़े और सैवाल (सिवार) नील रंग के माने जाते हैं।

उदाहरण

सवैया।

कण्ठ दुकूल सुओर दुहूँ उर यों, उरमैं बलकै बलदाई।
केशव सूरजअंशनि मंडि, मनो जमुनाजलधार सिधाई॥
शंकरशैल शिलातलमध्य, किधौं शुककी अवली फिरि आई।
नारद बुद्धिविशारद हाय, किधौं तुलसीदलमाल सुहाई॥२७॥

शक्तिदायी श्री बलराम जी के गले में दुकूल (दुपट्टे) के दोनों ओर हृदय पर लटक रहे हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि वे ऐसे ज्ञात होते हैं मानों सूर्य ने यमुना के जल की धारा को अपनी किरणों से युक्त करके वहाँ से उतारा है। अथवा ऐसा जान पड़ता है मानों कैलाश पर्वत पर तोतों की पंक्ति बैठी हुई है या बुद्धिमान नारद जी के हृदय पर तुलसी दल की माला झूल रही है।

मिश्रित वर्णन

(क) श्वेत और काला

सिंह कृष्ण हरि शब्दगुनि, चंद विष्णु बिधु देखि।
अभ्रकधातु अकाश पुनि, श्वेत श्याम चित लेखि॥३८॥

हरि शब्द के सिंह और कृष्ण दो अर्थ हैं इसलिए अर्थ के अनुकूल ही रंग मानना चाहिए अर्थात् जब सिंह का अर्थ निकले तब श्वेत और श्रीकृष्ण का अर्थ हो तब काला समझना चाहिए। इसी तरह 'बिधु' शब्द के भी दो अर्थ होते हैं, 'चन्द्रमा' और 'विष्णु'। इनमें से 'चन्द्रमा' श्वेत और 'विष्णु' श्याम माने जायगे। 'अभ्रक' के भी दो अर्थ होते हैं (१) 'अभ्रक' धातु और (२) आकाश। 'अभ्रक' श्वेत और 'आकाश' काला माना जायगा।

घनकपूर घनमेघ अरु, नागराज गज शेषु।
पयाराशि कहि सिंधुमा, अरु क्षिति क्षीरहि लेषु ॥३९॥

'घन' का अर्थ 'कपूर' और बादले' होता है। कपूर से श्वेत और बादल से काला रंग मानना चाहिए। 'नागराज' के 'हाथी' और 'शेष' दो अर्थ होते हैं। 'हाथी' से कालारंग और 'शेष' से श्वेत रंग समझना चाहिए। इसी तरह 'पयोराशि' के 'समुद्र' और 'दुग्ध समूह' दोनों अर्थों मे से 'समुद्र' का काला और 'दूध' का श्वेत रंग माना जायगा।

राहु सिंह सिंहीजभनि, हरि बलभद्र अनन्त।
अर्जुन कहिये श्वेतसों, अरु पारथ बलवन्त ॥४०॥

'सिंहीज' शब्द के अर्थ 'राहु' और 'सिंह' हैं। पहले का रंग काला और दूसरे का श्वेत समझा जाता है। 'अनन्त' शब्द के दो अर्थ 'श्रीकृष्ण' और 'बलराम' में से श्रीकृष्ण का अर्थ काला और 'बलराम' का श्वेत समझना चाहिए। 'अर्जुन' शब्द से श्वेत रंग माना जायगा और 'पार्थ' से 'काला'।

हरिगजसुरगज समुझिये, फिर हरि गजगज जानि।
कोकिल सों कलकण्ठकहि, अरु कलहंस बखानि ॥४१॥

'हरिगज' शब्द के दो अर्थ हैं। जब उसका अर्थ इन्द्र का हाथी-ऐरावत होगा तब उसका रंग श्वेत मानना चाहिए और जब 'विष्णु' का हाथी, जिसे उन्होने बचाया था' अर्थ होगा, तब उसका रंग काला समझना चाहिए। इसी भाँति 'कलकंठ' से 'कोयल' और 'कलहंस' दो अर्थ निकलते हैं। कोयल काली मानी जायगी और 'कलहंस' श्वेत।

कृष्णनदीवरशब्द सों, गंगासिंधु बखानि।
नीरद ! निकसे दन्तको, अरुजु नीरको दानि ॥४२॥

'कृष्ण नदीवर' शब्द से 'गंगा' और 'समुद्र' दो अर्थ निकलते हैं। पहले अर्थ से श्वेत रंग और दूसरे से काला मानना चाहिए। इसी प्रकार 'नीरद' 'मुँह से निकले हुए दाँत' और 'बादल' दोनों को कहते हैं। पहला श्वेत रंग का सूचक है और दूसरा काले रंग का'।

(ख) श्वेत और पीत

शिव विरंचिसों 'शंभु' भणि, रजतरजत अरु हेम।
स्वर्ण शरभ सों कहत हैं अष्टापद करि नेम ॥४३॥

'शंभु' शब्द से शिवजी और ब्रह्माजी दोनों माने जाते हैं। जब 'शिवजी' अर्थ होगा तब श्वेत रंग माना जायगा और जब 'ब्रह्मा' अर्थ होगा तब पीला। इसी प्रकार 'रजत' शब्द 'चाँदी' के अर्थ में श्वेत और 'सोने' अर्थ में पीला मानिए। 'अष्टापद' सोने और शरभ नामक जंतु को कहते हैं। पहले अर्थ में पीला और दूसरे अर्थ में श्वेत रंग मानना चाहिए।

सोम स्वर्ण अरु चंद कलधौत रजत अरु हेम।
तारकूट रूपो रुचिर पीतरि कंहकरि प्रेम ॥४४॥

सोम 'शब्द 'सोना' और चन्द्रमा' दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। सोना पीला समझिए और चन्द्रमा श्वेत। 'कलधौत' शब्द के दो अर्थों में से चाँदी को श्वेत और सोने को पीला मानिए। 'तारकूट' के दो अर्थ 'चाँदी' तथा 'पीतल' में से चाँदी श्वेत रंग की सूचक मानी जायगी और 'पीतल' पीले रंग की।

(ग) श्वेत और लाल

श्वेतवस्तु शुचि आगनि शुचि, सूर सोम हरि होइ।
पुष्कर तीरथ सों कहैं पंकज सों सब लोइ ॥४५॥

'शुचि' श्वेत को भी कहते हैं और 'अग्नि' को भी। पहला अर्थ श्वेत रंग का सूचक है और दूसरा लाल रंग का। इसी तरह 'हरि' शब्द के भी दो अर्थ होते हैं-सूर्य तथा चन्द्रमा। सूर्य लाल रंग के सूचक हैं

और चन्द्रमा श्वेत रग के माने जाते हैं। 'पुष्कर' तीर्थ जल से भी कहते हैं और 'लाल कमल' से भी। पहला श्वेत रग का माना जाता है तथा दूसरा लाल रंग का सूचक है।

'हंस' हसरवि वरणिये, 'अर्क' फटिक रवि मानि।
'अब्ज' शख सरसिज दुवौ, कमलकमलजलजानि ॥४६॥

'हस' शब्द के 'हस पक्षी' और 'सूर्य' दोनों अर्थ माने जाते हैं। 'हस' श्वेत रग का बोधक है और सूर्य' लाल रंग के सूचक हैं। 'अर्क' शब्द के 'स्फटिक' और 'सूर्य' दोनों अर्थों में स्फटिक से श्वेत रग माना जायगा और 'सूर्य' से लाल रग। 'अब्ज' शब्द के 'कमल' और 'शंख' दो अर्थ हैं। कमल लाल रंग का सूचक है तथा 'शख' श्वेत रग का। इसीप्रकार 'कमल' शब्द से 'कमल' और 'जल' अर्थ सूचित होते हैं। 'कमल लाल माना जाता है और 'जल' श्वेत समझा जाता है

'कृष्ण नदीवर' शब्द से 'गगा' और 'समुद्र' दो अर्थ निकलते हैं। पहले अर्थ से श्वेत रग और दूसरे से काला मानना चाहिए। इसी प्रकार 'नीरद 'मुँह से निकले हुए दाँत' और 'बादल' दोनों को कहते हैं। पहला श्वेत रग का सूचक हैं और दूसरा काले रग का'।

(ख) श्वेत और पीत

शिव विरचिसों 'शभु' भणि, रजतरजत अरु हेम।
स्वर्ण शरभ सों कहत हैं अष्टापद करि नेम ॥४३॥

'शभु' शब्द से शिवजी और ब्रह्माजी दोनों माने जाते हैं। जब 'शिवजी' अर्थ होगा तब श्वेत रग माना जायगा और जब 'ब्रह्मा' अर्थ होगा तब पीला। इसी प्रकार 'रजत' शब्द 'चाँदी' के अर्थ में श्वेत और 'सोने' अर्थ में पीला मानिए। 'अष्टापद' सोने और शरभ नामक जतु को कहते हैं। पहले अर्थ मे पीला और दूसरे अर्थ में श्वेत रग मानना चाहिए।

सोम स्वर्ण अरु चद कलधौत रजत अरु हेम।
तारकूट रूपो रुचिर पीतरि कहि करि प्रेम ॥४४॥

सोम 'शब्द 'सोना' और चन्द्रमा' दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। सोना पीला समझिए और चन्द्रमा श्वेत। 'कलधौत' शब्द के दो अर्थों मे से चाँदी को श्वेत और सोने को पीला मानिए। 'तारकूट' के दो अर्थ 'चाँदी' तथा 'पीतल' में से चाँदी श्वेत रग की सूचक मानी जायगी और 'पीतल' पीले रग की।

(ग) श्वेत और लाल

श्वेतवस्तु शुचि आगनि शुचि, सूर सोम हरि होइ।
पुष्कर तीरथ सों कहैं पकज सों सब लोइ ॥४५॥

'शुचि' श्वेत को भी कहते हैं और 'अग्नि' को भी। पहला अर्थ श्वेत रग का सूचक है और दूसरा लाल रग का। इसी तरह 'हरि' शब्द के भी दो अर्थ होते हैं-सूर्य तथा चन्द्रमा। सूर्य लाल रग के सूचक हैं

श्रोर चन्द्रमा श्वेत रग के माने जाते हैं। 'पुष्कर' तीर्थ जल से भी कहते हैं श्रौर 'लाल कमल' से भी। पहला श्वेत रग का माना जाता है तथा दूसरा लाल रग का सूचक है।

'हंस' हसरवि वरणिये, 'श्रर्क' फटिक रवि मानि।
'श्रब्ज' शख सरसिज दुवौ, कमलकमलजलजानि ॥४६॥

'हस' शब्द के 'हस पक्षी' श्रौर 'सूर्य' दोनों श्रर्थ माने जाते हैं। 'हस' श्वेत रग का बोधक है श्रौर सूर्य' लाल रंग के सूचक हैं। 'श्रर्क' शब्द के 'स्फटिक' श्रौर 'सूर्य' दोनों श्रर्थों में स्फटिक से श्वेत रग माना जायगा श्रौर 'सूर्य' से लाल रंग। 'श्रब्ज' शब्द के 'कमल' श्रौर 'शख' दो श्रर्थ हैं। कमल लाल रग का सूचक है तथा 'शंख' श्वेत रग का। इसीप्रकार 'कमल' शब्द से 'कमल' श्रौर 'जल' श्रर्थ सूचित होते हैं। 'कमल लाल माना जाता है श्रौर 'जल' श्वेत समझा जाता है

छठां-प्रभाव

वर्ण्य वर्णन ।

संपूरण, आवरत औ कुटिल त्रिकोण सुवृत्त ।
तीक्षण गुरु कोमल, कठिन, निश्चल, चचलचित्त ॥१॥
सुखद दुखद, अरु मदगति, शीतल तप्त सुरूप ।
क्रूरस्वर सुस्वर, मधुर, अबल बलिष्ठ अनूप ॥२॥
सत्य, झूठ मण्डलवरणि, अगति, सदागति दानि ।
अष्टविंशांवधि मैं कह, वर्ण्य अनेक बखानि ॥३॥

सम्पूर्ण, आवर्त्त, कुटिल, त्रिकोण, सुवृत्त, तीक्ष्ण, गुरु, कोमल, कठोर, निश्चल, चंचल, सुखद, दुखद, मदगति, शीतल, तप्त, सुरूप, क्रूरस्वर, सुस्वर, मधुर, अबल, वलिष्ठ, सत्य, झूठ, मडल, अगति, सदागति और दानी ये २८ प्रकार के वर्ण्यालकार मैंने वर्णन किये हैं। इनके अतिरिक्त और भी बहुत से भेद हो सकते हैं

१—सपूर्णवर्णन ।

इतने सपूरण सदा बरणे केशवदास ।
अबुज, आनन, आरसी, सतत प्रेम, प्रकास ॥४॥

'केशवदास' कहते हैं कि अबुज, आनन (मुख), आरसी (दर्पण) प्रेम और प्रकाश को सदा सम्पूर्ण मान कर वर्णन किया जाता है।

उदाहरण

कवित्त

हरिकर मडन मकल दुख खडन,
मुकुट महि मंडल के कहत अखडगति ।
परम सुवास, पुनि पियूष नवास परि,
पूरन प्रकास केशौदास भू-अकासगति ।

वदन मदन कैसो श्रीजू के सदन शुभ,
सोदर शुभोदर दिनेश जू के मित्र अति।
सीताजू को मुख सुखमा की उपमा को सखि,
कोमल, कमल नहिं अमल रजनिपति ॥५॥

'केशवदास' कहते हैं कि कमल श्री विष्णु के हाथ की शोभा है, सभी दुःखों को दूर करने वाला है—इस बात को पृथ्वीभर के विद्वान कहते हैं। उसमे परम सुगन्ध है, उसमें अमृत जैसे मकरन्द का निवास है और वह पृथ्वी तथा आकाश सभी स्थानों मे मिलता है। उसका मुख कामदेव जैसा है, शोभा का घर है, उसका सगा भाई शुभोदर (शख) सूर्य का परम मित्र है। इसीप्रकार चन्द्रमा भी सूर्य की किरणों से सुशोभित है, सकल अर्थात् कलाओं से युक्त और दुखो को दूर करने वाला है, और विद्वान कहते हैं कि वह दर्पण की भाँति स्वच्छ है। परम (आकाश) में उसका सुन्दर निवास है, अमृत का घर है, पूर्ण प्रकाश वाला है और पृथ्वी तथा आकाश सब स्थानों में उसकी गति है। वह काम के मुख जैसा सुन्दर है, शोभा का घर है, शुभोदर अर्थात् शंख का सगा भाई और सूर्य का परम मित्र है। हे सखी! इतने गुण होने पर भी सीताजी के मुख की उपमा के योग्य न तो कमल है और न चन्द्रमा; क्योंकि इनमें कमल उनके मुख की कोमलता को नहीं पा सकता और चन्द्रमा अमल अर्थात् निर्मल न होने के कारण उनके मुख की निष्कलकता को नहीं पहुँचता।

७ आवर्त्त

ये आवर्त बखानिये केशवदास सुजान।
चकरी, चक्र अलात पुनि, आतपत्र खरसान ॥६॥

'केशवदास' कहते हैं कि चकरी (चक्की), चक्र (सुदर्शन चक्र तथा कुम्हार का चाक), अलात (बनेठी), आतपत्र (छाता) और खरसान (सान रखने का पहिया) ये आवर्त्त अर्थात् चक्कर लगाकर अपनी जगह आजानेवाले कहलाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

दुहूँ रुख मुख मानौ, पलट न जानी जात,
देखिकै अलात जात जाति होति मंद लाजि।
'केशौदास' कुशल कुलाल चक्र चक्रमन,
चातुरी चितै कै चारु चातुरी चलत भाजि।
चंद जू के चहू कोद वेष परिवेष कैसो
देखत ही रहिए न कहिए वचन साजि।
धाप छाँड़ि आपनिधि जानि दिशि दिशि रघु
नाथ जू के छत्र तर भ्रमत भ्रमीन बाजि ॥७॥

श्री रामचन्द्र जी का भ्रमणकारी घोड़ा दौड़ने का मैदान छोड़कर तथा चारों ओर समुद्र ही समुद्र समझता हुआ उन्हीं के छत्र के नीचे चक्कर काट रहा है। मानो उसके मुख का रुख दोनों ओर है, उसकी पलट ज्ञात ही नहीं होती अर्थात् इतनी शीघ्रता से पलट जाता है कि ज्ञात ही नहीं होता कि कब पलट गया। उसे देखकर बनेठी की ज्योति भी लज्जित होकर मंद पड़ जाती है। 'केशवदास' कहते हैं कि उसके भ्रमण की चतुरता को देखकर कुम्हार के चाक के घूमने की शीघ्रता भाग जाती है। चन्द्रमा के चारों ओर होने वाले परिवेष (घेरा) की भाँति उसे देखते ही रह जाना पड़ता है; कुछ कहा नहीं जाता।

३—कुटिलवर्णन

दोहा

अलक, अलिक, भ्रुकुंचिका किंशुक, शुकमुख लेखि।
अहि, कटाच्छ, धनु, वीजुरी, ककनभम्र विशेखि ॥८॥
माल, चंद्रिका, बालशशि, हरि, नख शूकरदंत।
कुद्दालादिक वरणिये, कपटी कुटिल अनंत ॥९॥

अलक (लटें) अलिक (ललाट), भ्रू (भौं) कुंचिका (बाम की टहनी), किंशुक, शुकमुख (तोते का मुख) अहि (साँप), कटाक्ष (तिरछी दृष्टि), धनु (धनुष), बीजुरी (बिजली), ककन भग्न (कङ्कण का टूटा हुआ टुकड़ा), बाल (घुंघराले), चंद्रिका (एकगहना), बाल शशि (द्वितीया का चन्द्रमा) हरिनख (सिंह का नख), सूकर दंत (सुअर का दांत) और कुद्दाल (कुल्हाड़ी) आदि की भाँति अनन्त वस्तुएँ कुटिल कही गई हैं। उदाहरण।

सवैया

भोर जगी वृषभानुसुता, अलसी विलसीनिशि कुंजविहारी।
केशव पोंछति अंचलछोरनि पीक सुलीक गई मिटिकारी॥
वकलगे कुचबीच नखक्षत देखिभई दृग दूनी लजारी।
मानौ वियोगवराह हन्यो युग शैलकी संधिमे इंगवैडारी॥१०॥

श्री कुंजविहारी (श्रीकृष्ण) के रात के विलास के पश्चात् वृषभान सुता (राधा) आलस्य में भरी हुई प्रातः काल जगी है। 'केशवदास' कहते हैं कि वह पान की पीक और काजल की रेखा को अपने आँचल से पोंछने लगी जिससे काजल की काली रेखा भी मिट गई। परन्तु कुचों के बीच जो नखक्षत (नख का लगा हुआ चिन्ह) लगा हुआ था उसे आँखों से देखकर दूनी लज्जित होने लगी। वह नखक्षत ऐसा ज्ञात होता था। मानो वियोग रूपी वाराह (शूकर) ने दो पहाड़ों की सन्धि में प्रहार किया था, सो उसका एक दाँत पड़ा हुआ रह गया है।

९—त्रिकोणवर्णन

दोहा

शकट, सिंघारो, वज्र, हर, हरके नैन निहारि।
केशवदास त्रिकोणमहि, पावककुण्ड विचारि॥११॥

'केशवदास' कहते हैं कि शकट (छकड़ा गाड़ी), सिंघाड़ा, वज्र, हल, श्रीमहादेव जी के नेत्र और अग्नि कुण्ड—ये इस पृथ्वी में (संसार में) त्रिकोण माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

लोचन त्रिलोचन को केशव विलोकि विधि,
पावक के कुंड सी त्रिकोण कीन्ही धरणी।
सोधीहै सुधारि पृथु परम पुनीत नृप,
करि करि पूरण दसहुँ दिस वरणी।
ज्वाला सो जगत जगमगत सुभग मेरु,
जाकी ज्योति ह्वाति लोक लोक मन हरणी।
थिर चर जीव हवि होमियत युग-युग,
होता होत काल न जुगुति जात वरणी ॥१२॥

'केशवदास' कहते हैं कि श्रीशिव जी के तीनों नेत्र देखकर श्रीब्रह्माजी ने 'अग्निकुंड' जैसी तिकोनी भारतभूमि बनाई। उस पृथ्वी को परम पवित्र राजा पृथु ने अपनी करनी से सुधारा। उसमें सुमेरु पर्वत की लोक लोकान्तरों का मन हरने वाली ज्योति बनाई है। पृथ्वी रूपी इस हविकुंड मेयुग युगान्तरो से चर अचर जीव होता काला के द्वारा होमे जा रहे हैं, कुछ कहा नहीं जा सकता।

५—सुवृत्तवर्णन

दोहा

वृत्त, बेल भनि गुच्छ अरु, ककुदकध रथअंग।
कुंभि-कुंभ, कुच, अंड, भनि, कंदुक, कलश सुरंग॥ ॥१३॥

बेल, गुच्छा, बैल के कंधे का ऊपरी भाग, रथ के अंग, हाथी के मस्तक के ऊपरी गोल भाग, कुच, अंडा, गेंद, और कलश ये वृत्त (गोल) कहे जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

परम प्रबीन अति कोमल कृपालु तेरे,
उरन उदित नित चित हितकारी है।
'केशोराय' कीसों अति सुन्दर उदार शुभ,
सलज, सुशील विधि सूरति सुधारी है।
काहूसों न जानैं, हँसि बोलि न विलोकि जानैं,
कंचुकी सहित साधु सूधी वेषधारी है।
ऐसे हौं कुचनि सकुचनि न सकति बूझि,
परहिय हरनि प्रकृति कौने पारी है॥१४॥

एक सखी अपनी सखी से कहती है कि ये कुच तेरे परम चतुर कोमल तथा उदार हृदय से उत्पन्न हुए हैं और चित्त के हितकारी हैं। 'केशवराय' (ईश्वर) की सौगन्ध ये बहुत ही सुन्दर, उदार, शुभ, लज्जाशील और सुशील हैं। इनकी सूरत श्रीब्रह्मा जी ने ही सुधारी है। ये बेचारे न तो किसी से हँस कर बोलना जानते हैं और न किसी की ओर देखना ही जानते हैं और कंचुकी पहने हुए साधु वेश में रहते हैं। ऐसे कुचों को देखकर मारे संकोच के मैं पूछ नहीं सकती कि 'दूसरे के मन को हरने का स्वभाव इनमें किसने डाल दिया है?।'

६, ७ तीक्ष्ण और गुरुवर्णन

दोहा

नख, कटाक्ष, शर, दुर्वचन, सेलादिक खर जानि।
कुच, नितम्ब, गुण, लाज, मन, रति अति गुरु करि मानि॥१५॥

नख, कटाक्ष, वाण और शेलादि (छुरी, कटारी इत्यादि) अस्त्र) खर (तीक्ष्ण) मानिए और कुच, नितम्ब, गुण, लज्जा, मति और रति को गुरु समझिए।

उदाहरण (१)
(तीक्ष्ण)
कवित्त

सैं हथी हथ्यार हू ते अति अनियारे, काम;
शर हू त खरे खल वचन विशेखिये।
चोट न वचत ओट किये हू कपाट कोट,
भौन भौंहरे हू मारे भय अपरेखिये।
'केशौदास' मत्र, गद, यंत्रऊ न प्रतिपच्छ,
रच्छ, लच्छ-लच्छ वज्र रच्छक न लेखिये।
भेदत हैं मर्म, वर्म, ऊपर कसेई रहैं,
पीर घनी, घायलन घाय पै न देखिये ॥१६॥

खलों के वचन काम के वाणों से भी तीक्ष्ण हैं। ये बरछी और दूसरे हथियारों से भी अधिक नुकीले हैं। किवाड़ों की ओट करने पर भी इनसे कोई बच नहीं पाता। घर तथा तहखाने में रहने पर भी इनसे बड़ा भारी डर लगा रहता है। 'केशवदास' कहते हैं कि इन पर मत्र, गद (मरहम, लेप), और यत्र भी कुछ काम नहीं करते और लाखों वज्र और रक्षक भी इनसे नहीं बच पाते। ऊपर वर्म (कवच) के कसे रहने पर भी मर्म स्थल वेध डालते हैं। गहरी चोट पहुँचाते हैं परन्तु घाव नहीं दिखलाई पड़ता

उदाहरण (२)
(गुरु)
सवैया

पहिले तजि आरस आरसी देखि, घरीक घसे घनसारहि लै।
पुनि पोंछि गुलाब तिलोछि फुलेल अँगौछनि आछे अँगौछनि कै॥
कहि केशव मेद जवादिसो मांजि, इतेपर आंजे में आजन दै।
बहुरयो दुरि देखों तो देखौं कहा, सखि लाज तौ लोचन लागिये है ॥१७॥

पहले आलस्य छोड़कर दर्पण देखा; फिर एक घड़ी तक कपूर लेकर घिसा। फिर गुलाब जल से धोकर और फुलेल (इत्र) मलकर अगोछे से भलीभाँति पोंछ डाला। 'केशव' कहते हैं कि कस्तूरी जुवाद आदि से माज कर आँखों में अंजन दिया। हे सखि! इतना करने पर भी (नायक को) जो छिपकर देखा तो देखती क्या हूँ कि लज्जा तो आँखों में ज्यों की त्यों लगी ही हुई है।

८—कोमलवर्णन

दोहा

पल्लव, कुसुम, दयालु-मन, माखन, मैन, मुरार।
पाट पामरी, जीभ, पद प्रेम, सुपुण्य विचार ॥१८॥

पल्लव, कुसुम, दयालुमन, मक्खन, मैन (मोम), मुरार (कमल की जड़), पाट (रेशम), पामरी (रेशमी वस्त्र), जीभ, पद, प्रेम और पुण्य कोमल माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

मैन ऐसो मन मृदु, मृदुलमृणालिकाके,
सूतकैसी स्वरधुनि मनहि हरति है।
दारयो कैसे बीज दाँत पातसे अरुण ओंठ,
केशौदास देखि दृग आनँद भरति हैं॥
येरी बीर तेरी मोहि भावत भलाई ताते,
बूझतिहौं तोहि और बूझति डरति है।
माखनसी जीभ मुखकंजसो कोंवर कहि,
काठसी कठेठी बातैं कैसे निकरति हैं ॥१९॥

तेरा मन मोम जैसा कोमल है, मृणाल के सूत जैसी कोमल तेरी स्वर-ध्वनि मन को हरनेवाली है। अनार के बीज जैसे तेरे दाँत हैं, पल्लव जैसे लाल ओठ और (केशवदास-सखी की ओर से कहते हैं कि) तेरी

आँखें देखते ही आनन्द भर देती हैं। हे मेरी सखी! मुझे तेरी भलाई अच्छी लगती है, इसीलिए मैं तुझसे पूछती हूँ, परन्तु पूछते हुए डरती हूँ। तेरी मक्खन सी कोमल जीभ और तेरे कमल से कोमल मुख से, बतला, काठ जैसी कठोर बातें कैसे निकलती हैं?"

९—कठोरवर्णन

दोहा

कुच कठोर भुजमूल, मणि, वरणि वज्र, कहि मित्त।
धातु, हाड़, हीरा, हिया, विरहीजनके चित्त॥२०॥
शूरनके तन, सूम मन, काठ, कमठकी पीठि।
'केशव' सूखो चर्म, अरु, शठहठ, दुर्जन-दीठि॥२१॥

केशवदास कहते हैं कि हे मित्र! कुच, भुजमूल (भुजदण्ड), सब प्रकार की मणियाँ, वज्र, सब प्रकार की धातुएं, हाड़, हीरा, वियोगियों के हृदय और मन, वीरों का शरीर, सूम या कजूस का मन, काठ, कमठ, या कछुए की पीठ, सूखा चमड़ा, दुष्टों का हठ, और दुर्जनों की दृष्टि इन्हें कठोर कहा जाता है।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' दीरघ उसासनि की सदागति,
आयुको अकाश है, प्रकाश पाप भोगीको।
देह जात, जातरूप हाड़निको पूरो रूप,
रूप को कुरूप विधु वासर सँयोगी को।
बुद्धिन की बीजुरी है, नैननिको धाराधर
छातीको घरघार तनघाइत प्रयोगीको।
उदरको बाड़वा अगिन गेह, मानतहौं,
जानतहौं हीरा हियो काहू पुत्रशोगीको॥२२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो पुरुष पुत्र-शोकी होता है, उसके लिए दीर्घ निःश्वास ही पवन है। वह आयु के लिए आकाश अर्थात् शून्य हो जाता है अर्थात् मृत तुल्य बन जाता है और (जितने दिन जीता है, उतने दिनों तक) पाप के प्रकाश सदृश रहता है। उसके शरीर की शक्ति जाती-रहती है, रूप भी लुप्त हो जाता है और वह हाड़ों का पूरा रूप (ठठरी मात्र) बन जाता है। उसका रूप (सौंदर्य) ऐसा निष्फल हो जाता है जैसे दिन का चन्द्रमा ज्योतिहीन हो जाता है। उसकी बुद्धि पर बिजली पड़ जाती है अथवा बिजली जैसी चंचल हो जाती है और नेत्र बादल बन जाते हैं (आँसू बहाते रहते हैं)। उसकी छाती घड़ियाल बन जाती है अर्थात् जैसे घड़ियाल पीटा जाता है, वैसे वह भी अपनी छाती पीटता रहता है। उसका शरीर घावों का प्रयोगी हो जाता है अर्थात् मानों घावों के लिए ही बना होता है। उसका उदर मैं बड़वानल का घर मानता हूँ और हृदय को वज्र समझता हूँ।

१०—निश्चलवर्णन

दोहा

सती, समर भट, संतमन, धर्म, अधर्म निमित्त।
जहाँ तहाँ ये बरणिये, केशव निश्चल चित्त ॥२३॥

'केशवदास' कहते हैं कि सती, भट, सतमन, धर्म और अधर्म के कारणों का जहाँ जहाँ वर्णन किया जायगा, वहाँ-वहाँ इनके चित्त को निश्चल ही कहना चाहिए।

उदाहरण

सवैया

काय मनो वच काम न लोभ न छोभ नमोहैं महाभजेता।
केशव बाल बयक्रम वृद्ध बिपत्तिनहूँ अति धीरज चेता॥
है कलिमें करुणा वरुणालय, कौन गनै कृत द्वापर त्रेता।
येई तौ सूरजमंडल बेधत, सूर सती अरु ऊरधरेता ॥२४॥

केशवदास' कहते हैं कि पंडित और बुद्धिमान् पुत्र, पति-प्रेम परायणा स्त्री, सब गुणों का ज्ञान, सब लोगों से मान-प्राप्ति, दान देना, हृदय मे दया धारण करना रोगों से वियोग, भोगों से सयोग, सत्य कहना, ससार में यश प्राप्ति और युक्ति-ये वस्तुए सुख देनेवाली होती हैं यह बात चारों वेद में कही गई है।

१३-दुखदवर्णन

दोहा

पाप पराजय, झूठ, हठ, शठता, मूरख मित्त।
ब्राह्मण नेगी, रूप विन, असहनशीलचरित्त ॥३१॥
आधि, व्याधि, अपमान, ऋण; परघर भोजन बास।
कन्या सतति, वृद्धता, वरषाकाल प्रवास ॥३२॥
कुजन, कुस्वामी, कुगति हय, कुपुरनिवास कुनारि।
परवश, दारिद, आदिदै, अरि, दुखदानि विचारि ॥३३॥

पाप, पराजय (हार), झूठ, हठ शठता, मूर्ख मित्र, नेगी ब्राह्मण कुरूपता, असहनशील चरित्र, आधि (मानसिक रोग), व्याधि (शारीरिक रोग), अपमान, ऋण, दूसरे घर में भोजन तथा वास, कन्या सन्तान, बुढापा, वर्षा काल मे विदेश में रहना, बुरा या दुष्ट मनुष्य बुरास्वामी, बुरी चाल का घोड़ा, बुरे नगर में रहना, बुरी स्त्री, पराधीनता, दरिद्रता और वैर आदिकों को दुःख देनेवाला समझिए।

उदाहरण

कवित्त

वाहन कुचाल, चोर चाकर, चपल चित,
मित्त मतिहीन, सूम स्वामी -उर आनिये।
परघर भोजन निवास, वास कुपुरन,
'केशौदास' वरषा प्रवास दुख दानिये।

पापिन को अंग संग, अंगना अनंग बस,
अपयश युत सुत, चित हित हानिये।
मूढ़ता, बुढ़ाई, व्याधि, दारिद, झुठाई, आधि,
यह ही नरक नर लोकन बखानिये।।३४।।

'केशवदास' कहते हैं कि बुरीचाल की सवारी (घोड़ा आदि) चोर सेवक, चंचल चित्त, मूर्ख मित्र, सूम स्वामी दूसरे के घर भोजन तथा निवास, बुरे गाँव में वास, वर्षा में विदेश में रहना पापियों का साथ, काम वश स्त्री, अपकीर्ति देनेवाला पुत्र, मन-चाही वस्तु की हानि मूर्खता, बुढ़ापा, शारीरिक रोग, दरिद्रता, झूठ और मानसिक रोग इन्हीं को इस नर-लोक (संसार) का नरक बतलाया गया है। अर्थात् ये नरक जैसी दुखदायी होती हैं।

१४—मंदगतिवर्णन

दोहा

कुलतिय, हासविलास, बुध, काम, क्रोध, मन मानि।
शनि, गुरु, सारस, हंस, गज, तियगति, मंद बखानि।।३५।।

कुलवती स्त्री, हास-विलास, बुद्धिमान, काम, क्रोध, शनि, बृहस्पति सारस पक्षी, हंस, हाथी और स्त्री की चाल-इन्हें मंदगति कहा गया है।

उदाहरण

कवित्त

कोमल विमल मन, विमला सी सखी साथ,
कमला ज्यों लीन्हे हाथ कमल सनाल को।
नूपुर की धुनि सुनि, भौंरें कल हंसनि के,
चौंकि चौंकि परैं चारु चेटुवा मराल को।
कंचन के भार, कुच भारन, सकुच भार,
लचकि लचकि जाति कटि-तट बाल को।
हरें हरें बोलति विलोकति हँसति हरें,
हरें हरें चलति हरति मन लाल को।।३६।।

जिसका कोमल और निर्मल मन है, सरस्वती जैसी सखी जिसके साथ है, और जो हाथ में सनाल कमल लिए हुए लक्ष्मी जैसी प्रतीत होती है। जिसके बिछुओं की ध्वनि सुनकर, हसों के धोखे में, हसों के बच्चे चौंक चौंक पड़ते हैं, जिसकी कमर बाल, कुच, तथा सकोच के भार से झुकी जाती है, वह बाला धीरे-धीरे बोलती, देखती और हसती है तथा धीरे-धीरे चलती हुई लाल (नायक) का मन हरती है।

१५—शीतलवर्णन

दोहा

मलयज, दाख कलिंद, सुख, ओरे, मिश्री, नीर।
प्रियसंगम, घनसार, शशि, जल, जलरुह हिमि, शीत ॥३७॥

चदन, दाख (किसमिस) कलिंद (तरबूज) सुख ओला, मिश्री प्रिय-सगम, कपूर, चन्द्रमा, जल, में उत्पन्न होनेवाली वस्तुए, बर्फ तथा शीत शीतल माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

सीतल समीर टारि, चद्र चंद्रिका निवारि,
'केशौदास' ऐसे हो तो हरषु हिरातु है।
फूलन फैलाय डारि, झार डारि घनसार,
चन्दनं को टारि चित्त चौगुना पिरातु है।
नीर हीन मीन मुरझानी, जीवै नीर ही पै,
छीर के छिरीके कहा धीरजु धिरातु है।
पाई है तैं पोर किधौं यो हीं उपचार करै,
आग को तो दाध्यो अंग आगिही सिरातु है ॥३८॥'

('केशवदास' एक सखी की ओर से जो अपनी सखी के शीतल उपचार में लगी है, कहते है, कि) हे सखी। इस ठडी वायु को हटा और चन्द्रमा की चाँदनी भी दूर कर, क्योंकि इन्हीं में तो मेरा आनन्द

लुप्त हो जाता है। फूलों को फेंक दे, कपूर को झाड़ कर अलग कर दे और चन्दन को हटा दे, क्योंकि इनसे मेरा मन चौगुना पीड़ित होता है। पानी के बिना मुरझाई हुई मछली पानी ही से जीवित होती है, कहीं दूध छिड़कने से उसे धीरज आ सकता है? तुझे कभी ऐसी पीड़ा हुई भी है या तू यों ही उपचार कर रही है? जानती नहीं कि आग का जला हुआ अंग आग ही से शीतल होता है।

१६—तप्तवर्णन

दोहा

रिपुप्रताप, दुर्वचन, तप, तप्त विरह, संताप।
सूरज, आगि, बजागि, दुख, तृष्णा, पाप, विलाप ॥३६॥

वैरी का प्रताप, दुर्वचन, तप, विरह, संताप, सूर्य, अग्नि, वज्राग्नि, दुख, तृष्णा, पाप, और विलाप-तप्त माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' नींद, भूख, प्यास, उपहास, त्रास,
दुख का निवास विष मुखहू गह्यो परै।
वायु को वहन, वनदावा को दहन, बड़ा,
बाडवा अनल ज्वाल जाल में रह्यो परै।
जोरन जनम जात जोर जुर घोर, परि-
पूरण प्रगट परिताप क्यों कह्यो परै।
सहिहौं तपन ताप, पर को प्रताप रघु,
वीर को विरह वीर मोपै न सह्यो परै ॥४०॥

'केशवदास' कहते हैं कि श्री सीता जी श्री हनुमान जी से कह रही हैं कि-मैं नींद, भूख, प्यास और उपहास का भय, सह सकती हूँ तथा परम दुखदायी विष भी मुँह में डाल सकती हूँ। मैं आँधी के झोंके और दावाग्नि की जलन भी सह सकती हूँ और बड़वानल की ज्वालाओं के

बीच रह भी सकती हूँ। मैं जन्मभर रहने वाला घोर ज्वर-जिसके पूर्ण परिताप का वर्णन नहीं किया जा सकता-सह सकती हूँ। मैं सूर्य की गर्मी तथा शत्रु का परिताप भी-सह सकती हूँ, परन्तु मुझसे श्री रघुनाथ जी के विरह का संताप नहीं सहा ज ता।

१७—सुरूपवर्णन

दोहा

नल, नलकूवर, सुरभिषक, हरिसुत, मदन, निहारि।
दमयती, सीतादि तिय, सुंदर रूप विचारि ॥४१॥

नल, नलकूवर (कुवेर का एक पुत्र), सुरभिषक (देवताओं के वैद्य) हरिसुत (श्रीकृष्ण के पुत्र-प्रद्युम्न), मदन (कामदेव) और दमयन्ती तथा श्री सीता आदि स्त्रियाँ सुन्दर माने जाते है।

उदाहरण

कवित्त

को है दमयती, इन्दुमती, रति, राति दिन,
होहिं न छबीली, छन-छवि जो सिंगारिये।
वदन निरूपन निरूपम निरूप भये,
चन्द बहुरूप अनुरूप कै विचारिये।
'केशव' लजात जलजात, जातवेद ओप,
जातरूप बापुरो, विरूप सो निहारिये।
सीता जीके रूप पर देवता कुरूप को हैं,
रूपही के रूपक तौ बारि बारि डारिये ॥४२॥

श्री सीता जी के रूप के सामने दमयन्ती, इन्दुमती और रति क्या हैं। यदि उन्हें बिजली की शोभा से रात दिन सजाया जाय तो भी वे वैसी सुन्दर न होंगी। 'केशवदास' कहते हैं कि उनकी सुन्दरता से कमल लज्जित हो जाता है, अग्नि की चमक छिप जाती है और बेचारा सोना तो कुरूप सा दिखलाई पड़ता है चन्द्रमा बहुत से रूप रखने वाले बहुरूपिया के समान ही जान पड़ता है।। श्री सीता जी के रूप के आगे देव-

ताओं की कुरूप स्त्रियाँ क्या हैं ? उनकी सुन्दरता पर तो सौंदर्य की सभी उपमाएँ निछावर कर देनी चाहिए।

१८—क्रूरस्वरवर्णन

दोहा

झींगुर, सांप, उलूक अज, महिषी, कोल, बखानि।
भेडि, काक, वृक, करभ, खर, श्वान, क्रूर-स्वर जानि।

झींगुर, साप, उल्लू, बकरा, भैंस, सूअर, भेड़, कौआ, वृक, (भेड़िया) ऊँट, गदहा, और कुत्ता, क्रूर-स्वर वाले समझो।

उदाहरण

कवित्त

भिल्ली ते रसीली जीली, रांटी हू की रट लीली,
स्यारि ते सवाई भूत भामिनी ते आगरी।
'केशौदास' भैंसन की भामिनी ते भासै भास,
खरी ते खरीसी धुनि ऊँटी ते उजागरी।
भेंडनि की मीड़ी मेड, ऐंड़ न्यौरा नारिन की,
बोकी हूं ते बाँकी, बानी काकन की कागरी।
सूकरी सकुचि, सकि कूकरियो मूक भई,
घूघू की घरनि को है, मोहै नाग नागरी ॥४४॥

किसी कठोरवाणीवाली स्त्री का वर्णन करते हुए 'केशवदास' व्यग्यपूर्वक कहते हैं कि उसकी वाणी झिल्ली से भी बढ़कर रसीली और महीन है। उसने टिटहरी की रटन को भी निगल लिया है। उसकी वाणी स्यारिनी की वाणी से सवाई है और भूतिनी की बोली से बढ़कर है। उसकी बोली भैंस से भी अच्छी, गधी से भी तेज, और ऊँटनी से भी स्पष्ट है। उसकी बोली ने भेड़ी की बोली की मर्यादा तोड़ दी है और नकुली की बोली का अभिमान तोड़ डाला है। उसकी वाणी बकरी की भाषा से भी सुन्दर है और कौए की का (काँव, काँव) तो उसकी बोली के आगे गल ही गई है। उसकी बोली के आगे शूकरी सकुचित और कुतिया चुप हो गई है। उल्लू की बोली उसकी बोली के आगे क्या है; उसकी वाणी को सुनकर हथिनी भी मोहित हो जाती है।

१९—सुस्वरवर्णन

दोहा

कलरव, केकी, कोकिला, शुक, सारो, कलहंस।
तंत्री कंठनि आदि दै, शुभसुर दुंदुभिवंस ॥४५॥

कबूतर, मोर, कोयल, तोता, मैना, हंस, वीणा आदि तारवाले बाजे, दुदुंभी (एक बाजा) और बांसुरी सुन्दर स्वरवाले माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

केकिन की केका सुनि, काके न मथित मन,
मनमथ मनोरथ रथपथ सोहिये।
कोकिला की काकलीन, कलित ललित बाग,
देखत न अनुराग उर अवरोहिये।
कोकन की कारिका, कहत शुक सारिकानि,
'केशौदास' नारिका कुमारिका हू मोहिये।
हंसमाला बोलत ही, मान की उतारि माल;
बोले नन्दलाल सों न ऐसी बाल को हिये ॥४६॥

(केशवदास किसी नायिका की ओर से कहते हैं कि) वर्षा में मोरों की ध्वनि सुनकर किसका मन मथित (चंचल) नहीं हो जाता। मोरों की वह ध्वनि काम के मनोरथों के रथ के लिए पथ (मार्ग) स्वरूप है अर्थात् उसे सुनकर काम वासनाएं चलायमान होती हैं। (वसंत में) जब कोयलों की बोली से उपवन गूंज उठते हैं तब उन्हें देखते ही हृदय में अनुराग बढ़ जाता है। उसी ऋतु में जब तोते और मैना प्रेम की बातें करते हैं, तब स्त्री तो क्या, कुमारी कन्याएं तक मोहित हो जाती हैं। (पर इस शरदऋतु में) हंसों के बोलते ही अपने मान की माला को उतार कर (मान छोड़कर) नन्दलाल (श्रीकृष्ण) से न बोले, भला ऐसा हृदय किस स्त्री का होगा?

२०—मधुरवर्णन

दोहा

मधुर प्रियाधर, सोमकर, माखन, दाख, समान।
बालक बातैं तोतरी, कविकुल उक्तिप्रमान ॥४७॥
महुवा, मिश्री, दूध, घृत, अति सिंगार रस मिष्ट।
ऊख, महूख, पियूख गनि, केशव साँचे इष्ट ॥४८॥

केशव कहते हैं कि प्रिया के ओठ चन्द्रमा की किरणें, मक्खन, दाख (किसमिस), बालक की तुतली वाणी, कवियों की उक्तियाँ, महुवा मिश्री, दूध, घी, शृंगाररस, ऊख, शहद और अमृत मधुर माने जाते हैं।

उदाहरण

सवैया

खारिक खात न, माखन, दाख न दाड़िमहू सहु मेटि इठाई।
केशव ऊख मयूखहु दूखत, आईहौं तोपहँ छाँडि जिठाई॥
तो रदनच्छदको रसरञ्चक, चाखिगये करि केहूँ ढिठाई।
तादिनते उन राखी उठाइ समेत सुधा वसुधाकी मिठाई ॥४९॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिस दिन से वह तेरे ओठों का धृष्टता-पूर्वक थोड़ा सा रस चख गये हैं उस दिन से वह न तो छुहारा खाते हैं, न मक्खन खाते हैं, और न दाख। अनार की मित्रता भी उन्होंने छोड़ दी है अर्थात् अनार भी रुचिकर नहीं होता। वह ऊख और महुवा की भी निन्दा करते हैं। यह बात मैं तुमसे अपने जेठेपन का ध्यान छोड़कर कहने आई हूँ।

२१—प्रबलवर्णन

दोहा

पंगु, गुंग, रोगी, वणिक, भीत, भूखयुत, जानि।
अंध, अनाथ, अजादि शिशु अबला, अबल बखानि ॥५०॥

संसार को तू ठगना चाहता है, उसके फंदे में स्वयं पड़ जाता है। हे निडर ! इसके (पापके) डर से तू डगभर भी विचलित हो कर नहीं डरता और अन्य सांसारिक डरों से ढोंगी की तरह काँपता रहता है। 'केशवदास' कहते हैं कि तू इस संसार से उदासीन होकर केशव (परमात्मा) को क्यों नहीं भजता और उनसे दूर क्यों भागता है ? श्रीराम की सौगंध, यह सारा संसार झूठा है परन्तु किसी सच्चे का बनाया हुआ है, इसलिए सच्चा प्रतीत होता है।

२५—मंडल वर्णन

केशव कुंडल मुद्रिका, वलया, वलय, बखानि।
आलवाल, परिवेष, रवि, मंडल मंडल जानि ॥५८॥

'केशवदास' कहते हैं कि कुंडल (कान का बाला), मुद्रिका (अंगूठी), वलया (चूड़ी), वलय (कंकण या कड़ा) आलवाल (थाला), परिवेष (सूर्य तथा चन्द्रमा के चारों ओर प्रकाशयुक्त घेरा) और सूर्य मंडल को मंडलकार समझना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

मणिमयं आल वाल जलज जलज रवि,
मंडल में जैसे मति मोहै कवितान की।
जैसे सविशेष परिवेष में अशेष रेख,
शोभित सुवेष सोम सीमा सुख दानिकी।
जैसे चंक लोचनि कलित कर कंकननि,
वलित ललित दुति प्रगट प्रभानि की।
'केशौदास' ऐसे राजैं, रास तैं रसिक लाल,
आस-पास मंडलो विराजै गोपिकान की ॥५९॥

जिस प्रकार मणियों के थाले के बीच कोई पौधा या कमल खड़ा हो जिसे देखकर कवियों की प्रतिभा भी मोहित हो जाती है, जिस प्रकार

'केशवदास' कहते हैं कि चारों वेदों को मन, क्रम, वचन से ध्यान पूर्वक मनन करके देखा तो अदृष्ट अर्थात् भाग्य और हरि (भगवान्) सच्चा पाया और सारा संसार झूठा प्रतीत हुआ।

उदाहरण (१)

सवैया

हाथी न साथी न घोरे न चेरे न, गाउँ न ठाउँ को नाउँ बिलैहै।
तात न मात न पुत्र न मित्र, न वित्त न अंगऊ संग न रैहै।
केशव कामको 'राम' बिसारत और निकाम न कामहिं ऐहै।
चेतुरे चेतु अजौं चितु अंतर अंतकलोक अकेलोहि जैहै ॥७६॥

तेरे साथी ये हाथी-घोड़े और नौकर-चाकर नहीं हैं। न गाँव और ठौर ही तेरा साथ देंगे इनका तो नाम तक लुप्त हो जायगा। पिता, माता, पुत्र, मित्र, और धन में से कोई भी तेरे साथ न रहेगा। 'केशवदास' कहते हैं कि तू काम आनेवाले राम को भूल रहा है, और सब व्यर्थ हैं, तेरे काम न आवेंगे। अब भी मन में सावधान हो जा; क्योंकि यमलोक को तो तुझे अकेला ही जाना पड़ेगा।

उदाहरण (२)

अनही ठीक को ठग, जानै ना कुठौर ठौर,
ताही पै ठगावै ठेलि जाही का ठगतु है।
याके डर तू निडर ! डग न डगत डरि,
डर के डरनि डगि डोंगी ज्यों डगतु है।
ऐसे बसोवास ते उदास होय 'केशौदास',
केशौ न भजत कहि काहे को भगतु है।
झूठो है रे झूठो जग राम की दोहाई, काहू
साँचे को कियो है ताते साँचो सो लगतु है ॥८७॥

तू बेठिकाने का ठग है, ठौर-कुठौर नहीं पहचानता। जिसे हठ पूर्वक ठगना चाहता है, उससे स्वयं ही ठगा जाता है। अर्थात् जिस

ससार को तू ठगना चाहता है, उसके फंदे में स्वयं पड़ जाता है। हे निडर ! इसके (पापके) डर से तू डगभर भी विचलित हो कर नहीं डरता और अन्य सासारिक डरो से डोंगी की तरह काँपता रहता है। 'केशवदास' कहते हैं कि तू इस ससार से उदासीन होकर केशव (परमात्मा) को क्यों नहीं भजता और उनसे दूर क्यों भागता है ! श्रीराम की सौगध, यह सारा ससार झूठा है परन्तु किसी सच्चे का बनाया हुआ है, इसलिए सच्चा प्रतीत होता है।

२५—मंडल वर्णन

केशव कुंडल मुद्रिका, वलया, वलय, बखानि।
आलवाल, परिवेष, रवि, मंडल मंडल जानि ॥५८॥

'केशवदास' कहते हैं कि कुडल (कान का बाला), मुद्रिका (अगूठी), वलया (चूड़ी), वलय (कंकण या कड़ा) आल-वाल (थाला), परिवेष (सूर्य तथा चन्द्रमा के चारों ओर प्रकाशयुक्त घेरा) और सूर्य मडल को मडलकार समझना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

मणिमय आल वाल जलज जलज रवि,
मडल में जैसे मति मोहै कवितान की।
जैसे सविशेष परिवेष में अशेष रेख,
शोभित सुवेष सोम सीमा सुख दानिकी।
जैसे घंक लोचनि कलित कर कंकननि,
वलिन ललित दुति प्रगट प्रभानि की।
'केशौदास' ऐसे राजैं, राम तें रसिक लाल,
आस-पास मंडलो विराजै गोपिकान की ॥५९॥

जिस प्रकार मणियों के थाले के बीच कोई पौधा या कमल खड़ा हो। जिसे देखकर कवियों की प्रतिभा भी मोहित हो जाती है, जिस प्रकार

सुन्दर वेश वाले सुखदायी चन्द्रमा परिवेष (प्रकाश युक्त घेरे) के बीच दिखलायी पड़ते हों, और जिस प्रकार किसी तिरछी दृष्टिवाली स्त्री के हाथों में कंकण पड़ा हो जिसकी द्युति प्रत्यक्षरूप से प्रकाशित हो रही हो, 'केशवदास' कहते हैं कि ठीक उसी प्रकार रसिक लाल (श्रीकृष्ण) रासमंडल में खड़े हुए दिखलायी पड़ते हैं। उनके चारों ओर गोपियों की मंडली सुशोभित हो रही है।

२६, २७ अगति सदागति वर्णन।

अगति सिंधु, गिरि, ताल, तरु, वापी, कूप, बखानि।
महानदी, नद, पंथ, जग, पवन सदागतिजानि ॥६०॥

सिंधु, पहाड़, ताल, पेड़, वापी (बावली) और कुआ आदि को अगति अर्थात् अचल समझो तथा महानदी, नद, पथ, जग और पवन को सदागति (सदैव चलनेवाले) जानो।

उदाहरण
(कवित्त)

पथ न थकत मन मनोरथ रथन के,
'केशौदास' जगमग जैसे गाये गीत में।
पवन विचार चक्र चक्रमन चित्त चढ़ि
भूतल अकाश भ्रमैं धाम जल शीत में।
कोलौं राखौं थिर वपु वापी, कूप, सर, सम,
हरि बिन कीन्हें बहु बासर व्यतीत में।
ज्ञान गिरि कोरि तोरि लाज तरु जाय मिलौं,
आपही ते आपगा ज्यों आपनिधि प्रीत में ॥६१॥

'केशवदास' (किसी स्त्री की ओर से उसकी सखी से कहते हैं कि) मेरे मनोरथों के रथों का पथ कभी रुकता नहीं। अर्थात् मेरे मन में अनेक मनोरथ उठा ही करते हैं और संसार का जैसा नियम है तथा गीताओं (ग्रन्थों में) में भी जैसा कहा गया है, मेरे विचार पवन पर

और मेरा चित्त, दिशाओं के चाक पर चढ कर, घाम, वर्षा और जाड़े का ध्यान न रखते हुए, पृथ्वी से लेकर आकाश तक का चक्कर लगाया करते हैं। मैं अपने शरीर को वापी, कुआ और तालाब आदि की तरह कब तक (स्थिर) रखूँ। इसीलिए मैंने सोचा है कि मैं ज्ञान के पहाड़ को फोड़कर और लज्जा के वृक्ष को तोड़कर उनसे (प्रियतम से) इस तरह जा मिलूं जैसे नदी पहाड़ों और वृक्षों को तोड़ती हुई स्वयं समुद्र में जा मिलती है।

२८ दानि वर्णन

दोहा

गौरि, गिरीश, गणेश, विधि, गिरा, महन को ईश।
चिन्तामणि, सुरवृक्ष, गो, जगमाता, जगदीश ॥६२॥
रामचन्द्र, हरिचन्द, नल, परशुराम दुखहर्ण।
केशवदास, दधीचि, पृथु, बलि, सुविभीषण, कर्ण ॥६३॥
भोज, विक्रमादित्य, नृप, जगद्देव रणधीर।
दानिन हूं के दानि, दिन, इन्द्रजीत बरवीर ॥६४॥

गौरी (श्री पार्वतीजी), गिरीश (श्री शकर जी), श्री गणेश, विधि (श्री ब्रह्मा जी), सूर्यदेव, चन्तामणि, सुरवृक्ष (कल्पवृक्ष), सुरगो (काम धेनु), जगमाता (श्री लक्ष्मीजी), जगदीश (श्री नारायण), श्रीरामचन्द्र, श्रीहरिश्चन्द्र, राजानल, श्री परशुराम, दधीचि, राजापृथु, राजा बलि, विभीषण, करण, राजा भोज, राजा विक्रमादित्य, राजा रणधीर जगद्देव (राजा इन्द्रजीत के बड़े भाई) और दानियों के भी दानी प्रतिदिन दान करनेवाले इन्द्रजीत तथा बीरबल दानी माने जाते हैं।

उदाहरण

गौरी का दान

दोहा

पावक, फनि, विष, भस्म, मुख, हरपवर्गमय मानु।
देत जु हैं अपवर्ग कहँ, पारवतीपति जानु ॥६५॥

पावक, फणि (शेषनाग) विष, भस्म और मुंड धारण करनेवाले शंकरजी को पवर्गमय समझो अर्थात् उनके पास वे ही वस्तुएं हैं जो पवर्ग (प, फ, ब, भ, म) से आरम्भ होती हैं, अतः वह क्या दे सकते हैं। वह जो अपवर्ग अर्थात् मुक्ति देते हैं, सो पार्वती के स्वामी होने के कारण जानो। भाव यह है कि अपवर्ग की देनेवाली वास्तव में पार्वती हैं परन्तु वह स्वयं न देकर अपने पति से दिलवाती हैं।

गणेश जी का दान वर्णन

कवित्त

बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल,
कठिन कराल त्यों अकाल दीह दुख को।
विपति हरत हठि पद्मिनी के पात सम,
पंक ज्यों पताल पेलि पठवै कलुष को।
दूर कै कलंक अंक भव सीस ससि सम,
राखत हैं 'केशौदास' दास के वपुष को।
सांकरे की सांकरन सनमुख होत तोरै,
दसमुख मुख जोवै, गजमुख मुख को ॥२६॥

जिस प्रकार कमल नाल को, हाथी का बच्चा, प्रत्येक दशा में तोड़ डालता है, उसीप्रकार श्रीगणेशजी अकाल के भयंकर दुखों को तोड़ डालते हैं। विपत्तियों को, कमल के पत्ते की भाँति, सरलता पूर्वक तोड़ डालते हैं और पापको, कीचड़ की तरह दबाकर, पाताल में भेज देते हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि वह अपने दास (भक्त) के शरीर से कलंक को दूर करके श्रीशिवजी के मस्तक पर रहनेवाले (कलंक रहित) चन्द्रमा के समान करके उसकी रक्षा किया करते हैं। सामने जाते ही वह विपत्तियों की जंजीर को तोड़ डालते हैं। इसी लिए दशोदिशाओं के लोग श्री गणेश जी का मुख देखा करते हैं।

महादेव जी का दान वर्णन

कवित्त

कांपि उठ्यो आप निधि, तपनहिं ताप चढ़ी,
सीरी ये शरीर गति भई रजनीश की।
अजहूं न ऊंचौ चाहै अनल मलिन मुख,
लागि रही लाज मुख मानो मन बीस की।
छवि सो छबीली, लच्छि छाती में छपाई हरि,
छूट गई दानि गति कोटिहू तैंतीस की।
'केशौदास' तेही काल कारोई ह्वै आयो काल,
सुनत श्रवण बकसीस एक ईश की ॥६७

'केशवदास' कहते हैं कि श्री शकर जी के एक दान का समाचा कानों से सुनते ही समुद्र काँप उठा, (क्योंकि उसे भय हुआ कि मैं रत्न कर ठहरा, मेरे सभी रत्न दान में न दे डालें)। सूर्य को बुखारच आया। (उन्हें अपने घोड़े का भय लगा कि दान मे न दे दें) चन्द्रमा का शरीर ठडा पड गया (कि कहीं मेरा अमृत न दे डालें) मलिन मुख वाले अग्नि तो अब भी (मारे भय के)
अपना सिर ऊँचा नहीं करते और उनके मुख मे जो कालिख ल रहती है वह मानो बीसोमन लज्जा की कालिख है और हरि (विष्णु ने सुन्दरी लक्ष्मी जी को छाती मे छिपालिया (कि कहीं इन्हें भी न डालें) तथा वे तेतीसो करोड़ देवताओं की दानशीलता भूल गई औ काल भी उसी समय काला पड़ गया।

विधि का दान वर्णन

कवित्त

आशीविष, राकसन, दैयतन दै पताल,
सुरन, नरन, दियो दिषि, भू, निकेतु है।
थिर चर जीवन को दीन्ही वृत्ति 'केशौदास'
दीबे कहँ और कहो कोऊ कहा हेत है।

सीत, बात, तोय, तेज आवत समय पाय,
काहू पै न नाखो जाइ ऐसो बांधो सेतु है।
अब, तब, जब, कब, जहाँ तहाँ देखियत,
विधिही को दीन्हो, सब सबही को देतु है ॥६८॥

सर्पो राक्षसों और दैत्यको पातल लोक दिया तथा देवताओं को स्वर्ग और मनुष्यों को रहने के लिए भू लोक प्रदान किया। 'केशवदास' कहते हैं कि चर और अचर जीवों को वृत्ति (जीवका) प्रदान की। बतलाओ, अब दान का और दूसरा हेतु क्यों हो सकता है ? (क्योंकि जीवका जो सबसे बढ़कर दान है, वह तो वह दे ही चुके)। अपने अपने समय पर शीत, वायु, पानी (वर्षा) और तेज (गरमी) सभी प्राप्त होते हैं और इनको ऐसा सेतु (मर्यादा) बाँधा है कि कोई उल्लघन नहीं कर सकता। अभी या भूत काल में, जहाँ-कहीं दान दिया जाता है, वह सब ब्रह्माजी ही का दिया हुआ है, जिसे सब लोग सब को दिया करते हैं।

गिरा का दान वर्णन

कवित्त

बानी जगरानी की उदारता बखानी जाय,
ऐसी मति उदित उदार कौन की भई।
देवता प्रसिद्ध सिद्ध ऋषिराज तप वृद्ध,
कहि कहि हारे सब कहि न काहू लई।
भावी, भूत, वर्त्तमान, जगत बखानत है,
'केशौदास' क्यों हू न बखानी काहू पैगई।
वर्णे पति चारिमुख, पूत वर्णे पाँच मुख,
नाती वर्णे षटमुख, तदपि नई नई ॥६९॥

जगत की स्वामिनी श्री सरस्वती जी की उदारता का जो वर्णन कर सके, ऐसी उदार बुद्धि किसकी हुई है ? बड़े-बड़े प्रसिद्ध देवता,

सिद्ध लोग, तथा तपोवृद्ध ऋषिराज उनकी उदारता का वर्णन करते करते हार गये, परन्तु कोई भी वर्णन न कर सका। भावी, भूत, वर्त्तमान जगत सभी ने उनकी उदारता का वर्णन करने की चेष्टा की परन्तु किसी से भी वर्णन करते न बना। उस उदारता का वर्णन उनके पति ब्रह्माजी चार मुख से करते हैं, पुत्र महादेव जी पाँच मुख से करते हैं और नाती (सोमकार्त्तिकय) छः मुख से करते हैं, परन्तु फिर भी दिन-दिन नई ही बनी रहती है।

सूर्य का दान वर्णन

बाधक विविधि व्याधि, त्रिविध अधिक आधि,
वेद उपवेद बंध बधन विधानु हैं।
जग पारावार पार करत अपार नर,
पूजत परम पद पावत प्रमानु हैं।
पुरुष पुरान कहैं पुरुष पुराने सब,
पूरण पुराण सुने निगम निदानु हैं।
भोगवान, भागवान, भगतन भगवान,
करिवे को 'केशौदास' भानु भगवान है ॥७०॥

'केशवदास' कहते हैं कि सूर्यदेव त्रिविध व्याधियों के बाधक या रोकनेवाले हैं, और अधिकतर आधियां (मानसिक रोगों) को भी दूर करते हैं तथा वेद और उपवेद के नियमों के विधायक हैं अर्थात् वैदिक कार्य उन्हीं का चाल पर निर्भर रहते हैं। पुराने सभी लोग उन्हें सब से पुराना कहते हैं और सम्पूर्ण पुराणों के मूल कारण हैं अर्थात् वे भी उन्हीं की चाल पर निर्भर रहते हैं। सूर्य भगवान अपने भक्तो• भोगवान, भाग्यवान, और ऐश्वर्यशाली बनाने के लिए ही हैं।

परशुरामजी को दान

सवैया

जो धरणी हिरण्याक्ष हरी, वरयज्ञ वराह छँडाइ लई जू।
दानव मानव देवनिके जु, तपोबल केंहू न हाथ भई जू॥

जालगि केशव भारतभो भुव, पारथ जीवनि बीजु बई जू।
सातौ समुद्रनि मुद्रित राम, सो विप्रन बार अनेक दई जू।७१॥

केशवदास कहते हैं कि जिस पृथ्वी को हिरण्याक्ष ने हरण किया और जिसे वाराजी ने छीना। जिसके लिए राक्षस, मनुष्य और देवताओं ने अनेक तप किये परन्तु किसी के हाथ की न हुई। जिसके लिए महाभारत का युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने जीवों के बीज से भी दिये अर्थात् इतने जीव मारे कि पृथ्वी खेत की तरह हो गई। उसी साता समुद्रों से युक्त पृथ्वी को परशुराम ने ब्राह्मणों को अनेक बार दान में दिया।

श्री रामचन्द्र का दान वर्णन (१)

कवित्त

पूरन पुराण अरु पुरुष पुराने परि—
पूरन बतावैं न बतावैं और उक्ति को।
दरसन देत जिन्हें दरसन समझैं न,
नेति नेति कहैं वेद छाँड़ि आन युक्ति को।
जानि यह 'केशौदास' अनुदिन राम राम
रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।
रूप देई अनमाहि, गुन देइ गरिमाहि,
भक्ति देई महि माहि, नाम देइ मुक्ति को॥७२॥

सभी पुराण ग्रन्थ और पुराने लोग जिन्हें सब प्रकार से पूर्ण बतलाते हैं और इस उक्ति को छोड़ कर कुछ नहीं कहते। जिनके रहस्य को दर्शनशास्त्र भी नहीं जान पाते, वह (अपने भक्तों को) दर्शन देते हैं। जिनके सबंध में वेद और कुछ न कह सकने के कारण केवल 'नेति, नेति अर्थात् (इनके रहस्य का कोई अंत नहीं है) कहा करते है। 'केशवदास' कहते हैं कि यही जान कर (कि वेद भी उनका रहस्य नहीं बतला सकते) मैं दिन प्रतिदिन "राम-राम" रटता रहता हूँ

श्रौर पुनरुक्ति (एक ही शब्द को बारबार दुहराने के) दोष को नहीं डरता. (क्योंकि पुनरुक्ति दोष माना गया है)। उन राम का रूप-दर्शन अणिमा सिद्धि देता है, उनका गुणगान गरिमा सिद्धि प्रदान करता है, उनकी भक्ति महिमा प्रदान करती है और उनका नाम मुक्ति प्रदान करता है।

सवैया

जो शतयज्ञ करे करी इन्द्रमों, सो प्रभुता कपिपुंज मों कीनी।
ईश दई जु दये दशशीश, सुलंक विभीषणै ऐसेहि दीनी॥
दानकथा रघुनाथ की केशव, को बरनै रस अद्भुत भीनी।
जो गति ऊरधरेतन की सुनौ औधके सूकर कूकर लीनी॥ ७३॥

जो प्रभुता इन्द्र को सौ यज्ञों के करने पर दी, वह बन्दरों को योंही प्रदान कर दी। जिस लंका को शिवजी ने रावण को अपने दशों शिरों को चढ़ाने पर दिया, उसे उन्होंने विभीषण को ऐसे ही दे दिया। 'केशवदास' कहते हैं कि इसलिए श्री रामचन्द्र की अद्भुत रस में सनी हुई दान की कथा का कौन वर्णन कर सकता है? जो गति उर्द्धरेता अर्थात् योगियों को प्राप्त होती है, वही अयोध्या के सुअरों और कुत्तो तक ने (उनकी कृपा से) प्राप्त कर ली।

राजा बलि का दान वर्णन।

सवैया

कैटभ सो, नरकासुर सो पल में मधु सो, मुर सो जेहिं मारयो।
लोक चतुर्दश रक्षक केशव, पूरण वेद पुराण विचारयो॥
श्री कमला-कुच-कुंकुम मंडन पंडित देव अनेक निहारयो।
सो कर मांगन को बलि पै करतारहु को करतार पसारयो॥ ७४॥

जिस हाथ ने कैट, नरक, मधु, और मुर जैसे राक्षसों को पल भर में मार डाला। 'केशवदास' कहते हैं कि वेद तथा पुराणों में जिसे चौदहों लोकों का रक्षक कहा है। जो हाथ श्री लक्ष्मी जी के कुच मंडल

पर कु कुम लगाने में बड़ा पडित है और जिसके प्रभाव के देव, अदेव (सुरअसुर) सबो ने देखा है, ब्रह्मा को भी बनाने वाले ईश्वर ने उसी हाथ को राजा बलि के आगे फैलाया।

हरिचद का दान वर्णन

मातुके मोह पिता परितोषन, केवल राम भरे रिसभारे।
औगुण एकही अर्जुनके, छितिमंडल के सब छत्रिन मारे॥
देवपुरी कह औधपुरी जन, केशवदास बड़े अरु बारे।
सूकर कूकर और सबै हरिचदको सत्य सदेह सिधारे॥ ७५॥

अपनी माता के अपराध पर और पिता को सतुष्ट करने के लिए परशुराम अत्यन्त क्रोध में भर गये और एक सहस्त्रार्जुन के अपराध करने पर उन्होंने पृथ्वी भर के सब क्षत्रियों को मार डाला। 'केशवदास' कहते हैं कि उधर राजा हरिश्चन्द्र के सत्य के कारण अयोध्या के बड़े छोटे सभी मनुष्य तथा कुत्ते सुअर तक स्वर्ग पहुँच गये।

राजा अमरसिंह का दान वर्णन

कवित्त

कारे कारे तम कैसे, प्रीतम सुधारे विधि,
बारि बारि डारेगिरि 'केशोदास' भाखे हैं।
थोरे थोरे मदनि कपोल फूले थूले थूले,
डोलैं जल, थल, बल थानुसुत नाखे हैं।
घटे घननात, छननात बने घुंघुरुन,
भौंर भननात भुवपति अभिलापे हैं।
दुबन दरिद्र दल दलन अमरसिंह
ऐसे ऐसे हाथी ये ह्यार करि राखे हैं॥ ७६॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो काले काले और जिन्हें ब्रह्मा ने तम अर्थात् राहु के मित्र जैसा बनाया है। जिनपर बड़े बड़े पहाड़ निछावर किये जा सकते हैं। जिनके कपोल थोड़े-थोड़े मद से अच्छी तरह फूले

हुए हैं जो जल, थल, में घूमते हैं और ब्रज में जो श्रीगणेश से बढ़ गये हैं। जिनकी पीठों पर घंटे घनघनाते रहते हैं तथा जिनके घुंघुरू छन-छन करके बजते रहते हैं तथा भौंरे जिनके मस्तकों पर (मद के) कारण) चारों ओर गूंजते रहते हैं; जिनके पाने की इच्छा बड़े-बड़े राजा करते हैं, ऐसे-ऐसे अनेक हाथियों को राजा अमरसिंह ने दरिद्रों की द्ररिद्रता के दल को मिटाने के लिए हथियार बना रखा है, अर्थात् इतने हाथी देते हैं कि उनकी दरिद्रता दूर हो जाती है।

वीरवर का दान (१)

सवैया

पापकै पुंज पखावज केशव शोकके शंख सुने सुखमा में।
झूठकी झालरि झांझ अलोकको आवझ्यथन जानी जमामें॥
भेदकी भेरि वडेडरके डफ, कौतुकभो कलिके कुरमामें।
जूझतही बर वीरवजे बहुदारिदके दरबार दमामें॥ ७७॥

'केशवदास' कहते हैं कि वीरवर 'वीरवल' के युद्ध में मरते ही कलियुग के घर में उत्सव होने लगे। पाप के पखावज और शोक के शंख बजने लगे। झूठ की झालरें लटकाई गईं, निन्दा के झांझें बजीं, तथा और भी कुविचार के ताशों को बजते हुए मैंने देखा। भेद की भेरी तथा डर का डफ बजा और दरिद्रता के दरबार में तो नगाड़े ही बजने लगे। (क्योंकि वह उसी के बड़े भारी शत्रु थे।

(२)

नाक रसातल भूधर सिंधु नदी नद लोक रचे दिशिचारी।
केशव देव अदेव रचे, नरदेव रचे रचना न नेवारी॥
रचिकै नरनाह बलीवर वीर भयो, कृतकृत्य महा व्रतधारी।
दै करतारपनो कर ताहि दई, करतार दुवौ कर तारी॥ ७८॥

'केशवदास' कहते हैं कि ब्रह्मा ने स्वर्ग, नर्क, पहाड़, समुद्र, नदी, नद और चौदहों लोक बनाये। फिर देवता, राक्षस, और मनुष्य बनाये

और अपना निर्माण कार्य बन्द नहीं किया। परन्तु जब उन्होंने वीर वृतधारी वीरबल को बनाया तो उन्हें बनाने के बाद वह कृतकृत्य हो गये और अपना करतारपन इनको देकर दोनों हाथों से ताली बजा दी। (अपना समकक्ष व्यक्ति पाकर और अपने कार्य का भार उसे देकर लोग ताली बजाकर कहते हैं कि 'चलो छुट्टी हुई' और सतोषकी सास लेते हैं, यही भाव है)

विभीषण का दान वर्णन।

केशव कैसहु बारिधि बाधि कहा भयो ऋच्छनि जो छितिछाई।
सूरज को सुत बालि को बालक को नल नील कहो यहि ठाई॥
को हनुमत कितेक बली यमहुँ पहँ जोर लई जो न जाई।
दूषण दूषण भूषण भूषण लक विभीषण के मत पाई॥ ७९॥

'केशवदास' कहते हैं कि किसी प्रकार समुद्र का पुल बाधकर रीछ लका की सब भूमि पर छा गये तो क्या हुआ। सुग्रीव, तथा नल-नील ने भी जाकर वहाँ क्या किया? हनुमान जी कितने जैसे, बलवानों से भी जो प्राप्त न की गई, उसी लंका को दूषण के दूषण और भूषण के भूषण श्री रामचन्द्र ने विभीषण के मत से ही प्राप्त की।

सातवां-प्रभाव

भूमि-भूषण वर्णन

दोहा

देश, नगर, बन, बाग, गिरि, आश्रम, सरिता, ताल।
रवि, शशि, सागर भूमिके, भूषण, ऋतु सब काल ॥१॥

देश, नगर, वन, बाग, पर्वत, आश्रम, नदी, तालाब, सूर्य और चन्द्रमा का उदय-अस्त, समुद्र, छहों ऋतुएं तथा बारहों मास-ये भूमि भूषण कहलाते हैं।

देश वर्णन।

दोहा

रत्नखानि, पशु, पच्छि, वसु, वसन, सुगन्ध, सुवेश।
नदी, नगर, गढ़, वरणिये, भूषित भाषा देश ॥२॥

किसी देश के वर्णन करने में रत्नखानि, पशु, पक्षी, धन, वस्त्र, सुगन्ध, सुन्दर शोभा नदी, नगर, किले, भाषा तथा पहनावे का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

आछे आछे असन, वसन, वसु वासु, पशु,
दान, सनमान, यान, बाहन बखानिये।
लोग, भोग, योग, भाग बाग राग रूप युत,
भूषननि भूषित, सुभाषा मुख जानिये।
सातौ पुरी तीरथ, सरित, सब गंगादिक,
'केशौदास' पूरण पुराण गुण गानिये।
गोपाचल ऐसो दुर्ग राजा मान सिंह जू को,
देशनि की मणि महि मध्यदेश मानिये ॥३॥

'केशवदास' कहते हैं कि ओड़छा नगर के आस-पास तीस कोस तक 'जो तु गारएय' नाम का वन है, वह शत्रुओं के लिए अजीत है अर्थात् शत्रु उसे नहीं जीत सकते। वह जगल विंध्य वन का भाई सा प्रतीत होता है और वहाँ बहुत से हाथी, बाघ, बन्दर, और सूअर रहते हैं तथा वह जंगल भीलों के लिए निडर स्थान है। (वहाँ लुटेरे भील बिना किसी डर के छिप सकते हैं)। यमराज के दल अथवा जामवन्त के गण जैसे भैंसे वहाँ हैं और स्वच्छद विचरनेवाले रीछों का वह मित्र है अतएव उन्हें सुख देनेवाला है। वहाँ के पहाड़ अग्नि युक्त हैं और वहाँ सिंधु नदी बहती है इसलिए ऐसा जान पड़ता है कि वह वन श्रीशकर के गगा युक्त जटा जूट के समान पवित्र है क्योंकि उनके मस्तक पर भी अनल और गंगाजी हैं।

बाग वर्णन

दोहा

ललित लता, तरुवर, कुसुम, कोकिल, कलरव, मोर।
बरनि बाग अनुराग स्यों, भँवर भँवत चहुँ ओर ॥८॥

सुन्दर लताएँ, पेड़, पुष्प, कोयल, कबूतर और मोर पक्षी तथा चारों ओर घूमते हुए भौरों का उल्लेख करते हुए अनुरागपूर्वक बाग का वर्णन करना चाहिए। उदाहरण

(कवित्त)

सहित सुदरशन करुणा कलित कम
लासन बिलास मधुवन मीत मानिये।
सोहिये अपर्णा रूप मजरी और नीलकंठ,
'केशौदास' प्रगट अशोक उर आनिये।
रंभा स्यों सदभ बोलैं मजु घोषा उरबसी,
हस फूले सुमन स सब सुख दानिये।
देव को दिवान सो प्रवीणराय जू को बाग,
इन्द्र के समान तहाँ इन्द्रजीत जानिये ॥९॥

'केशवदास' कहते हैं कि देवसभा के समान ही प्रवीणराय का बाग भी है, जिसमें इन्द्र के समान राजा इन्द्रजीत सिंह रहा करते हैं। देव-सभा में जिस प्रकार सुदर्शनचक्र-धारी भगवान् करुणाशील श्रीविष्णु रहते हैं, उसी प्रकार इस बाग में भी सुदर्शन और करुणा के वृक्ष हैं। वहाँ (देव-सभा में) कमलासन (ब्रह्मा) का विलास है तो यहाँ (इस बाग में भी) कमल तथा असना (एक प्रकार का वृक्ष) की छटा है। देवसभा में मधुबन-मीत (श्रीकृष्ण) रहते हैं और इस बाग को स्वयं मधुबन का मित्र समझिए। वहाँ रूपमजरी और अपर्णा (पार्वतीजी) सहित नीलकंठ (श्रीशंकर जी) सुशोभित होते हैं तो यहाँ भी अपर्णा (करील), रूपमंजरी, और नील कंठ (मोर अथवा नीलकंठ पक्षी) शोभा देते हैं। देवसभा में सभी प्रकटरूप से अशोक अर्थात् शोक रहित या आनन्दित रहते हैं तो यहाँ (इस बाग में) अशोक के वृक्ष हैं। देवसभा में रंभा, मंजुघोषा, उर-वसी अप्सराएँ अभिमान भरी बातें करती हैं तो यहाँ इस बाग में रंभा (केला) के वृक्ष हैं और मंजुघोषा (सुमधुर बोलनेवाली कोयल) है, जिसकी वाणी लोगों के उरबसी (हृदय में बसी) रहती है। वहाँ हंस अर्थात् सूर्य देवता हैं तो यहाँ (इस बगीचे में भी) हंस पक्षी हैं। वहाँ सुमनस अर्थात् प्रसन्नमनवाले देवता सबसुख देनेवाले हैं तो यहाँ भी सुमन अर्थात् पुष्प खिले हुए जो सबको सुख दिया करते हैं।

गिरि वर्णन

दोहा

तुंग शृंग दीरघ दरी, सिद्ध, सुन्दरी, धातु।
सुर नरयुत गिरि वरणिये, औषधि निरझर पातु ॥१०॥

पहाड़ का वर्णन करते समय ऊंची चोटी, गहरी गुफाएँ, सिद्धों की स्त्रियां, धातु (लोहा, सोना इत्यादि) देवता और मनुष्य, औषधियाँ तथा झरनों के गिरने का वर्णन करना चाहिए।

सरिता वर्णन

दोहा

जलचर, हय, गय, जलज तट, यज्ञ कुंड मुनिवास।
स्नान. दान, पावन, नदी, वरनिय केशौदास ॥१४॥

'केशवदास' कहते हैं कि पवित्र सरिता का वर्णन करते समय जल के जीव, जल के हाथी तथा घोड़े, कमल, किनारे पर बने हुए यज कुंड तथा मुनियों का निवास, स्नान, और दान इत्यादि का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

सवैया

ओरछे तीर तरगनी बेतवै, ताहि तरै रिपु केशव कोहै।
अर्जुन बाहु प्रवाह प्रबोधित, रेवा ज्यों राजन की रज मोहै।
ज्योति जगै यमुना सी लगै, जग-लोचन ललित पाप विपो है।
सूर सुता शुभ संगम तुंग, तरंग तरगित गंग सी सो है ॥१५॥

'केशवदास' कहते हैं कि ओड़छा के निकट वेतवा नदी है, उसे पार कर सके, ऐसा शत्रु कौन सा है? यह सहस्रार्जुन की भुजाओं द्वारा बढ़ाए हुए प्रवाहवाली नर्मदा नदी के समान है, क्योंकि इसका प्रवाह भी अर्जुनपाल राजा के द्वारा बढाया गया है। इसके सामने राजाओं का राजापन मूर्छित हो जाता है अर्थात् इसके प्रवाह पर राजाओं का कोई वश नहीं चलता-कोई भी राजा इसपर पुल नहीं बँधवा सकता। यह वेतवा नदी अपनी ज्योति (शोभा) के कारण यमुना जैसी लगती है क्योंकि जमुना जल जग लोचन (सूर्य) के द्वारा लालित है और यह जग लोचन (ससार के मनुष्यों के नेत्रों से) लालित है अर्थात् इसे सब बड़े प्रेम से देखते हैं। जैसे यमुना पापों को नष्ट कर देती है, वैसे यह भी पापों को दूर कर देती है। सूर्य-सुता (यमुना) मे मिलने के कारण यह ऊँची तरगोंवाली गगा सी सुशोभित होती है। (क्योंकि गगाजी भी यमुना में मिली है)

तड़ाग वर्णन

दोहा

ललित लहर, खग, पुहुप, पशु, सुरभि समीर, तमाल।
करभकेलि, पंथी प्रकट, जलचर वरणहु ताल ॥१६॥

ताल का वर्णन करते समय सुन्दर लहरें, जल-पक्षी, पुष्प, जल-पशु, सुन्दर सुगन्धितवायु, तमाल आदि वृक्षों, हाथियों के बच्चों की क्रीड़ा, यात्रियो तथा जलचरों का वर्णन कीजिए।

उदाहरण

। कवित्त ।

आपु धरैं मल औरनि केशव निर्मलगात करैं चहुँओरैं।
पंथिनके परिताप हरैं हठि, जे तरुतूल तनोरुह तोरैं॥
देखहु एक स्वभाव बडो, बडभाग तड़ागनि को वित थोरैं।
ज्यावत जीवनिहारिनिको, निज बंधनकै जगबंधन छोरैं॥१७॥

'केशवदास' कहते है कि तालाब दूसरों का मल स्वयं लेकर, चारों ओर के जीवों को निर्मल गात (स्वच्छशरीर वाला) बना देते है। जो पथिक किनारे के पेड़ और उनकी शाखाओं को हठपूर्वक तोड़ते हैं, उनके दुःखों को भी दूर करते हैं। (उन्हें भी निर्मलजल में स्नान करा कर स्वस्थ बनाते हैं)। इन बड़भागी तालाबों के सुन्दर स्वभाव को देखो कि वे अपने थोड़े से धन से, अपने जीवन (जल) को हरनेवाले को भी जिलाते है और अपने बंधन से संसार के बंधन को दूर करते हैं अर्थात् बाँध आदि अपने ऊपर बँधवा कर स्वयं तो बंधन में पड़ते हैं और उससे संसार के लोगों को जो पार करने में रुकावट होती है, उसे दूर करते है अथवा पुराणों के अनुसार तालाबादि पर बाँध बाँधने वालों को मुक्ति-प्रदान करते है।

उदाहरण

(कविता)

कोकनद मोदकर मदनवदन किधौं,
दशमुख मुख, कुवलय दुखदाई है।
रोधक असाधु जन, शोषक तमोगुण को,
उदित प्रबुद्धबुद्धि 'केशौदास' गाई है।
पावन करन पय हरिपद-पङ्कज कै,
जगमगै मनु जगमग दरसाई है।
तारापति तेजहर तारका को तारक की,
प्रगट प्रभातकर ही की प्रभुताई है ॥२४॥

'केशवदास' कहते हैं कि यह प्रभाकर (सूर्य) की प्रभुताई है या कामदेव का मुख है क्योंकि जैसे सूर्योदय कोकनद (कमल) के लिए मोद कर (आनन्द दायक) होता है, वैसे ही कामदेव का मुख कोकनद (कोकशास्त्र पढनेवालों को) को मोदकर (आनन्ददायी) है। अथवा यह रावण का मुख है क्योंकि जैसे वह कुवलय पृथ्वीमडल को दुख देनेवाला है, वैसे यह भी कुवलय (कुमुदिनी) को दुःखदायी है। अथवा यह प्रबोध-बुद्धि का उदय है क्योंकि जिस प्रकार सूर्य की प्रभा आसाधु (दुष्टों, चोरों, लुटेरा) को रोकने वाली होती हैं और तमोगुण (अन्धकार) को दूर करती है, उसी तरह प्रबोद्ध-बुद्धि (ज्ञानबुद्धि का उदय) भी असाधुओं की रोधक (पापों से हटानेवाली) और तमोगुण की शोषक होती है। अथवा यह सूर्य का प्रकाश है या श्रीविष्णु के चरण कमल हैं क्यों कि जैसे यह (सूर्य का प्रकाश) पय (जल) को पवित्र करता है, वैसे उनके (श्रीविष्णु के) चरण-कमल भी करते हैं। अथवा यह मनु महाराज की जगमगाती हुई ज्योति है क्योंकि सूर्य की प्रभा जैसे जग-मग (ससार का मार्ग) दिखलाती है, वैसे यह मनुमहाराज की ज्योति भी जग-मग (ससार के लोगों को धर्म का मार्ग दिखलानेवाली) है।

अथवा यह सूर्योदय है या ताड़का के ताड़क (ताड़ना करनेवाले) श्रीराम हैं, क्योंकि जैसे यह (सूर्योदय) तारापति (चन्द्रमा) का तेजहर (तेजहरनेवाला) और तार का (तारों या नक्षत्रों) का तारक (ताड़क या ताड़न करनेवाला) है, वैसे श्रीरामचन्द्र भी तारापति (तारा के स्वामी बालि) के तेज-हर (तेज को हरने वाले) और तारका के तारक (ताड़का को तारने वाले) हैं।

चन्द्रोदय वर्णन

दोहा

कोक, कोकनद, बिरहि, तम, मानिनि, कुलटनि दुःख।
चन्द्रोदयते कुवलयनि, जलधि, चकोरनि सुःख ॥२५॥

चन्द्रोदय से कोक (चकवा पक्षी), कोकनद (कमल), विरही, तम (अन्धकार), मानिनी नायिका तथा कुलटाओं को दुख होता है और कुवलय, समुद्र तथा चकोर पक्षी को सुख होता है।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' है उदास कमलाकर सो कर,
शोषक प्रदोष ताप तमोगुण तारिये।
अमृत अशेष के विशेष भाव बरषत,
कोकनद मोद चंड खंडन विचारिये।
परम पुरुष पद विमुख पुरुष रुख,
सनमुख सुखद विदुष उर धारिये।
हरि हैं री हिय में न हरिन हरिन नैनी
चन्द्रमा न चन्द्रमुखी नारद निहारिये ॥२६॥

'केशवदास' कहते हैं कि श्रीरामचन्द्र चन्द्रमा की ओर देखकर सीता जी से कहते हैं कि 'हे चन्द्रमा जैसे मुखवाली सीता ! यह चन्द्रमा नहीं है ? यह तो नारद दिखलाई पड़ते है क्योंकि जिस प्रकार चन्द्रमा

उदाहरण

(कविता)

कोकनद मोदकर मदनवदन किधौं,
दशमुख मुख, कुवलय दुखदाई है।
रोधक असाधु जन, शोधक तमोगुण को,
उदित प्रबुद्धबुद्धि 'केशोदास' गाई है।
पावन करन पय हरिपद-पंकज कै,
जगमगै मनु जगमग दरसाई है।
तारापति तेजहर तारका को तारक की,
प्रगट प्रभातकर ही की प्रभुताई है ॥२४॥

'केशवदास' कहते हैं कि यह प्रभाकर (सूर्य) की प्रभुताई है या कामदेव का मुख है क्योंकि जैसे सूर्योदय कोकनद (कमल) के लिए मोद कर (आनन्द दायक) होता है, वैसे ही कामदेव का मुख कोकनद (कोकशास्त्र पढनेवालों को) को मोदकर (आनन्ददायी) है। अथवा यह रावण का मुख है क्योंकि जैसे वह कुवलय पृथ्वीमंडल को दुख देनेवाला है, वैसे यह भी कुवलय (कुमुदिनी) को दुःखदायी है। अथवा यह प्रबोध-बुद्धि का उदय है क्योंकि जिस प्रकार सूर्य की प्रभा आसाधु (दुष्टों, चोरों, लुटेरों) को रोकने वाली होती है और तमोगुण (अन्धकार) को दूर करती है, उसी तरह प्रबोद्ध-बुद्धि (ज्ञानबुद्धि का उदय) भी असाधुओं की रोधक (पापों से हटानेवाली) और तमोगुण की शोधक होती है। अथवा यह सूर्य का प्रकाश है या श्रीविष्णु के चरण कमल हैं क्यों कि जैसे यह (सूर्य का प्रकाश) पय (जल) को पवित्र करता है, वैसे उनके (श्रीविष्णु के) चरण-कमल भी करते हैं। अथवा यह मनु महाराज की जगमगाती हुई ज्योति है क्योंकि सूर्य की प्रभा जैसे जग-मग (संसार का मार्ग) दिखलाती है, वैसे यह मनुमहाराज की ज्योति भी जग-मग (संसार के लोगों को धर्म का मार्ग दिखलानेवाली) है।

उदाहरण
कवित्त

शीतल समीर शुभ गंगा के तरंग युत
अंबर विहीन वपु वासुकी लसंत है।
सेवत मधुपगण गजमुख परभृत,
बोल सुन होत सुखी संत और असंत है।
अमल अदल रूप मंजरी सुपद रज,
रंजित अशोक दुख देखत नसंत है।
जाके राज दिसि दिसि फूले हैं सुमन सब
शिव को समाज किधौं केशव वसंत है ॥२८॥

'केशवदास' कहते हैं कि शिवजी का समाज है या वसंत ऋतु है ? शिवजी के समाज में जिस प्रकार पवित्र गंगाजी की लहरों से युक्त शीतल समीर (ठंडी वायु) बहा करती है। वह स्वयं अंबरविहीन वपु (वस्त्र रहित शरीर वाले) हैं और उनके शरीर पर वासुकी (साँप) सुशोभित रहते हैं। मधुप (देवता), गजमुख (श्रीगणेश) और परभृत (षटमुख-सोमकार्त्तिकेय) उनकी सेवा करते हैं, जिनकी वाणी को सुनकर सन्त और असन्त (रावण जैसे) सुखी होते हैं। वह अमल निर्मल चरित्र वाला) अदल (अपर्णा-पार्वतीजी) जैसी रूपमंजरी (सुन्दरी) के सुपदों की रज (धूल) से लोग अशोक (शोकरहित) हो जाते हैं, क्योंकि उन चरणों के देखते ही दुःख नष्ट हो जाते हैं। वहाँ-शिवजी के राज्य में—दिशाओं-दिशाओं के सुमन (देवतागण) फूले प्रसन्न) रहते हैं। उसी प्रकार—

वसंत में गंगाजी की लहरों के स्पर्श से युक्त हो शीतल समीर बहा करती हैं। अंबर (आकाश), विहीनवपु (कामदेव) और वासुकी (पुष्प हार) सुशोभित होते हैं। गजमुख, अर्थात् हाथियों के मुख की सेवा मधुपगण (भौंरे) किया करते हैं, क्योंकि वसंत में ही हाथी

के कर (किरणें) कमला के समूह से उदासीन रहते है, उसी प्रकार नारद के हाथ भी धन समूह से विरक्त रहा करते हैं। जिस प्रकार, चन्द्रमा प्रदोष (सध्याकाल) और ताप, (गरमी) का शोषक (नाशकरनेवाला) तमोगुण अधकार) की ताड़ना करनेवाला होता हैं, उसी प्रकार नारद भी प्रदोष (बड़े बड़े दोष) और ताप (दैहिक, दैविक भौतिक) दूर करते हैं और तमोगुण अर्थात् अज्ञान को हटाते हैं। चन्द्रमा, जिस प्रकार अशेष (परिपूर्ण) अमृत को बरसाता है, उसी प्रकार नारद भी अमृत (अमर) और अशेष (परिपूर्ण) श्रीविष्णु भगवान् के भाव अर्थात् चरित्रों को बरसाया करते हैं अर्थात् उनका चरित्रगान किया करते हैं। जिस प्रकार चन्द्रमा चक्रवाकों की ध्वनि के आनेन्द का प्रचड खडन करने वाला है, उसी प्रकार नारद भी कोक-शास्त्र के शब्दों के आनन्द के प्रचड खडनकर्त्ता हैं अर्थात् विषयचर्चा के विरोधी है। जिस प्रकार चन्द्रमा परम पुरुष अर्थात् पति के पदों (चरणों) से विमुख या रूठी हुई माननी नायिका से परुष (कठोर) रुख (प्रवृत्ति) रखता है, उसी प्रकार नारद भी परम पुरुष अर्थात् श्री विष्णु भगवान से विमुख जनों से परुष रुख (कठोर प्रवृत्ति) रखते है। हे मृगनैनी ! और जो यह काला दाग दिखलाई पड़ता है, वह हरिण नहीं है प्रत्युत श्याम कान्ति धारण करनेवाले विष्णु हैं जो नारद के हृदय में निवास करते है।

षट्ऋतु वर्णन

(१) वसन्त

दोहा

बरणि बसंत सपुहुप अलि, बिरहि बिदारण बीर।
कोकिल कलरव कलितवन, कोमल सुरभि समीर ॥२७॥

वसत में सुन्दर पुष्प, भौंरें, कोयल की ध्वनि, सुन्दर वन, कोमल अर्थात् मद और सुरभि अर्थात् सुगधित वायु का वर्णन करना चाहिए क्योंकि ये वस्तुएँ वियोगियों के हृदयों को विदारण करने वाले वसन्त के वीर योद्धा है।

उदाहरण

कवित्त

शीतल समीर शुभ गंगा के तरंग युत
अंबर विहीन वपु वासुकी लसंत है।
सेवत मधुपगण गजमुख परभृत,
बोल सुन होत सुखी संत और असंत है।
अमल अदल रूप मंजरी सुपद रज,
रंजित अशोक दुख देखत नसंत है।
जाके राज दिसि दिसि फूले हैं सुमन सब
शिव को समाज किधौं केशव बसंत है ॥२८॥

'केशवदास' कहते हैं कि शिवजी का समाज है या वसंत ऋतु है ? शिवजी के समाज में जिस प्रकार पवित्र गंगाजी की लहरों से युक्त शीतल समीर (ठंडी वायु) बहा करती है। वह स्वयं अंबरविहीन वपु (वस्त्र रहित शरीर वाले) हैं और उनके शरीर पर वासुकी (साँप) सुशोभित रहते हैं। मधुप (देवता), गजमुख (श्रीगणेश) और परभृत (षट्मुख-सोमकार्त्तिकेय) उनकी सेवा करते हैं, जिनकी वाणी को सुनकर सन्त और असन्त (रावण जैसे) सुखी होते हैं। वह अमल (निर्मल चरित्र वाला) अदल (अपर्णा-पार्वतीजी) जैसी रूपमंजरी (सुन्दरी) के सुपदों की रज (धूल) से लोग अशोक (शोकरहित) हो जाते हैं, क्योंकि उन चरणों के देखते ही दुःख नष्ट हो जाते हैं। वहाँ-शिवजी के राज्य में—दिशाओं-दिशाओं के सुमन (देवतागण) फूले (प्रसन्न) रहते हैं। उसी प्रकार—

वसंत में गंगाजी की लहरों के स्पर्श से युक्त हो शीतल समीर बहा करती है। अंबर (आकाश), विहीनवपु (कामदेव) और वासुकी (पुष्प हार) सुशोभित होते हैं। गजमुख, अर्थात् हाथियों के मुख की सेवा मधुपगण (भौंरे) किया करते हैं, क्योंकि वसंत में ही हाथी

मतवाले हो जाते है और मदयुक्त होने के कारण उनके मस्तकों पर भौंरे मडराते रहते है । परभृत अर्थात् कोयलों की बोली सुनकर सभी सन्त और असन्त सुखी होते हैं। अमल (निर्मल) और अदल (अद्वितीय) रूप मजरी (सुन्दरी स्त्रियों) के पदरज से सुशोभित अशोक के वृक्षों को देखते ही दुःख नष्ट हो जाते हैं और सब प्रकार के सुमन (फूल) फूलते हैं। **(२) ग्रीष्म वर्णन**

दोहा

ताते तरल समीर मुख, सूखे सरिता ताल ।
जीव अबल जल थल विकल, ग्रीषम सफल रसाल॥२९॥

ग्रीष्मऋतु में गर्म और चचल वायु बहती है। लोगों के मुख, नदी और तालाब सूखने लगते हैं। जल-थल के जीव-जन्तु अशक्त और व्याकुल हो जाते हैं। केवल रसाल अर्थात् आम ही सफल होता है अर्थात् गर्मी की ऋतु मे केवल आम ही फलता है।

उदाहरण

कवित्त

चडकर कलित, बलित वर सदागति,
कद मूल, फलफूल दलनि को नासु है।
कीच बीच बचें मीन, व्याल बिल कोल कुल
द्विरद दरीन दिनकृत को विलासु है।
थिर, चर जीवनहरन, वन वन प्रति
'केशौदास' मृगशिर श्रवन निवासु है।
धावत बली धनुस, सोहत निपानिसर,
शवर समूह कैधों ग्रीषम प्रकासु है॥ ३० ॥

यह शवर-समूह (भीलों या जंगली मनुष्यों का दल) है या ग्रीष्म ऋतु ? क्योंकि जिस प्रकार शवर समूह चडकर कलित (बलवती भुजाओं से युक्त) और बलितवर (बल से युक्त) और सदागति (सदा घूमने

वाला होता है। वह कद, मूल, फल, और दलों या पत्तों का नाश करता है और उसके मारे कीचड़, मछलिया, बिलों में घुसे सॉप और गुफाओं मे घुसे हुसे हुए कोल (वाराह) तथा द्विरद (हाथी) कहीं बच पाते है ? अर्थात् नहीं बचपाते। यह तो उनका दिन कृत अर्थात् दिन प्रतिदिन का विलास या मनोरजन है। वह (शवरदल) वन-वन में घूमकर चर और अचर जीवों का जीवन हरण करता रहता है और (केशवदास कहते हैं) कि उनका निवास स्थान मृगशिर (हिरनों के शिर) तथा श्रवण (कानों) से भरा रहता है अर्थात् उनके निवास स्थान में हिरनों के कटे हुए अग-प्रत्यंग मिला करते हैं या मृगों के शिरों से श्रवित (टपकता हुआ) रक्त भरा रहता है। वह थल बली (शवरदल) हाथ में धनुष और निपानि (अचूक) सर (बाण) लिए घूमता रहता है।

उसी प्रकार—

ग्रीष्म भी चडकर कलित (सूर्य की प्रचड किरणों से युक्त) रहता है और सदागति अर्थात् श्रेष्टवायु या लू के झोंकों से युक्त रहता है। उसमें कद, मूल, फल, फूल और पत्तों का नाश होता रहता है। ग्रीष्म मे दिनकृत (सूर्य) का विलास (प्रभाव) ऐसा रहता है कि कीचड़ में मछलिया, बिल में घुसकर सर्प और गुफाओं मे घुनकर कोल (सूअर) तथा द्विरद (हाथी) किसी प्रकार बच पाते हैं। ग्रीष्म थल और जल के चर अचर जीवों का जीवन (बल) हरने वाला होता है। इसमें मृगशिरा नक्षत्र तपता है और श्रवन अर्थात् बरसता नहीं। इसमें बली (गैंडाजन्तु) धनुस अर्थात् मरुभूमि की भाति हत-प्यासा-होकर निपानि सर (पानी रहित) तालाब की ओर दौड़ता रहता है।

(३) वर्षा वर्णन

दोहा

बरषा हँस पयान, बक,-दादुर चातक मोर
केतकि पुष्प, कदम्ब, जल, सौदामनी घनघोर ॥२१॥

वर्षा में हंसों का मानसरोवर को पयान, बक (बगला), दादुर (मेंढक), चातकपक्षी, और मोर, केतकी पुष्प, कदम्ब, जल (वर्षा) बिजली तथा बादलों की गड़गड़ाहट का वर्णन किया जाता है।

उदाहरण

कवित्त

भौंहैं सुरचाप चारु प्रमुदित पयोधर,
भूख न जराय जोति तड़ित रलाई है।
दूरि करी सुख मुख सुखमा ससी की नैन,
अमल कमल दल दलित निकाई है।
'केशौदास' प्रबल करेनुका गमन हर,
मुकुत सुहंसक-सबद सुखदाई है।
अंबर बलित मति मो है नीलकंठ जू की,
कालिका कि वर्षा हरषि हिय आई है ॥२२॥

यह कालिका देवी है या हृदय को हरषाती हुई वर्षाऋतु आई है, क्योंकि इन्द्रधनुष ही उनकी सुन्दर भौंहें है, बादल उन्नत कुच हैं, बिजली की चमक उनके जडाऊ गहनों की ज्योति है। उन्होंने अपने मुख की शोभा से चन्द्रमा की शोभा को दूर कर दिया है और उनके नेत्रों ने स्वच्छ कमलों की पखुड़ियो की शोभा को भी दलित कर दिया है। 'केशवदास' कहते हैं कि वह मतवाली हथिनी की चाल को भी हरने वाली हैं। उनके विछुओं की ध्वनि स्वच्छन्द रूप से हो रही है। जो सुख देने वाली है। उन्होंने नीला कपड़ा पहन लिया है और नीलकंठ (श्रीशंकरजी) की मति को मोहित करती है। उसी प्रकार—

वर्षा में भौ (भय) है अर्थात् अनेक तरह के कीड़े पतगों का भय है। सुर-चाप (इन्द्रधनुष) दिखलायी पड़ता है, उमड़े हुए बादल दृष्टिगोचर होते है और बिजली की चचल चमक दिखलयी पड़ती है। चन्द्रमा के मुख की शोभा दूर हो गई है और (नैन अमल) नदिया

स्वच्छ नहीं रहती । 'केशवदास' कहते हैं कि प्रबलक अर्थात् प्रबल जलधारा रेनुका हर (धूल को बहा ले जानेवाली) हो जाती है और गमन अर्थात् चलना फिरना रुक जाता है। हंसों के सुखदाई शब्दों में देश भर रहित हो जाता और भौंरों की मति मोहित होती है।

(४) शरद वर्णन

दोहा

अमल अकास प्रकास ससि, मुदित कमल कुल काँस।
पथी, पितर पयान नृप, शरद सु केशवदास ॥३३॥

'केशवदास' कहते हैं कि शरद ऋतु में आकाश निर्मल हो जाता है, चन्द्रमा का प्रकाश उज्ज्वल दिखलाई पड़ता है, कमल तथा कास मुदित होते हैं (फूलते हैं) और पथिक, पितर तथा राजाओं का पयान (गमनागमन) आरम्भ होता है।

उदाहरण

कवित्त

सोभा को सदन, ससि बदन मदन कर,
वंदै नर देव कुवलय वरदाई है।
पावन पद उदार, लसति हंस क मार,
दीपति जलज हार दिसि दिसि धाई है।
तिलक चिलक चारु लोचन कमल रुचि
चतुर चतुर मुख जग-जिय भाई है।
अमर अवर नील लीन पीन पयोधर,
'केशौदास शारदा कि शरद सुहाई है ॥३४॥

'केशवदास' कहते हैं कि यह श्री शारदा जी हैं या सुन्दर शरद ऋतु है, क्योंकि जिस प्रकार श्रीशारदा जी का मुख शोभा युक्त चन्द्रमा की भाँति होता हुआ भी मद या अभिमान उत्पन्न करने वाला नहीं है अर्थात् (उन्हें अपने मुख की शोभा का तनिक भी अभिमान नहीं है)।

देवता और मनुष्य सभी उनकी वंदना करते हैं और वह कुवलय अर्थात् पृथ्वी मडल को वर दिया करती हैं अथवा बल प्रदान करती है। उनके पवित्र चरणों में सुन्दर भूषण सुशोभित होते हैं और उनके मोतियों के हार की चमक सुन्दर है तथा चारों दिशाओं में छाई हुई है। उनके तिलक की चमक भी सुन्दर है और नेत्र कमल जैसे हैं तथा नीलाम्बर में उनके पुष्ट कुच छिपे हुए है। उसी प्रकारः—

शरद ऋतु का मुख शोभा युक्त है तथा चन्द्रमा जैसा है तथा वह मदन कर अर्थात् कामोद्दीपन करनेवाला है। नर-देव या राजा लोग शरद ऋतु की वदना करते हैं क्योंकि इसी ऋतु में वे विजय यात्रा को निकलते हैं। वह कुवलय (कमलों) को वरदाई अर्थात् बल देने वाली है। शरद ऋतु में, पवित्र स्थानों पर हसों की पक्तिया शोभा देती हैं और दिशाओं, दिशाओं में कमलों की शोभा दिखलाई पड़ती है। तिलक वृक्षों की चमक आँखों को रुचिकर होती है तथा चारों ओर मनुष्यों को अच्छी लगती है। नीले विस्तृत आकाश में बादल लीन दिखलाई पड़ते हैं।

(५) हेमंत वर्णन

तेल, तूल, तांबूल तिय, ताप, तपन रतिवंत।
दीह रजनि लघु द्यौस सुनि, शीत सहित हेमंत ॥३५॥

हेमन्त में तेल, तूल (रूई), तिय (स्त्री), ताप (अग्नि), तपन (सूर्य) अच्छे लगते हैं और मनुष्य रतिवत (कामपीड़ित) हो जाते हैं। रातें बड़ी होती हैं और दिन छोटा होता है तथा शीत बहुत पड़ता है।

उदाहरण

कवित्त

अमल कमल दल लोचन ललित गति,
जारत समीर सीत, भीत दीह दुख की।
चंद्रक न खायो जाय, चंदन न लायो जाय,
चदन चितयो जाय प्रकृति वपुष की।

घट की घटति जाति घटना घटीहू घटी,
छिन छिन छीन छवि रविमुख सुख की।
सीकर तुषार स्वेद सोहत हेमंत ऋतु,
किधौं 'केशौदास' प्रिया प्रीतम विमुख की ॥३६॥

'केशवदास' कहते हैं कि यह हेमत ऋतु है या अपने प्रियतम से अलग वियोगिनी स्त्री है। क्योंकि हेमत ऋतु मे जिस प्रकार निर्मल कमल दलो में लोच-न अर्थात् शोभा नहीं रहती और शीत समीर उन्हें धीरे धीरे जलाये डालता है और इसमें दुःखों का बड़ा डर रहता है। लोगों मे मारे ठड के न तो पानी पिया जाता है और न चदन लगाया जाता है तथा न चन्द्रमा की ओर देखा ही जाता है। इस ऋतु में शरीर की ऐसी ही प्रकृति हो आती है। दिन की घड़ियाँ दिन दिन घटती जाती हैं अर्थात् दिन छोटा होता जाता है और सूर्य के मुख की शोभा क्षण क्षण क्षीण होती जाती है। अर्थात् सूर्य ताप में बल नहीं रहता। इस हेमन्त ऋतु मे तुषार के सीकर (कण) लोगों को अच्छे लगते हैं और किसी प्रकार गर्मी पाकर शरीर मे पसीना आने लगे तो वह अच्छा लगता है।

उसी प्रकार—वियोगिनी स्त्री के कमल-दल जैसे लोचनों (नेत्रों) तथा उसकी ललित गति (सुन्दर चाल) को, शीत वायु जलाए डालता है। उसे दुःखों का बड़ा भय लगा रहता है। उसके शरीर का कुछ ऐसा स्वभाव हो जाता है कि न तो उससे पानी पिया जाता है, न खाया-जाता है और न चदन लगाया जाता है और न चन्द्रमा की ओर देखा ही जाता है। उसके शरीर की रचना दिन दिन घटती जाती है अर्थात् वह दुबली-पतली होती जाती है तथा उसके सूर्य जैसे चमकीले मुख की चमक तथा सुख क्षण-क्षण क्षीण होता जाता है और उसे (वियोग की तपन के मारे) तुषार के सीकर (कण) पसीने की बूंदों जैसे भासित होते हैं।

आठवां-प्रभाव

राज्य श्री भूषण वर्णन

(दोहा)

राजा, रानी, राजसुत, प्रोहित, दलपति दूत।
मंत्री, मंत्र, पयान, हय, गय, संग्राम अभूत ॥१॥
आखेटक, जल केलि, पुनि, विरह, स्वयंबर जानि।
भूषित सुरतादिकनि करि, राज्यश्रीहि बखानि ॥२॥

राज्यश्री के वर्णन मे राजा, रानी, राजकुमार, पुरोहित, सेनापति, दूत, मत्री, मत्र (सम्मति), प्रयाण (विजय करने के लिए सेना का गमन) घोड़े, हाथी तथा अपूर्व सग्राम का उल्लेख करना चाहिए। इनके अतिरिक्त आखेट, जल-क्रीड़ा, वियोग, स्वयवर, और सुरत आदि विषयों का वर्णन भी करना चाहिए।

राजा वर्णन।

प्रजा, प्रतिज्ञा, पुण्यपन, धर्म, प्रताप, प्रसिद्धि।
शासन नाशन शत्रु के, बल विवेक की वृद्धि ॥३॥
दड, अनुग्रह, धीरता, सत्य, शूरता, दान।
कोश, देश युत बरणिये, उद्यम, क्षमा निधान ॥४।

राजा का वर्णन करते समय प्रजा का ध्यान, दृढ प्रतिज्ञा, पुण्य करने का प्रण, धर्म, प्रताप, प्रसिद्धि, शासन, शत्रुओ का नाश, बल और विवेक की वृद्धि, दड, अनुग्रह (दया), धीरता, सत्य, शूरता, दान, कोश, देश, उद्यम (प्रयत्न) तथा क्षमा आदि विषयों का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

(कवित्त)

नगर नगर पर घन ही तौ गाजैं घोर,
ईति की न भीति, भीति अघन अधीर की।
अरि नगरीन प्रति करत अगम्या गौन,
भावै व्यभिचारी, जहाँ चारी परपीर की।
शासन को नाशन करत एक गंधवाह,
'केशौदास' दुर्गनहीं दुर्गति शरीर की।
दिसि दिसि जीति पै अजीति द्विजदीननिसों,
ऐसी रीति राजनीति राजै रघुवीर की ॥५॥

श्रीरामचन्द्र जी की राजनीति से देशभर में ऐसी सुख-शान्ति विराज रही है कि नगरों पर चढ़ाई करनेवाला कोई नहीं है, केवल बादल ही उनपर घोर गर्जना किया करते हैं। ईतियों (खेती को हानि पहुचाने वाले सात प्रकार के भय) का कोई भय नहीं है। भय है तो केवल पाप और अधीरता का है। अगम्या गमन केवल शत्रुओं की नगरी पर ही किया जाता है। केवल भाव ही व्यभिचारी हैं (अर्थात् केवल भावों का उल्लेख करते समय व्यभिचारी शब्द सुनाई पड़ता है, नहीं तो वास्तविक व्यभिचारी कोई है ही नहीं) और दूसरों की पीड़ा की ही चोरी की जाती है अन्यथा चोरी है ही नहीं। शासन (आज्ञा) का नाश (उल्लघन) केवल वायु करती है अर्थात चाहे जहाँ बिना रोक-टोक आया करती है। 'केशवदास' कहते हैं कि उनके राज्य मे केवल दुर्गों (किलों) ही के शरीरों की दुर्गति रहती है, क्योंकि उन्हीं के शरीर टेढ़े-मेढ़े रहते हैं अन्यथा किसी की भी दुर्गति नहीं होती। उनकी राजनीति सभी स्थानों मे जीतती है परन्तु केवल ब्राह्मणों और दीनों से नहीं जीत पाती।

राजकुमार को विविध विद्याओं का ज्ञाता, विनोद युत (विनोदी अर्थात् सदा प्रसन्न रहने वाला) शीलवान, आचारवान, सुन्दर, शूर, उदार, और सामर्थ्यशाली वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

दानिन के शील, परदान के प्रहारी दिन,
दानवारि ज्यों निदान देखिये सुभाय के।
दीप दीप हू के अवनीपन के अवनीप,
पृथु सम 'केशौदास' दास द्विज गाय के।
आनॅद के कंद, सुरपालक से बालक ये,
परदार प्रिय, साधु मन, वच, काय के।
देह धर्म धारी पै विदेह राज जू से राज,
राजत कुमार ऐसे दशरथ राय के॥१०॥

दानियों के स्वभाव वाले हैं, शत्रुओं से प्रहार पूर्वक दान लेनेवाले हैं और अन्त मे विष्णु जैसे स्वभाव के दिखलाई पड़ते हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि द्वीप-द्वीपों के राजाओं के भी पृथु के समान चक्रवर्त्ती राजा हैं परन्तु फिर भी ब्राह्मण और गाय के सेवक हैं। ये बालक आनन्द के कद (आनन्ददायक) और सुरपालक (इन्द्र) के समान हैं। लक्ष्मी अथवा पृथ्वी के प्यारे तथा मन, वचन, और कर्म से पवित्र हैं। हे राजा! देह धर्म-धारी (शरीरधारी) होने पर भी विदेह जैसे ये राजा दशरथ के राजकुमार हैं।

पुरोहित वर्णन

दोहा

प्रोहित नृपहित वेद-विद, सत्यशील शुचि अंग।
उपकारी, ब्रह्मण्य, ऋजु जीत्यो जगत अनंग॥११॥

पुरोहित को राजा का हितैषी, वेद का ज्ञाता, सत्यवक्ता, पवित्र; उपकारी, ब्रह्म में लीन, सीधे स्वभाव वाला, तथा कामजित (जितेन्द्रिय) होना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

कीन्हो पुरहूत मीत लोक लोक गाये गीत,
पाये जु अभूतपूत, अरि उर त्रास है।
जीते जु अजीतभूप, देस-देस वहुरूप,
और को न 'केशौदास' बल्ल को बिलास है।
तोरयो हर को धनुष, नृप गण गे विमुख,
देख्यो जो वधू को मुख सुखमा को वास है।
ह्वै गये प्रसन्नराम, बाढ़ो धन, धर्म, धाम,
केवल वशिष्ठ के प्रसाद को प्रकास है ॥१२॥

राजा दशरथ ने इन्द्र को जो मित्र बनाया, लोक लोक में जो उनकी प्रशंसा के गीत गाये गये। उन्हें जो अभूत पूर्व पुत्रों की प्राप्ति हुई तथा उन्होंने देश देश के अनेक अजीत (न जीते जाने योग्य) राजाओं को जीता, सो 'केशवदास' कहते हैं कि यह किसी और के बल के कारण नहीं हुआ, यह केवल वशिष्ठमुनि की प्रसन्नता के प्रभाव के कारण ही हुआ। इसी प्रकार 'श्रीरामचन्द्र' ने शिवजी का धनुष तोड़ा, अन्य राजागण विमुख होकर चले गये, अति सुन्दर वधू का मुख देखा, परशुराम भी प्रसन्न होकर गये, और धन तथा धर्म की वृद्धि हुई, यह भी उन्हीं वशिष्ठ गुरु की प्रसन्नता के प्रभाव के कारण ही हुआ।

दलपति वर्णन

दोहा

स्वामिभगत, श्रमजित, सुधी, सेनापती अभीत।
अनालसी, जनप्रिय, जसी, सुख, संग्राम अजीत ॥१३॥

'केशवदास' विभीषण की प्रशसा मे श्रीरामचन्द्र की ओर से भरत से कहते हैं कि किसी प्रकार समुद्र का पुल बाँधकर रीछो से लका की भूमि को छा दिया, तो क्या हुआ ? सूर्यसुत-सुग्रीव और बालिपुत्र अगद तथा नल-नील क्या थे और उनकी गिनती ही क्या थी। हनुमान भी कितने बलवान थे ? बलपूर्वक तो यमराज से भी लका नहीं ली जा सकती थी। मैंने जो लका को प्राप्त किया, वह अच्छी बात मंडन करने वाले तथा दूषणों (बुरी बातों) की निन्दा करने वाले, विभीषण के मत से ही प्राप्त की।

(२)

युद्ध जुरे दुरयोधनसों कहि, कौन करी यमलोक बसीत्यो।
कर्ण, कृपा द्विजद्रोणसों बैर कै काल बचै बर कीजै प्रतीत्यो।।
भीम कहा बपुरो अरु अर्जुन, नारि नंग्यावतही बल रीत्यो।
केशव केवल केशव के मत भूतल भारत पारथ जीत्यो ।।१९।।

दुर्योधन से युद्ध करके, बतलाओ, कौन ऐसा है जो यमलोक को बसती या निवास-स्थान न बनाता ? अर्थात् कौन ऐसा है जो यमलोक न जाता ? कर्ण, कृपाचार्य, और द्रोणाचार्य से बैर करके काल भी अपने बल से बच सकता—इसका कहीं विश्वास किया जा सकता है ? भीम और अर्जुन बेचारे क्या थे—उनका बल तो स्त्री-द्रौपदी के नंगी होते समय ही समाप्त हो गया था। 'केशवदास' कहते हैं कि केवल श्रीकृष्ण के मत्र से ही युधिष्ठिर ने महाभारत को जीता था।

मंत्री मतिवर्णन

दोहा

पांच अंग गुण संग षट, विद्या युत दश चारि।
आगम सगम निगम मति, ऐसे मंत्र विचारि ।।२०।।

जिस मत्री को राजनीति के पाँच [(१) साहाय्य, (२) साधन, (३) उपाय, (४) देशज्ञान और (५) काल ज्ञान] अग और राजाओं से

व्यवहार करने के छः [(१। संधि, (२) विग्रह, (३) यान, (४) आसन, (५) द्वैधीभाव और (६) (सश्रय)] अग का ज्ञान हो। जो चौदहों [(१) ब्रह्मज्ञान, (२) रसायन, (३) स्वरसाधन (४) वेदपाठ (५) ज्योतिष (६) व्याकरण (७) धनुर्विद्या (८) जलतरण (९) वैद्यक (१०) कृषिविद्या (११) कोकविद्या, (१२) अश्वारोहण (१३) नृत्य और (१४) समाधान करण चातुर्य] विद्याओं को जानता हो, तथा जिसे आगम (भविष्य) सगम (वर्त्तमान), और निगम (भूत) की जानकारी हो, उसीसे राजा को सम्मति लेनी चाहिए।

उदाहरण

सवैया

केशव मादक क्रोध विरोध तजो सब स्वारथ बुद्धि अनैसी।
भेद, अभेद, अनुग्रह, विग्रह, निग्रह संधि कही विधि जैसी।
वैरिन को विपदा प्रभु को प्रभुता करै, मत्रिन की मति ऐसी।
राखत राजन, देवन ज्यों दिन दिव्य विचार विमानन वैसी ॥२१॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिस मत्री ने मादक वस्तुओं का उपयोग, क्रोध, विरोध, तथा स्वार्थसाधन की बुरी बुद्धि को छोड़ दिया हो, जो भेद, अभेद, अनुग्रह, विग्रह, निग्रह और सधि के बतलाए हुए नियमों का जानकार हो, और जिसकी बुद्धि वैरियों पर विपत्ति डालनेवाली तथा अपने स्वामी की प्रभुता को बढाने वाली हो, उसकी बुद्धि तथा दिव्य विचारों से राजा इस प्रकार रक्षित रहते हैं, जिस प्रकार विमानों से देवता गण सुरक्षित रहा करते हैं।

पयान वर्णन

दोहा

चवॅर, पताका छत्ररथ, दुंदुभि ध्वनि बहु यान।
जल थल मय भूकंप रज. रंजित वरणि पयान ॥२२॥

'जिस आकाश को वामन ने दो पैरों से ही नाप लिया था, उसे हम चार पैर वाले होकर क्या नापें' यह सोचकर घोड़े पृथ्वी पर स्थिर रहते हैं। समुद्र ने (जो हमारे पिता हैं) समस्त पृथ्वी को घेर रखा है, तब हम क्या घेरें, यह सोचकर राजा के छत्र के नीचे ही, अपनी दौड़ छोड़कर, इस तरह चचलता पूर्वक चक्राकार घूमते हैं कि मानो चाक को मोल लिए लेते हैं अर्थात् चाक से भी बढ़कर घूमते हैं। जो मन के मित्र अर्थात् वेगगामी हैं, जो समीर (वायु) के वीर-वाहन हैं अर्थात् अत्यन्त द्रुतगतिवाले हैं, जो नेत्रों को बाँधने के लिए रस्सी स्वरूप हैं अर्थात् जिन्हे देखकर आँखें उन्हीं को देखती रह जाती हैं और जो नेत्रों के प्रेम का स्थान हैं अर्थात् आँखें उनको प्रेम पूर्वक देखना चाहती हैं, जो गुणों (शुभ लक्षणों) से युक्त और 'केशवदास' कहते हैं कि सुन्दर चाल चलने वाले हैं, ऐसे घोड़ों को श्रीरामचन्द्र जी दीनों को दिया करते हैं।

गजवर्णन

(दोहा)

मत्त, महावत हाथ में मन्दचलनि, चल कर्ण।
मुक्तामय, इभकुंभ शुभ सुन्दर शूर, सुवर्ण ॥२७॥

हाथी का मत्त (मतवाला), महावत के वश मे, धीमी चाल वाला, हिलते हुए कानो का, गज-मुक्ता युक्त, सुन्दर मस्तक का, शुभ, सुन्दर, शूर, और सुवर्ण (देखने मे अच्छा) होना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

जल कै पगार, निज दल के सिंगार, अरि,
दल को विगार करि, पर पुर पारैं रौरि।
ढाहैं गढ़, जैसे घन, भट ज्यों भिरत रन,
देति देखि आशिष गणेश जू के भोरे गौरि।

बिंध के से बांधव, कलिदनंद से अमंद,
वंदन कै सूंड भरे, चन्दन की चारु खौरि।
सूर के उदोत, उदै गिरि से उदित अति,
ऐसे गज राज राजैं राजा रामचन्द्र पौरि ॥२८॥

राजा रामचन्द्र जी की पौर (दरवाजे) पर ऐसे हाथी सुशोभित हो रहे हैं जो जल के पगार अर्थात् गहरे पानी को पैदल ही पार करने वाले, अपने दल की शोभा और वैरियों के दल को बिगाड़ कर उनके नगरों मे कोलाहल मचा देनेवाले हैं। वे दुर्गों को ढहादेने वाले हैं, बादल जैसे (काले) हैं, युद्ध में योद्धाओं की भाँति लड़ते हैं और जिन्हें गणेशजी के धोखे में, पार्वती जी आशीर्वाद दिया करती है। जो विन्ध्याचल पहाड़ जैसे (ऊँचे) हैं, कलिन्द पहाड़ के पुत्र जैसे (काले-काले) हैं, सुन्दर हैं, जिनकी सूड़े वंदन (सिंदूर) से रंगी हुई हैं जिनके चन्दन की सुदर खौरें लगाई गई हैं और जो सूर्योदय के समय उदयाचल जैसे अति सुन्दर प्रतीत होते हैं।

संग्राम वर्णन

दोहा

सेना स्वन, सनाह, रज, साहस, शस्त्रप्रहार।
अंग-भंग, संघट्ट भट, अंधकबन्ध अपार ॥२९॥

केशव वरणहु युद्ध में, योगिनगणयुत रुद्र।
भूमि भयानक रुधिरमय सरवर सरितसमुद्र ।३०॥

'केशवदास' कहते हैं संग्राम का वर्णन करते समय सेना, कोलाहल. कवच, (उड़ती हुई) धूल, साहस, शस्त्रों का प्रहार, अंग-भंग, योद्धाओं का समूह, अंधकार, सिर कटे हुए धड़, योगिनियों के साथ रुद्र और रुधिरमय भयानक भूमि-आदि को तालाब, नदी, तथा समुद्र का रूपक देते हुए वर्णन करो।

इन्द्रजू के अकबक, धाताजू के धकपक,
शंभु जू के सकपक 'केशौदास' को कहै।
जब जब मृगया को राम के कुमार चढ़ैं,
तब तब कोलाहल होत लोक लोक है ॥३५॥

जब-जब मृगया के लिए श्रीरामचन्द्र जी के कुमार (लव और कुश) जाते हैं, तब-तब ससार में खलबली मच जाती है। कामदेव के मन में उदासी छा जाती है (क्योंकि उसे इस बात का भय लगता है कि वे मेरी सवारी के मकर का शिकार न करलें) और पार्वती के पर्वत-कैलाश की तो गली-गली में रोक हो जाती है। (क्योंकि वहाँ पार्वती जी को भय होता है कि मेरी सवारी सिंह का आखेट न कर बैठें, या हाथी के धोखे श्रीगणेश जी को न बाँध डालें)। सेनानी अर्थात् शिवजी के बड़े पुत्र सोम कार्त्तिकेय जी सटपटा गये हैं कि मेरे मोर की खबर न ले बैठें; चन्द्रमा के मन में चटपटी मची है कि मेरा हिरन न मारा जाय और यमराज महाराज के घर तो बड़ी अटपट कठिनाई का अनुभव होने लगता है क्योंकि उन्हें अपने भैंसे की चिन्ता सवार हो जाती है कि कहीं वही उनके दाँव में न आजाय। इन्द्र अकबका जाते हैं कि मेरा ऐरावत हाथी उनकी दृष्टि में न आजाय, ब्रह्माजी के मन में अपने हस के लिए धक-पक मच जाती है और 'केशवदास' कहते हैं कि श्री शकर जी अपने नंदी के लिए ऐसे सकपका जाते हैं कि उसका वर्णन कोई क्या कर सकता है।

जलकेलि वर्णन

दोहा

सर, सरोज, शुभ, शोभ भनि हिय सों पिय मन मेल।
गहिबो गत भूषणनिको, जलचर ज्यों जल केलि ॥३६॥

जल-क्रीड़ा के वर्णन में तालाब, कमल, सुन्दर शोभा, प्रियतम से हृदय से हृदय मिलाकर गोता लगाने, गिरे हुए गहनों को नीचे तक

पहुँचने के पहले पकड़ने, तथा जलचरों की भाँति जल में क्रीड़ा करने का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

एक दमयंती ऐसी हरैं, हँसि हंस वंस
एक हंसिनी सी बिसहार हिय रोहिये।
भूषण गिरत एक लेत बूडि बीचि बीच,
मीन गति लीन, हीन उपमान टोहिये॥
एकै मत कै कै कंठ लागि बूड़ि बूडि जात,
जल देवता सी दृग-देवता विमोहिये।
'केशौदास' आस-पास भँवर भँवत जल—
केलि में जलज मुखी जलज सी सोहिये॥३७॥

'केशवदास' कहते हैं कि जल-क्रीड़ा में कमल-मुखी सुंदरियाँ कमल के समान सुशोभित हो रही हैं। उनमें से कोई दमयन्ती के समान हँसती हुई हंस के बच्चों को पकड़ने दौड़ती है, किसी हंसिनी जैसी सुन्दरी के गले में मृणाल का हार सुशोभित हो रहा है। कोई गिरे हुए गहनों को, लहरों में गोता लगाकर निकाल लेती हैं। उनकी चंचलता के आगे मछली की गति भी कुछ नहीं है अतः उसकी उपमा खोजना व्यर्थ है। कुछ आपस में सलाह करके, पानी में गले तक डूब जाती हैं, वे जल-देवता जैसी प्रतीत होती हैं, और जिन्हें देखकर नेत्र विमोहित हो जाते हैं। उनके आस-पास भँवर चक्कर काटते हैं।

कमल-नैनी (जल से भरे हुए नेत्र वाली) हो जाऊँगी। अर्थात् ध्यान में देखने पर और भी रोऊँगी। और अधिक क्या कहूँ? ये आप (पानी) के भरे घनश्याम (बादल) मेरे लिए तो घन (हथौड़े) के समान हो रहे हैं। मैं सावन के दिनों में घनश्याम के बिना कैसे रहूँ?

(३)

सवैया

मेंहके हैं सखि आँसू उसासनि साथ निशा सुविसासिनि बाढ़ी।
हास गयो उड़ि हंसिनि ज्यों, चपलासम नींदगई गति काढ़ी॥
चातक ज्यों पिवपीव रटै चढ़ि, तापतरंगिनि ज्यों अति गाढ़ी।
केशव वाकी दशा सुनिहौ अब आगि बिन। अँगअंगनि डाढ़ी।४२॥

हे सखी! उसके आँसू क्या हैं, मानो मेह है (वर्षा हो रही है)। उसकी श्वासों के साथ ही यह विश्वासघातिनी रात भी बढ़ गई है। उसकी हँसी तो हंस की तरह कहीं उड़कर चली गई है और नींद तो चचला (बिजली) की गति से भी आगे बढ़ गई है। जैसे बिजली क्षण मात्र के लिए चमक जाती है, वैसे क्षण मात्र को ही आकर चली जाती है) वह चातक की तरह बार-बार 'पी, पी' की पुकार करती रहती है और उसके शरीर मे ताप (जलन) की अति गाढ़ी (बहुत तीव्र) तरगे उठ रही हैं। (शरीर वियोगाग्नि से जल रहा है)। 'केशवदास' (सखी ओर से सखी की दशा का वर्णन करते हुए सखी से) कहते हैं कि 'तुम उसकी दशा क्या सुनोगी? बिना आग के ही बेचारी के अंग-अंग जले जा रहे हैं।'

(४)

सवैया

भूलि गयो सबसों रसरोष, मिटै भवके भ्रम रैनि विभातो।
को अपने परको पहिचानत, जानत नाहिनै शीतल तातो॥
नीकहीं में वृपभानललाकी भईसु, न जीकी कहीपरै बातो।
एकहिबेर न जानिये केशव काहेते छूटगये सुखसातो॥ ४३॥

उसका सबसे प्रेम और क्रोध करना भूल गया। ससार के भ्रम स्वरूप रात-दिन के ज्ञान का आभास भी मिट गया। (अर्थात् रात और दिन की पहचान भी नहीं रही)। 'कौन अपना है ? कौन पराया ?' इनकी भी पहचान नहीं रही। ठंड और गर्म की पहचान भी जाती रही थोडी ही देर में राधा की ऐसी दशा हो गई कि कुछ कहते नहीं बनता। हे केशव (कृष्ण) ! पता नहीं, एकही बार में (अचानक) उसके सातो सुख क्यों छूट गये हैं ?

स्वयंवरवर्णन

दोहा

शची स्वयम्बर रक्षिणी, मण्डल मंचबनाव।
रूप, पराक्रम, वंशगुण, वर्णिय राजा राव ॥४४॥

स्वयंवर की रक्षिणी या अधिष्ठात्री शची (इन्द्राणी), मंडलाकार मच की बनावट, और राजा-रावों के रूप, पराक्रम, वंश तथा गुणों का उल्लेख स्वयम्बर के वर्णन में करना चाहिए।

उदाहरण

सवैया।

मण्डली मचनिकी नृपमण्डल, मण्डित देखिये देव सभासी।
दन्तनिकी द्युति देहकी दीपति, भूषणज्योति समेत अभासी॥
फूलनिकी छवि अम्बर की छवि छत्रनकी छवि तन्क्षण भासी।
मोहत है अति सीयस्वयम्बर आनन चन्द्र प्रवेश प्रभासी॥ ४५॥

सीताजी के स्वयवर में मंचों की मडली है। उन पर बैठी हुई राजाओं की मण्डली देव-सभा सी जान पडती है। उनके दाँतों की द्युति, शरीरों की चमक तथा गहनों की कान्ति अनन्त आभा सी जान पडती है। फूलों की शोभा, आकाश की छवि, तथा गजछत्रों की शोभा भी उस समय प्रकाशित हो रही है। उस स्वयवर के बीच में सीता

नवां-प्रभाव

[विशिष्टालंकार वर्णन]

जानि, स्वभाव,. विभावना, हेतु, विरोध, विशेष ।
उत्प्रेक्षा, आक्षेप, क्रम गणना, आशिष लेष ॥ १ ॥
प्रेम, सुश्लेष, सभेद है, नियम विरोधी मान ।
सूक्षम, लेश निदर्शना, ऊर्जः सुर सब जान ॥ २ ॥
रस, अर्थांतरन्यास है, भेद सहित व्यतिरेक ।
फेरि अपह्नुति उक्ति है, वक्रोकति सविवेक ॥ ३ ॥
अन्योकति व्यधिकरन है, सुविशेषोकति भाषि ।
फिरि सहोक्तिको कहत हैं, क्रमही सों अभिलाषि ॥ ४ ॥
व्याजस्तुति निदा कहैं, व्याजनिंदा स्तुतिवंत ।
अमित, सुपर्यायोक्ति पुनि, युक्ति, सुनैं सबसंत ॥ ५ ॥
सुसमाहित जुप्रसिद्ध है, और कहे विपरीत ।
रूपक, दीपक, भेदपुनि, कहि प्रहेलिका मीत ॥ ६ ॥
अलकारपरवृत्त कहै, उपमा, जमक सुचित्र ।
भाषा इतनै भूषणनि, भूषित कीजै मित्र ॥ ७ ॥

हेमित्र ! स्वभाव, विभावना, हेतु, विरोध, विशेष, उत्प्रेक्षा, आक्षेप क्रम, गणना, आशिष, प्रेम, श्लेष (नियम और विरोधी), सूक्ष्म, लेष निदर्शना, ऊर्जस्वर, रसवत, अर्थान्तन्यास, व्यतिरेक अपन्हुति, उक्ति, (वक्र, अन्य, व्याधिकरण, विशेष और सह) व्याजस्तुति, व्याजनिन्दा अमित, पर्यायोक्ति, युक्ति, समाहित, प्रसिद्ध, विपरीत, रूपक, दीपक, प्रहेलिका, परिवृत्त, उपमा, यमक और चित्र अलकारों से, अपनी भाषा को सजाइए ।

१—स्वभाव

जाको जैसो रूप गुण, कहिये ताही साज।
तासों जानस्वभाव कहि, बरणतहैं कविराज ॥८॥

जिस व्यक्ति या वस्तु का जैसा रूप अथवा गुण हो, उसको उसी प्रकार से वर्णन करने को कविराज 'स्वभाव' या 'स्वभावोक्ति' कहते हैं।

उदाहरण (१)

रूप वर्णन

(कवित्त)

पीरी पीरी पाट की पिछौरी कटि केशौदास,
पीरी पीरी पागैं पग पीरीये पनहियां।
बड़े बड़े मोतिन को माला बड़े बड़े नैन,
भृकुटी कुटिल नान्ही नान्हीं बघनहियां।
बोलनि, चलनि मृदु हँसनि चितौनिचारु,
देखत ही बनै पै न कहत बनै हियां।
सरजू के तीर तीर खेलैं चारों रघुबीर,
हाथ द्वै द्वै तीर राती रातियै धनुहियां ॥६॥

'केशवदास' कहते हैं कि पीले पीले कपड़े की पीली-पीली पिछौरी कमर मे कसे हुए हैं, पीली ही पगड़ियाँ पहने हुए हैं और पैरों में भी पीले ही जूते पहने हैं। बड़े-बड़े मोतियों की मालाए गले में पड़ी हुई हैं। बड़ी-बड़ी उनकी आँखें हैं, भौहें टेढ़ी हैं और छोटे छोटे बाघ के नख पहने हैं। उनका बोलना, चलना, मृदु मुसकाना और सुंदरता के साथ देखना देखते ही बनता है, कहते नहीं बनता। सरयू के किनारे रघुवंश के चारों कुमार (श्रीराम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न) खेल रहे हैं। उनके हाथों में दो दो लाल लाल तीर हैं और लाल लाल ही धनुष भी हैं।

उदाहरण

सवैया

नेकहू काहू नवाई न वानी, नवाये बिनाहीं सुवक्र भई है।
लोचनश्री विझुकाये बिना, विझुकी नी बिना रँगरागमईहै॥
केशव कौनकी दीनी कहो यह, चंदमुखी गति मंद लई है।
छोली न, छोहि गई कटि छीन सुयौवन की यह युक्ति नईहै ॥१४॥

उसकी वाणी को किसी ने नवाया (झुकाया) नहीं है, बिना झुकाये ही यह टेढ़ी हो गई है। इसी तरह आँखों की शोभा भी बिना चचल किए ही चचल हो रही है और बिना रंग के ही रजित सी प्रतीत हो रही है। 'केशवदास' कहते हैं कि बतलाओ, इस चदमुखी ने किसकी दी हुई मदचाल प्राप्त की है? अर्थात् इसकी यह धीमी चाल किसकी दी हुई है? बिना छीले हो इसकी कमर क्षीण हो चली है। यौवन (युवावस्था) की यह युक्ति अद्भुत है।

३—हेतु

हेतु होत है भांति द्वै, वरणत सब कविराव।
'केशवदास' प्रकाश करि, बरणि सुभाव अभाव॥१५॥

'केशवदास' कहते हैं कि सभी कविराज 'हेतु' को दो तरह का बतलाते हैं। एक 'अभाव' और दूसरा सभाव।

उदाहरण—१

सभाव

केशव चंदनवृंद घने, अरविंदनके मकरंद शरीरो।
मालती, वेलि, गुलाव सुकेतकी केतिक चंपकको वन पीरो॥
रंभनि के परिरभन सभ्रम, गर्व घनो घनसार को सीरो।
शीतल मन्द सुगन्ध समीर हरयो इनसो मिलि धीरज धीरो॥१६॥

'केशवदास' कहते हैं कि चदन से सुगंधित होकर, कमलों का मकरद अपने शरीर में लेकर, मालती, वेला, गुलाब, केतकी तथा चपक के पीले वन से लटने के कारण मद होकर, और दौड़-दौड़कर केलों से

मिलकर, उनके कपूर की शीतलता का गर्व हरण करने से शीतल होकर, शीतल, मंद, सुगंध वायु ने इनका दृढ धैर्य हर लिया। (भाव यह है कि वायु ने स्वतः धैर्य हरण नहीं किया प्रत्युत ऊपर लिखे हुए हेतुओं से ही उसे इतना बल प्राप्त हुआ।

उदाहरण—२

अभावहेतु।

जान्यो न मैं मद यौवनको, उतर्यो कब काम को काम गयोई।
छाड़ न चाहत जीव कलेवर, जोरि कलेवर छांड़ि दयोई॥
आवत जाति जरा दिन लीलति रूप जरा सब लीलि लयोई।
केशव राम रटौं न रटौं अनसाधेही साधन साधु भयोई॥१७॥

मैंने जान ही न पाया कि युवावस्था का मद कब उतर गया। काम की भावनाएं कब लुप्त हो गईं। जीव, शरीर को छोड़ना ही चाहता है और शरीर ने शक्ति को छोड़ ही दिया है। आते-जाते दिनों को जरा (वृद्धावस्था) लीलती जाती है। जरा (वृद्धावस्था) ने सारे सौंदर्य को लीलही लिया है। 'केशवदास' कहते हैं कि मैं राम रटूं या न रटूँ, बिना साधना किये ही (वृद्धावस्था के कारण) साधु तो हो ही चुका हूं।

उदाहरण—३

सभाव-अभाव हेतु

जादिनते वृषभानलली ही अली मिलये मुरलीधर तेंहीं।
साधन साधि अगाधि सबै, बुधि शोधि जे दूत अभूतन मेंहीं॥
ता दिनतें दिनमान दुहून को केशव आवति बात कहेंहीं।
पीछे अकाश प्रकाशै शशी, चढ़ि प्रेम समुद्र बढ़ै पहिलेहीं॥१८॥

जिस दिन से सखी ने राधा को, अनेक साधनों को काम में लाकर तथा अभूतपूर्व दूतों की बुद्धिमानी से, श्रीकृष्ण से मिला दिया, उसी दिन से, 'केशवदास' कहते हैं कि दोनों के मान (अभिलाषाओं) के मान ऐसे

जो वर्णन करते समय विरोध सा जान पड़े, परन्तु अर्थ करने पर विरोध न हो उसे सभी बुद्धिमान, विरोधाभास कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

परम पुरुष कुपुरुष संग शोभियत,
दिन दानशील पै कुदान ही सो रति हैं।
सूर कुल कलश पै राहु को रहत सुख,
साधु कहैं साधु, परदार प्रिय अति हैं।
अकर कहावत धनुष धरे देखियत,
परम कृपालु पै कृपान कर पति हैं।
विद्यमान लोचन द्वै, हीन वाम लोचन सों।
'केशौराय' राजा राम अद्भुत गति हैं ॥२३॥

'केशवदास' कहते हैं कि राजा रामचन्द्र जी की गति अद्भुत है। उन्हें स्वय परम पुरुष होते हुए भी कुपुरुषों (पृथ्वी के मनुष्यों) का संग अच्छा लगता है। प्रतिदान दान देते हैं परन्तु कुदान (पृथ्वीदान) में ही अधिक रुचि रहती है। वह सूर्य-कुल-कलश अर्थात सूर्यवंश में श्रेष्ठ हैं परन्तु राहु (मार्ग) का उनके राज्य में सुख रहता है। साधु अथवा सज्जन उन्हें सज्जन कहा करते हैं परन्तु वह परदार (लक्ष्मी के वल्लभ) हैं। अकर (बिना हाथ वाले) कहलाते हैं पर हाथों में धनुष धारण किये रहते हैं। परम कृपालु हैं, परन्तु कृपान कर प(ति) कृपाणधारियों के स्वामी हैं)। उनके दो नेत्र विद्यमान हैं परन्तु वाम लोचन (कुलटा स्त्री) से हीन हैं (अर्थात् उससे सम्पर्क नहीं रखते)

[इस कवित्त में—पहले परम पुरुष होते हुए भी कुपुरुष अच्छे लगते हैं, दानशील होते हुए भी कुदान से रति रखते हैं, सूर्यकुल होकर भी राहु को सुखदायी हैं, साधु कहलाने पर भी परदार प्रिय हैं, अकर (हाथ रहित) होने पर धनुष धारण किये हैं और आँखें रहने

पर भी वामलोचन से हीन हैं—आदि परस्पर विरोधी अर्थों का आभास होता है, परन्तु जब ऊपर लिखा हुआ वास्तविक अर्थ निकल आता है, तब विरोध चला जाता है, इसलिए यह 'विरोधाभास कहलाता है, क्योंकि इसमें 'विरोध' का आभास मात्र रहता है, वास्तविक विरोध नहीं]

५—विशेष

दोहा

साधन कारण विकल जहँ, होय साध्य की सिद्धि ।
'केशवदास' बखानिये, सो विशेष परसिद्धि ॥२४॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ पर (कार्य को सम्पन्न करने वाला) साधन अर्थात् कारण के अपूर्ण रहने पर भी साध्य (कार्य) की सिद्धि हो जाय, वहाँ पर विशेष अलकार होता है।

उदाहरण (१)

सवैया

साँपको ककण, माल कपाल, जटानि की जूट रहीं जटि आंतै।
खाल पुरानी पुरानोई बैल, सुऔरकी और कहैं विष मातैं ॥
पारवती पति संपति देखि, कहैं यह केशव संभ्रम बातैं ।
आपुन मांगत भीख भिखारिन देत, दई मुहँमांगी कहांतैं ॥ २५ ॥

उनके पास सांप का कङ्कण और कपोलों की माला रहती है तथा वह जटायें धारण किये हुए रहते हैं। (मारे भूख के) उनकी आँते पेट में चिपटी रहती हैं। पुरानी खाल ओढते हैं, एक पुराना बैल उनके पास है, और विष खाये हुए की तरह और की और बातें किया करते हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि पार्वती पति की यह सपत्ति देखकर मुझे भ्रम होता है, इसीलिए कहता हूँ कि वह स्वयं तो भीख मागते हैं और भिखारियों को मुँहमागी भीख कहाँ से दे देते हैं ?

उदाहरण—५

दोहा

बाँचि न आवै, लिखि कछू, जानत छांह न घाम।
अर्थ, सुनारी, बैदई करि जानत पतिराम॥२६॥

'पतिराम' (सुनार) को न तो पढ़ना आता है और न वह कुछ लिखना ही जानता है तथा न उसे धूप तथा छाया अर्थात् गर्मी-सर्दी का ही ज्ञान है। परन्तु फिर भी वह कविता का अर्थ लगाना, सुनारी करना तथा वैद्यक का काम भली भाँति जानता है।

[पतिराम 'केशवदास' के पड़ोस में रहने वाला एक सुनार था। कहते हैं कि विद्वानों की सत्संगति से उसे कविता का अर्थ लगाने का सुन्दर अभ्यास हो गया था। अतः केशवदास जी ने उक्त दोहा उसके सम्बन्ध में लिखकर उसे अमर बना दिया।]

ऊपर के पाँचों उदाहरणों में अपूर्ण कारणों से कार्यों की सिद्धि हुई है, अतः विशेष अलंकार है।

६—उत्प्रेक्षा।

दोहा

केशव औरहि वस्तु में, औरै कीजै तर्क।
उत्प्रेक्षा तासों कहैं, जिन की बुधि सँपर्क॥३०॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ और वस्तु में और की कल्पना की जाती है, वहाँ बुद्धिमान लोग उत्प्रेक्षा कहते हैं।

उदाहरण (१)

हर को धनुष तोरयो, रावण को वंश तोरयो,
लंक तोरी, तोरैं जैसे वृद्ध वश वात हैं।
शत्रुन के सेल, शूल, फूल, तूल, सहे राम,
सुनि 'केशौराय' कीसो हिये हहरात हैं।

काम तीर हू ते तिच्छ तारे तरुणीन हू के
लागि लागि उचरि परत ऐसे गात हैं।
मेरे जान जानकी तू जानत है जान कछू,
देखत ही तेरे नैन मैन से ह्वै जात हैं ॥३१॥

जिन्होंने महादेव जी का धनुप तोड़ा, रावण के वंश का नाश कर दिया और लंका ऐसे तोड डाली (नष्ट कर डाली) जैसे वृद्ध की कमर को वात रोग तोड़ डालता है अथवा जैसे वायु पुराने बास को तोड़ डालती है। श्रीराम ने शत्रुओं के सेल और शूलों को फूल तथा रूई की तरह सहन कर लिया, जिसे सुनकर, केशवराय (ईश्वर) की सौगंध हृदय कंपित हो जाता है। उनके शरीर पर, युवतियों के काम-बाणों से भी तेज नेत्र-तारे (तीखीदृष्टि), लग-लग कर उचट जाते हैं अर्थात् कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मेरी समझ में, हे जानकी, तू कुछ जादू जानती है कि वह श्रीराम तेरे नेत्रों के देखते ही मोम से हो जाते हैं।

उदाहरण (२)

(कवित्त)

अंक न, शशक न, पयोधिहू को पंक न सु,
अंजन न रंजित, रजनि निज नारी को।
नाहिने झलक झलकति तमपान की न,
छिति छाड़ छाई, छिद्र नाहीं सुखकारी को।
'केशव' कृपानिधान देखिये विराजमान,
मानिये समान राम वैन वनचारी को।
लागति हैं जाय कंठ, नाग दिगपालन के,
मेरे जान सोई कच्छ कीरति तिहारी को ॥३२॥

(चन्द्रमा के कलंक के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए श्रीहनुमान जी श्रीरामचन्द्र से कहते हैं कि) न तो यह दाग है, न, जैसा लोग समझते हैं, मृग का चिन्ह है, न समुद्र का कीचड़ लगा है, और न

(पार्वतीजी की सखी उन्हें समझाती हुई कहती हैं कि) हे गौरी ! कौन जानें तुम्हारे प्राणनाथ (शिवजी) के अग पर क्या बीते, इसलिए तुम किसी प्रकार भी टेढ़ी भौंहें न करो अर्थात् मान न दिखलाओ।

[इसमें 'को जानै ह्वै जाय कह' भविष्य सूचक क्रिया है, अत. यह भावी प्रतिषेध है]

वर्त्तमान प्रतिषेध

कोविद ! कपट नकार शर, लगत न तजहु उछाह।
प्रतिपल नूतन नेहको, पहिरैं नाह सनाह ॥५॥

नायक को समझाती हुई सखी कहती हैं कि हे कोविद ! इन नकार (नहीं, नहीं करने के) बाणों के लगने से अपना उत्साह न छोड़ो। क्योंकि नाह (नायक) तो प्रतिपल नयेस्नेह का कवच पहनते हैं।

[इसमें 'न तजहु' बर्तमान कालिक क्रिया है, अतः यह वर्तमान प्रतिषेध है]

आक्षेप के भेद

प्रेम, अधीरज, धीरजहु, संशय, मरण, प्रकास।
आशिष, धर्म, उपाय कहि, शिक्षा केशवदास ॥६॥

'केशवदास' कहते हैं कि (आक्षेप में प्रतिषेध (रोक) का कार्य) प्रेम, अधैर्य, धैर्य, सशय, मरण, आशिष, धर्म, उपाय और शिक्षा द्वारा किया जाता है।

१—प्रेमाक्षेप

दोहा

प्रेम बखानतही जहाँ, उपजत कारजबाधु।
कहत प्रेम आक्षेप तह, तासों केशव साधु ॥७॥

'केशवदास' कहते हैं कि प्रेम का वर्णन करते ही, कार्य में बाधा उत्पन्न हो जाय, वहाँ साधु (विद्वान) लोग 'प्रेमाक्षेप' बतलाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

ज्यों ज्यो वहु बरजी मैं, प्राण नाथ मेरे प्राण,
अंग न लगाइये जू, आगे दुख पाइवो।
त्यो त्यो हँसि हँसि अति शिर पर उर पर,
कीवो कियो आँखिन के ऊपर खिलाइवो।
एकौ पल इत उत साथ तें न जान दीन्हे,
लीन्हें फिरे हाथ ही कहां लौं गुणगाइवो।
तुमतो कहत तिन्हैं छाडि कै चलन अव,
छांड़त ये कैसे तुम्हैं आगे उठि धाइवो॥८॥

(परदेश जाते हुए अपने स्वामी से, उसकी भार्या कहती है कि) हे प्राणनाथ! मैंने आपको जैसे-जैसे मना किया था कि मेरे प्राणों को अग न लगाइए; क्योंकि इससे आगे दुःख मिलेगा, वैसे वैसे आपने इन प्राणों को, हँस-हँसकर, शिर, हृदय और आँखों पर खेलाया किये। आपने इन्हें एक पल के लिए भी अपना साथ छोड कर, इधर उधर नहीं जाने दिया और इन्हें हाथों में लिए ही घूमा किये। मैं कहाँ तक आपकी प्रशसा करूँ। अब आप इन्हें छोड़कर चलने की बात कहते हैं। सो ये आपको भला कैसे छोड़ेंगे। आपके जाने के पहले ही उठ दौड़ेंगे।

२—अधैर्याक्षेप

दोहा

प्रेम भंग वच सुनत जहँ, उपजत सात्त्विकभाव।
कहत अधीरजको सुकवि, यह आक्षेप स्वभाव॥९॥

जहाँ पर प्रेम-भंग की बात सुनते ही, सात्विक भाव उत्पन्न हो जांय वहाँ सुकवि गण उसे अधैर्याक्षेप कहते हैं।

वाली हूँ, तुम्हारा बहुत ही अद्भुत चित्र बनाऊगी तो चित्रों में तुम्हारी अद्भुत मूर्ति को देख-देख कर वह आँखों को नीचा कर लिया करेगी। सिद्धि नाम की सखी काम-विरोधी मतों की खोज कर-कर के उसे उपदेश देती हुई किसी प्रकार अवधि के दिनों को बितावेगी। परन्तु हे रसिक लाल केशवराय-ईश्वर-की शपथ मुझे कठिनाई यही है कि उसकी जीभ को पान कौन खिलावेगा ?

५—मरणाक्षेप

दोहा

मरण निवारण करत जहँ, काज निवारण होत।
जानहु मरणाक्षेप यह जो जिय बुद्धि उदोत ॥१५॥

जहाँ मरण भू निवारक शब्दों द्वारा जहाँ व्यग्यपूर्वक कार्य में बाधा डाली जाती है। वहाँ मरणाक्षेप समझना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

नीके कै किंवार दैहौं, द्वार द्वार दर वार,
केशोदास आस-पास सूरज न आवैगो।
छिन में छवाय लैहौं, ऊपर अटानि आजु,
आंगन पटाय देहौं, जैसे मोहिं भावैगो।
न्यारे न्यारे नारिदान मू दिहौं झरोखे जाल,
जाइ है न पानी पौन आवन न पावैगो।
माधव तिहारे पीछे मो पहँ मरण मूढ,
आवन कहत सो धौं कौन पैड़े आवैगो ॥१६॥

('केशवदास' गोपी की ओर से श्रीकृष्ण से कहते हैं कि) मैं छोटे-बड़े सभी दरवाजों के किवाड़ बन्द कर दूँगी जिससे सूर्य भी पास न फटकने पावेगा। ऊपर को सभी अट्टालिकाओं के आज क्षण भर में पटा दूँगी और जैसा मुझे अच्छा लगेगा वैसा आगन भी पटवा दूँगी। मोरी,

झरोखों तथा जालों को अलग अलग बंद करवा दूंगी जिससे न तो पानी जा सकेगा और न हवा आ सकेगी। हे माधव! यह मूर्ख मरण तुम्हारे चले जाने पर जो आने की बात कहता है, सो अब बतलाओ! किस मार्ग से आवेगा?

६—आशिषाक्षेप

दोहा

आशिष पियके पंथ को, देवै दुःख दुराय।
आशिषको आक्षेप यह, कहत सकल कविराय ॥१७॥

प्रियतम के आशीष अर्थात् कुशल-क्षेम के लिए जब अपना दुःख छिपा लिया जाता है, तब कवि लोग उसे आशिषाक्षेप कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

मंत्री, मित्र, पुत्र जन केशव कलत्र गन,
सोदर सुजन जन भट सुख साज सो।
एतो सब होत जात जो पै है कुशल गात,
अबहीं चलौ कै प्रात सगुन समाज सों।
कीन्हो जो पयान बाध, छमिये सो अपराध,
रहिये न पल आध, बँधिये न लाज सो।
हौं न कहौं, कहत निगम सब अब तब,
राजन परमहित आपने ही काज सो ॥१८॥

('केशवदास' किसी स्त्री की ओर से कहते हैं कि) मंत्री, मित्र पुत्र, स्त्री, सगे भाई, स्वजन, योद्धा और सुख का समाज ये सब तो यदि शरीर कुशल से रहे, तो होते जाते रहते हैं। इसलिए या तो आज अथवा प्रातःकाल आप शकुन- मुहूर्त्त-लेकर चले जाइए। मैंने जो आपके जाने में बाधा उत्पन्न की थी, उस अपराध को क्षमा कीजिए और अब आधे पल के लिए भी न रहिए तथा न सकोच कीजिए।

जहाँ सान्तवना और उपदेश दे-देकर, पति को रोका जाता है, वहाँ शिक्षाक्षेप होता है। उसे यहाँ बारह प्रकार से वर्णन किया गया है।

१—चैत्रवर्णन

छप्पय

फूली लतिका ललित, तरुनितर फूले तरुवर।
फूली सरिता सुभग, सरस फूल सब सरवर॥
फूली कामिनि कामरूपकार कतनि पूजहि।
शुक-सारी-कुल केलि फूलि कोकिल कल कूजहि॥
कहि केशव ऐसी फूल महि शूलन फूल लगाइये।
पिय आप चलन की को कहै चित्त न चैत चलाइये॥२४॥

चैत्र में सुन्दर लताए, पूर्ण युवती होकर, फूल रही हैं। सुन्दर पेड़ भी फूल रहे हैं। नदियाँ तथा तालाब आदि भी फूले हुए हैं' अर्थात् प्रसन्न दिखलाई पड़ते हैं। कामिनिया भी फूली हुई हैं और कामोत्तेज्जित होकर अपने-अपने पति की पूजा मे लग रही हैं। तोता मैना, फूल कर क्रीड़ा कर रहे हैं और कोयल भी फूलकर ध्वनि कर रही है। ('केशवदास' नायिका की ओर से कहते हैं कि) हे प्रियतम ! ऐसी फूल मे (प्रसन्नता के वातावरण मे) आप शूल (काटे) न चुभाइये अर्थात् रग मे भग न कीजिए। हे प्रियतम ! इस चैत मास मे आपके चलने की बात कौन कहे, चलने का विचार तक न करना चाहिए।

२—वैशाख वर्णन

केशवदास अकास अवनि वासित सुवास करि।
बहत पवन गति मद गात, मकरद बिदु धरि॥
दिशि विदिशिनि छवि लाग भाग पूरित परागवर।
होत गन्धहीं अन्ध बौर भौंरा विदेशि नर॥
सुनि सुखद सुखद सिख सीखि पति, रति सिखई सुख साखमें।
वर विरहिन वधत विशेषकरि कामविशिख वैशाखमें॥२५॥

(केशवदास नायिका की ओर से कहते हैं कि) वैशाख मे आकाश और पृथ्वी सभी सुगन्ध से सुगन्धित हो जाते हैं। वायु मकरंद बिंदु को धारण करके धीरे-धीरे बहने लगती है। प्रत्येक दिशा सुशोभित हो जाती है, और उनका प्रत्येक भाग पराग से पूर्ण हो जाता है। भौंरा (भ्रमर) और विदेशी जन, मारे सुगन्ध के, अन्धे और बावले (कामोन्मत्त) हो जाते हैं। इसलिए हे प्रियतम ! मेरी सुखदायिनी शिक्षा को (जिसे प्रेम ने) आनन्द के समय मुझे सिखाया है, सुनिये कि 'वैशाख मे, पति से बिछुड़ी हुई स्त्री को, काम के बाण, विशेषरूप से सताते हैं।

३—जेठवर्णन

एक भूतमय होत भूत, भजि पचभूत भ्रम।
अनिल, अबु, आकाश अवनि, ह्वैजात आगिसम॥
पथ थकित मद मुकित सुखित सर सिंधुर जोवत।
काकोदर करि कोश, उदर तर केहरि सोवत॥
पियप्रवल जीव इहिविधि अबल, सकल विकल जल थल रहत।
तजि केशवदास उदास मति, जेठमास जेठे कहत॥२६॥

जेठ के महीने में सारी सृष्टि एक भूत-मय हो जाती है और उसके पचभूतमय होने का भ्रम भाग जाता है। वायु, जल, आकाश, और पृथ्वी सभी अग्नि जैसे हो जाते हैं। मार्ग बंद हो जाता है और तालाबों को सूखा हुआ देखकर हाथी मद से मुक्त हो जाते हैं अर्थात् उनका मतवालापन जाता रहता है। उनकी सूंड की कुंडली में साप तथा पेट के नीचे सिंह सोता रहता है। (गर्मी के मारे उन्हें अपने वैर का ध्यान ही नहीं रहता)। हे पतिदेव ! इस तरह जल और थल के सभी प्रबल जीवगण निर्बल हो जाते हैं। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) इसी लिए बड़े लोग कहते हैं कि 'जेठ' के महीने मे घर से उदास (विरक्त) होने के विचार को छोड़ देना चाहिए।

४—आषाढ़वर्णन

पवनचक्र परचंड चलत चहुँओर चपलगति।
भवन भामिनी तजत भ्रमत मानहुँ तिनकी मति ॥
सन्यासी इहि माम होत इक आसनवासी।
पुरुषनकी को कहै भये पच्छियो निवासी ॥
इहि समय सेज सोवन लियो, श्रीहि साथ श्रीनाथहू।
कहि केशवदास अषाढ़चल मैं न सुन्यो श्रुति गाथहू ॥२७॥

आषाढ में चारों ओर से प्रचड पवनचक्र चचलगति से चला करते हैं। वे चलते हुए पवनचक्र ऐसे ज्ञात होते हैं मानों, इस मास मे घर और स्त्री को छोड़ने वालों की मति चक्कर खा रही है। इस महीने में सन्यासी भी एक स्थान पर रहने वाले हो जाते हैं। पुरुषों की तो बात ही क्या है, पत्ती तक एक स्थान के निवासी हो जाते हैं। इस महीने में श्रीनाथ (भगवान्-नारायण) ने भी, लच्मी को साथ मे लेकर-शय्या पर सोना स्वीकार किया है। इसीलिए (केशवदास— पत्नी की ओर से कहते हैं कि) मैंने आपाढ के महीने मे वेदों तक मे परदेश जाना नहीं सुना।

५—सावनवर्णन

केशव सरिता सकल मिलत सागर मनमोहैं।
ललित लता लपटाति, तरुनतन तरुवर सोहैं ॥
रुचि चपला मिलि मेघ चपल चमकत चहुँ ओरन।
मनभावनकहँ भेंटि भूमि, कूजत मिस मोरन ॥
इहिरीति रमन रमनी सकल रमन लगे मनभावने।
पियगमन करनकी को कहै गमन न सुनियत सावने ॥२८॥

(केशवदास—पत्नी की ओर से कहते हैं कि) सावन मे सभी नदिया समुद्र से मिलती हुई मनको मोहती हैं। पेड़ों के शरीरों से लपटी हुई लताए शोभा पाती हैं। बादलों से मिलकर, चचल बिजली चारों ओर चमकती है और पृथ्वी भी मानो अपने मनभावन (जल) से

भेंट करके, मोरों के बहाने कूजती है। इस प्रकार सभी (जड-चेतन) स्त्री-पुरुष रमने रमाने लगे। अतः हे प्रियतम! विदेशगमन करने की कौन कहे, सावन में तो लोग गमन (गौना, द्विरागमन) तक नहीं करते।

६—भादौंवर्णन

घोरत घन चहुँओर, घोष निरघोपनि मंडहि।
धाराधर घर धरनि मुशलधारन जल छंडहिं॥
झिल्लीगन झनकार पवन, झुकि झुकि झकझोरत।
बाघ, सिंह, गुंजरत पुंज, कुंजर तरु तोरत॥
निशिदिन विशेषनिहिशेष मिटिजात सुओली ओड़िये।
देश पियूष विदेश विष भादौं, भवन न छोड़िये॥२९॥

भादों में बादल चारों ओर से घिर कर गम्भीर गर्जना किया करते हैं। और पृथ्वी के निकट आ-आकर, मूसल जैसी धारा से पानी बर्षाया करते हैं। झिल्लियों की झनकार सुनाई पड़ती रहती है और पवन झुक-झुक कर झकझोरे लिया करता है अर्थात् वायु बहुत तेज चला करती है। बाघ और सिंह समूह गुंजारते हैं और हाथी पेड़ों को तोड़ते हैं। अन्धकार छाये रहने के कारण रात और दिन का सारा का सारा अन्तर मिट सा जाता है। कभी कभी ओलों की वृष्टि सहन करनी पड़ती है। ऐसे समय में स्वदेश अमृत और विदेश विष के समान होता है। अतः हे प्रियतम! भादों में कभी घर नहीं छोड़ना चाहिये।

७—कुवांरवर्णन

प्रथम पिंडहित प्रकट पितर पावन घर आवैं।
नव दुर्गान नर पूजि स्वर्ग अपवर्गहि पावैं॥
छत्रनिदै छितिपाल लेत, भुव लै सँग पंडित।
केशवदास अकास अमल जल थल जनमंडित॥
रमनीय रजनि रजनीशरुचि रमारमनहूँ रासरति।
कलकेलि कलपतरु क्वारमहि कंत न करहु विदेशमति॥३०॥

क्वाँर के महीने मे पहले तो पवित्र पितृगण घर पर पधारते हैं। फिर 'नवदुर्गा' पक्ष मे दुर्गाजी का पूजन करके, मनुष्य स्वर्ग और अपवर्ग प्राप्त करते हैं। राजा लोग, छत्र धारण करके, और पुरोहित को साथ में लेकर, पृथ्वी पूजन करते हैं। (केशवदास—पत्नी की ओर से कहते हैं कि) आकाश निर्मल हो जाता है, और जलाशय कमलों से सुशोभित हो जाते हैं। चन्द्रमा की चाँदनी से रात सुन्दर लगने लगती हैं, और रमारमन (श्रीकृष्ण) को भी रास में रुचि होने लगती है। अतः हे पतिदेव। सुंदर केलि-रूपी कल्पतरु क्वाँर के महीने मे विदेश जाने की मति (विचार) न कीजिए।

८—कार्त्तिकवर्णन

वन, उपवन, जल, थल, अकाश, दीसन दीपगन।
सुखही सुख दिन राति जुवा खेलत दंपतिजन॥
देवचरित्र विचित्र चित्र, चित्रित आंगन घर।
जगत जगत जगदीश ज्योति, जगमगत नारि नर॥
दिनदानन्हान गुनगान हरि, जनम सफल कर लीजिये।
कहि केशवदास विदेशमति कन्त न कातिक कीजिये॥३१॥

कार्त्तिक में, वन, उपवन जल, थल और आकाश सब जगह दीपक ही दीपक दिखलाई पड़ते हैं। रात-दिन सुख ही सुख दिखलाई पड़ता है और पति-पत्नी मिलकर जुआ खेलते हैं, अथवा आनद में भरे हुए दंपति रात-दिन जुआ खेला करते हैं। देवताओं के चरित्रो के अद्भुत अद्भुत से चित्रों घरों के आगन चित्रित रहते हैं। जगदीश की ज्योति से सारा ससार जग उठता है (क्योंकि इसी महीने मे देवोत्थान होता है)। स्त्री-पुरुष सब प्रसन्न हो उठते हैं। अतः इस कार्त्तिक के दिनों दान, स्नान, और हरि गुण गान करके अपना जन्म सफल कीजिए और (केशवदास-पत्नी की ओर से कहते हैं कि) हे कत। कार्त्तिक मे विदेश जाने का विचार मत कीजिए।

९—मार्गशीर्षवर्णन

मासनमें हरिअंस कहत यासों सब कोऊ।
स्वारथ परमारथन देत भारतमँह दोऊ।
केशव सरिता सरनि फूल फूले सुगन्ध गुर।
कूजत कुल कलहंस कलित कलहंसनि के सुर॥
दिन परम नरम शीत न गरम करम करम यह पाइयतु।
करिप्राणनाथ परदेश को मारगशिर मारग न चितु॥३१॥

महीनों में इस महीने को सब लोग हरि अंश (भगवान का अंश) मानते हैं। यह महीना भारत वर्ष में, स्वार्थ तथा परमार्थ दोनों को देने वाला है। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) नदियों और तालाबों में सुगन्धित फूल फूलते हैं तथा सुन्दर हंस तथा हंसनियाँ मधुर-ध्वनि से कूजते हैं। इस महीने के दिन बड़े सुखदायी होते हैं। न तो बहुत ठंढे होते हैं और न बहुत गरम। बड़े भाग्य से ये दिन मिलते हैं। अतः हे प्राणनाथ! मार्ग शीर्ष में विदेश जाने का विचार न कीजिए।

१०—पूसवर्णन

शीतल, जल, थल बसन, असन, शीतल अनरोचक।
केशवदास अकास अवनि शीतल असुमोचक॥
तेल, तूल, तामोल, तपन, तापन, नव नारी।
राज रंक सब छोड़ि करत इनहीं अधिकारी॥
लघुद्योस दीह रजनी रवन होत दुसह दुख रूसमें।
यह मन क्रम वचन विचारि पिय पन्थ न बूझिय पूसमें॥३२॥

इसमें शीतल जल, थल, बसन और शीतल भोजन अच्छे नहीं लगते। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) आकाश और पृथ्वी मारे ठंढ के दुःखदायी हो जाते हैं। राजा से लेकर रंक तक सभी लोग सब छोड़कर इस ऋतु में तेल, रुई, पान, घाम, अग्नि, और नवीन स्त्री का ही सेवन करते हैं। दिन छोटा और रात बड़ी होती है, तथा रूठने

में असह्य दुःख होता है। अतः हे प्रियतम ! मन, कर्म, वचन से इन बातों पर विचार करके, पूस मास में, यात्रा की बात न सोचिए।

११—माघवर्णन

वन, उपवन, केकी, कपोत, कोकिल कल बोलत।
केशव भूले भ्रमर भरे, बहुभायन डोलत॥
मृगमद मलय कपूरधूर, धूसरित दशौंदिशि।
ताल, मृदग, उमग सुनत संगीत गीत निशि॥
खेलत वसन्त सतत सुघर, संत असंत अनंत गति।
घर नाह न छोड़िय माहमें जो मनमाहँ सनेह मति॥३४॥

माघ में मोर, कबूतर, तथा कोयलें वन तथा उपवनों में बोलते हैं। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) बहुत से भावों से भरे हुए भौंरे इधर-उधर घूमते हैं। दशो दिशाए कस्तूरी, चदन तथा कपूरधूल से भरी रहती है। लोग ताल, मृदग, उपग आदि बाजों पर-रात में-संगीत की ध्वनि सुना करते हैं। भले और बुरे सभी लोग अनेक प्रकार से लगातार वसत खेलते हैं। इसलिए हे कत ! यदि मन में तनिक भी स्नेह हो तो माघ में घर को न छोड़िए।

१२—फागुनवर्णन

लोक लाज तज राज रंक, निरशंक विराजत।
जोइ भावत सोइ कहत, करत पुनि हँसत न लाजत॥
घरघर युवती जुवनि, जोर गहि गांठनि जोरहि।
वसन छीनि मुख मांड़ि आंजि लोचन तृण तोरहि॥
पटवास सुवास अकास उडि भूमडल सब मंडिये।
कहि केशवदास विलासनिधि फागुन फाग न छंडिये॥३५॥

फागुन में राजा से लेकर रक तक लज्जा छोड़कर निशक-हो जाते हैं, और जो उनके मन को अच्छा लगता वही कहते और करते हैं।

फिर हँसते भी हैं और लज्जित नहीं होते। घर-घर में युवती स्त्रियाँ युवकों को बलपूर्वक पकड़ कर गांठ जोड़ती हैं और कपड़े छीन कर, मुख को मसल कर और आँखों में काजल लगाकर व्यंगपूर्वक तिनके तोड़ती हैं (कि नज़र न लग जाय)। सुगन्धित चूर्ण उड़कर आकाश और पृथ्वी सबको सुशोभित करता रहता है। अतः (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) इस विलास निधि फागुन के फाग को न छोड़िए।

ग्यारहवां-प्रभाव

८—क्रम अलंकार

आदि अन्त भरि वर्णिये, सो क्रम केशवदास ।
गणना गणना सों कहत हैं, जिन की बुद्धि प्रकास ॥१॥

'केशवदास' कहते है कि जहा आदि का शब्द अन्त मे और अन्त का शब्द आदि मे लेकर वर्णन किया जाय, वहा क्रम' अलकार होता है। जो बुद्धिमान् लोग है, वे 'गणना' सूचक शब्दो वाले वर्णन को 'गणना' अलकार कहते है ।

उदाहरण—१

छप्पय

धिकमंगन बिन गुणहि, गुण सुधिक सुनत न रीझिय ।
रीझ सुधिक बिन मौज, मौज धिक देत सुखीझिय ॥
दीबो धिक बिन सांच, सांच धिक धर्म न भावै ।
धर्म सुधिक बिन दया, दया धिक अरिकहँ आवै ॥
अरि धिक चित न शालई, चित धिक जहँ न उदारमति ।
मतिधिक केशव ज्ञान बिनु, ज्ञान सुधिक बिनु हरिभगति ॥२॥

बिना किसी गुण को दिखलाये हुए, योंही याचना करने को धिक्कार है। जिस गुण को सुनकर कोई न रीझे वह गुण भी धिक्कारने योग्य है। वह रीझ भी धिक्कारने योग्य है जो बिना मौज (भेंट, उपहार) की हो। उस मौज को धिक्कार है जिसे देते समय खीझ या झुझलाहट उत्पन्न हो। उस दान को धिक्कार है, जो सत्य के लिए न हो। उस सत्य को धिक्कार है, जिसे धर्म अच्छा न लगे। उस धर्म को धिक्कार है, जो दया रहित हो। उस दया को धिक्कार है जो वैरी के ऊपर दिखलायी

जाय। उस शत्रु को धिक्कार है, जो सदा चित्त में खटकता न रहे। उस चित्त को धिक्कार है, जिसमें उदार मति का अभाव हो। ('केशवदास' कहते हैं कि) उस मति को धिक्कार है जो ज्ञान के बिना हो और उस ज्ञान को धिक्कार है जो हरि भक्ति से रहित हो।

उदाहरण—२

सवैया।

सोभति सो न सभा जहँ वृद्ध न, वृद्ध न ते जु पढे कछु नाहीं।
ते न पढे जिन साधु न साधित, दीह दया न दिपै जिनमाहीं।
सो न दया जु न धर्म धरै धर, धर्म न सो जहँ दान वृथाहीं।
दान न सो जहँ सांच न, केशव साच न सो जु बसै छलछाहीं ॥३॥

वह सभा शोभित नहीं होती, जिसमें कोई वृद्ध नहीं होता और वह वृद्ध अच्छा नहीं लगता जो कुछ पढ़ा नहीं होता। वे पढ़े-लिखे अच्छे नहीं लगते जिनके हृदय में साधु जनोचित दया दीप्तमान नहीं होती रहती वह दया नहीं, जिसके साथ धर्म न हो। वह धर्म नहीं, जहाँ दान व्यर्थ माना जाता हो। वह दान नहीं, जहाँ सत्य न हो और (केशवदास कहते हैं कि) वह सत्य नहीं जिसमें छल की छाया मात्र भी रहे।

उदाहरण—३

छप्पय

तजहु जगत बिन भवन, भवन तजि तिय बिन कीनो।
तिय तजि जु न सुख देई, सुसुख तजि संपति हीनो ॥
संपति तजि बिनु दान, दान तजि जहँ न विप्रमति।
विप्र तजहु बिन धर्म, धर्म तजि जहाँ न भूपति ॥
तजि भूप भूमि बिन भूमि तजि, दीहदुर्ग बिनु जो बसइ।
तजि दुर्ग सुकेशवदास कवि जहाँ न जल पूरण लसइ ॥४॥

ऐसे नगर को छोड़ दो जहाँ अपना भवन न हो और ऐसा घर छोड़ दो जो बिना स्त्री का हो। उस स्त्री को छोड़ दो जो सुख न देती हो। उस

दात, दिशाएँ (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण), सेना की चार (शकट, क्रौंच धनुष चक्र) प्रकार की रचना, चरण (छद के) और पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) ये चार मख्या के सूचक हैं।

पॉच सूचक

दोहा

पंडु पूत, इद्रिय, कवल, रुद्र वदन, गति, बाण।
लक्षण पंच पुराणके, पंच अंग अरु प्राण ॥१२॥
पचवर्ग तरु पंच अरु, पंच शब्द परमान।
पच संधि पचाग्नि भनि, कन्या पच समान ॥१३॥
पंचभूत पातक प्रकट, पचयज्ञ जिय जानि।
पचगव्य, माता, पिता, पचामृतन बखानि ॥१४॥

पाण्डु के पुत्र, इद्रिया (५ कर्म- ५ ज्ञान), कवल (भोजन के आरम्भ के पाच कौर), श्री शङ्कर जी के मुख, गति (सालोक्य, सामिप्य, सारुप्य, सायुज्य, सारिष्ट), बाण, पुराण के पाच (सृष्टि की उत्पति, प्रलय देवताओं की उत्पति और वशपरम्परा, मन्वन्तर और मनुवश का विस्तार वर्णन) लक्षण, पचाङ्ग (तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण), पच (प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान) प्राण, पच (क, च, ट, त, और प) वर्ग, पच (मदार, पारिजात, सतान, कल्पवृक्ष और हरि चदन) तरु पच (सूत्र, वार्तिक, भाष्य, कोश और कवि प्रयोग) शब्द पच (स्वर, व्यजन, विसर्ग, स्वादि और प्रकृतिभाव) सधि, पच (अन्वहार्य, पचन, गार्हपत्य, आहवनीय और सभ्य) अग्नि, पच (अहल्या द्रौपदी, कु ती, तारा और मंदोदरी) कन्या पच (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) भूत, पातक (ब्रह्महत्या, सुरापान, स्वर्ण चोरी, गुरु शय्या गमन और इनका सग), पच (ब्रह्म, देव, पितृ, भूत और नर) यज्ञ, पच (दूध, दहीं घी, गोबर और मूत्र) गव्य, पच (जननी, गुरुपत्नी, राजपत्नी, सास और मित्र-पत्नी) माता, पच (जनक, यज्ञोपवीतदाता,

ससुर अन्नदाता और भयत्राता)पिता और पच (दूध, दही घी मधु और मिश्री) अमृत—ये पाच की सख्या के सूचक हैं ।

छः सूचक

दोहा

कुलिश कोन षट, तर्क षट्, दरशन, रस, ऋतु अंग ।
चक्रवर्ति शिवपुत्रमुख, मुनि षट्राग प्रसंग ॥१५॥
षट्माता षट्वदनकी, षट्गुण वरणहु मित्त ।
आततायि नर षट् गनहु, षट्पद मधुप कवित्त ॥१६॥

कुलिश (वज्र के छः कोण, षट् (वेदान्त, साख्य पातजलि, न्याय. मीमासा और वैशेषिक) तर्क षट (वैष्णव, ब्राह्मण, योगी, सन्यासी, जगम और सेवरा) दर्शन षट् (खट्टा, मीठा, नमकीन, कड़ु, अम्ल और कसैला), रस, षट् (वसत, ग्रीष्म, पावस, शरद, हेमन्त, और शिशिर) ऋतु षट (शिक्षा कल्प, व्याकरण, निरुक्त छन्द और ज्योतिष) वेदाङ्ग, षट (वेणु, बलि धंधुमार अजपाल, प्रवर्तक और मानधाता) चक्रवर्ती, श्री शङ्कर जी के पुत्र श्री स्वामी कार्त्तिकय जी के मुख षट (भैरव, मालकौस, हिंडोल, दीपक, श्री और मेघ) राग, षटमाता (कृतिका नक्षत्र के छः तारे), षट (सधि, विग्रह, मान, आसन, द्वैधीभाव और सश्रय) गुण, षट। आग लगाने वाला, विष देने वाला, शस्त्र चलाने वाला, धन छीनने वाला, खेत छीनने वाला, और स्त्री हरने वाला) आततायी, षट पद (भौंरे के छः चरण) और कवित्त अर्थात् छन्द (छप्पय के छः चरण—इन्हें छः की सख्या का सूचक समझना चाहिए।

सात सूचक

दोहा

सात रसातल, लोक, मुनि, द्वीप, सूरहय, वार ।
सागर, सुर, गिरि, ताल. तरु, अन्न ईति करतार ॥१७॥
सात छंद, सातो पुरी, सात त्वचा, सुख सात ।
चिरंजीवि ऋषि, सात नर, सप्तमातृका, घात ॥१८॥

सात रसातल (तल, अतल, वितल, सुतल, तलावल, रसातल, और पाताल), लोक (भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्य) मुनि (मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ठ), द्वीप (जम्बू, लेक्ष, शाल्मलि, कुश, कौंच, शाक और पुष्कर), सूर्य के घोड़े वार, समुद्र (क्षीर, क्षार, दधि, मधु घृत, सुरा, और इक्षु). स्वर (स, रे, ग, म, प, ध, नि), पर्वत (मेरु, हिमालय, उदयाचल; विंध्य, लोकालोक, गन्ध मादन और कैलाश), ताल (चार मेरु पर्वत पर और मानसर, विन्ध्यसर और पपासर), वृक्ष (स्वर्ग के पाच वृक्ष और, अक्षय-वट तथा कैलाशवट,), अन्न (गेहूं, यव, धान, चना, उर्द, मूंग, और अरहर), ईतिया (अति वृष्टि, अनावृष्टि, मूषक, शुक, शलभ, स्वचक्र, और परचक्र), करतार (श्रीब्रह्मा, श्री विष्णु, श्रीशिव, प्रकृति, सत्व, रज और तम) सात (गायत्री, उष्णिक, अनुष्टुप वृहती, पक्ति त्रिष्टुप, और जगती पुरी (अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काची, अवन्तिका और द्वारका), सात प्रकार की त्वचा, सुख खान पान, परिधान, ज्ञान, गान, शोभा, और संयोग), चिरंजीव (अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और परशुराम) ऋषि (कश्यप, जमदग्नि, वेश्वामित्र, वशिष्ठ भारद्वाज, और गौतम), सात (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज और यवन) नर, सात (ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा) मातृकाए, और सात (रस रक्त मांस, मेद अस्थि, मज्जा और वीर्य) धातुएं—ये सात सख्या के सूचक माने जाते हैं। आठ सूचक

दोहा

योगअग, दिगपाल, वसु, सिद्धि, कुलाचल चारु।
अष्टकुली अहि, व्याकरण, दिग्गज तरुनि विचारु ॥१९॥

योग के (यम, नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि) आठ अग, दिग्पाल (इन्द्र, अग्नि यम नैऋत्त, वरुण,

वायु, कुवेर और ईशान), वसु (जल, ध्रुव, सोम, धरा, अनिल, अग्नि, प्रत्यूष और प्रभाव) सिद्धि (अणिमा महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य और ईशित्व), कुलाचल (हिम, मलय, महेन्द्र, सह्य, शुक्ति, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र), साँपो के (तक्षक, महापद्म, शंख, कुलिक, कंबल, अश्वतर धृतराष्ट्र और बलाहक) आठ कुल, आठ (इन्द्र, चन्द्र, गार्ग्य, साकल्य, शाकटायन कात्यायन जैनेन्द्र और पाणिनि) व्याकरण, दिग्गज (ऐरावत पुंडरीक, वामन, कुमुद, अजन, पुष्पदंत, सार्वभौम और सुप्रतीक), और आठ (स्वाधीन पतिका, उत्कंठिता, वासक सज्जा, कलहंतरिता खंडिता, प्रोषित पतिका, विप्रलब्धा और अभिसारिका) नायिकाएं—ये आठ सख्या के सूचक माने जाते हैं।

नौ सूचक

दोहा

अंगद्वार, भूखण्ड, रस, वाघिनिकुच, निधि जानि।
सुधाकुण्ड, ग्रह, नाड़िका, नवधा भक्ति बखानि ॥२०॥

अग द्वार (शरीर के नौ छिद्र), भूखण्ड (पृथ्वी के इलावर्त, कुरु, हरि किंपुरुष, भरत, केतुमाल, भद्राश्व और हिरण्य-नौखंड) रस (काव्य के शृंगार वीर करुण हास्य भयानक वीभत्स, अद्भुत, रौद्र और शान्त) वाघिन के कुच नौ निधियाँ (पद्म, शंख महापद्म, मकर, कच्छप, मुकुंद, कुंद, नील और खर्व), सुधा के नौ कुंड, नौग्रह, नौ (इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, गंधारी, पूषा, गजजिह्वा, पमाद, शनि और शखिनी), शरीर की नाड़िया और नौ (श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन) भक्तिया ये नौ सख्या के सूचक बतलाये गये हैं।

दश सूचक

दोहा

रावणशिर, श्रीराम के, दश अवतार बखान।
विश्वेदेवा, दोष दश, दिशा, दशा, दश जान ॥२१॥

रावण के शिर, श्रीराम (श्रीविष्णु) के दश अवतार, विश्वेदेवा और दोष (चोरी, जुआ, अज्ञानता, कायरता, गूंगापन, कुरूपता, अंधापन, लगड़ापन, बहरापन, और क्लीवता) ये दश संख्या के सूचक हैं ।

उदाहरण (१)

कवित्त

एक थल थित पै बसत प्रति जन जीव,
द्विकर पै देश देश कर को धरनु है ।
त्रिगुन कलित बहु बलित ललित गुन,
गुनिन के गुनतरु फलित करनु है ।
चार ही पदारथ को लोभ चित नित नित,
दीबे को पदारथ समूह को परनु है ।
'केशोदास' इन्द्रजीत भूतल अभूत, पंच,
भूत की प्रभूत भवभूति का शरनु है ॥२२॥

वह एक स्थान पर रहते हैं परन्तु प्रत्येक मनुष्य के हृदय में निवास करते हैं । वह हैं तो दो हाथ वाले, परन्तु देश-देश के निवासियों के हाथों को पकड़े हुए हैं अर्थात् सहारा दिए हुए है अथवा रक्षक है या देश-देश के राजाओं से कर लेते हैं । वह तीन गुण (सत्व, रज और तम) से सम्पन्न होने पर भी बहुत से सुन्दर गुणों से युक्त हैं और गुणवानों के गुणरूपी वृक्षों को फलित करने वाले हैं । उनके मन में चार (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) पदार्थों का ही लोभ नित्य रहता है, परन्तु पदार्थों के समूह को देने का प्रण किए हुए हैं । 'केशवदास' कहते हैं कि राजा इन्द्रजीत इस पृथ्वी के अभूतपूर्व राजा है, वह हैं तो पंचभूतों से उत्पन्न परन्तु सारे संसार को शरण देने वाले हैं ।

उदाहरण—२

कवित्त

दरशै न सुर से नरेश सिरनावैं नित,
पट दर्शन ही को सिर नाइयतु है।
'केशौदास' पुरी पुर-पुंजन के पालक पै,
सात ही पुरी सों पूरो प्रेम पाइयुत है।
नायिका अनेकन को नायक नगर नव,
अष्ट नायिकान ही सों मन लाइयतु है।
नवधाई हरि को भजन इन्द्रजीत जू को,
दश अवतार ही को गुन गाइयतु है ॥२३॥

देवता जैसे अनेक राजाओं के नित्य शिर झुकाने पर भी दरशन नहीं देते अर्थात् उनकी ओर देखते तक नहीं और केवल पट दर्शनों ही को सिर झुकाते हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि वह अनेक पुरी और नगरों के पालक होने पर भी केवल सात पुरियों से ही पूर्ण प्रेम रखते हैं। वह अनेक नायिकाओं के चतुर और युवा नायक होने पर भी, केवल आठ प्रकार की नायिकाओं से ही मन लगाते हैं। राजा इन्द्रजीत भगवान् का भजन नौ प्रकार की भक्तियों से ही करते हैं, और दशों अवतारों का ही गुण गाते हैं।

१०—आशिषालंकार

दोहा

मातु, पिता, गुरु, देव, मुनि, कहत जु कछु सुख पाय।
ताही सों सब कहत हैं, आशिष कवि कविराय ॥२४॥

माता, पिता, गुरु, देव और मुनि प्रसन्न होकर जो वचन कहते हैं, उन्हीं को समस्त कवि तथा कविराज आशिष कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

मलय मिलित वास, कुंकुम कलित, युत,
जावक, कुसुम नख पूजित, ललित कर।
जटित जराय की जंजीर बीच नील मणि,
लागि रहे लोकन के नैन, मानो मनहर।

हय पर, गय पर, पलिका सुपीठ पर,
अरि उर पर, अवनीशन के शीश पर।
चिरु चिरु सोहौ रामचन्द्र के चरण युग,
दीन्हो करैं 'केशौदास' आशिष अशेष नर ॥२५॥

चदन की सुगन्ध से मिले हुए, कु कुम और महावर से युक्त और फूलों से पूजित, जिनके नख हैं और जिनकी सुन्दर शोभा है। (उन चरणों में) रत्नों से जड़ी हुई जजीर पहने हैं जिनके बीच बीच में नील-मणि जड़े हुए ऐसे प्रतीत होते हैं, मानोंलोगों की आँखें हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि अनेक मनुष्य सदा यही आशीर्वाद दिया करते हैं कि श्रीरामचन्द्र के दोनों चरण हाथी, घोड़े, पलग, आसन, शत्रु हृदय तथा राजाओं के शिरों पर चिर काल तक शोभित होते रहें।

उदाहरण—२
सवैया।

होयधौ कोऊ चराचर मध्य में, उत्तम जाति अनुत्तमहीको।
किन्नर कै नर नारि विचार कि बास करै थलकै जलहीको॥
अंगी अनंग कि मूढ़ अमूढ़ उदास अमीत कि मीत सहीको।
सो अथवै कि कहूँ जनि केशव जाके उदोत उदो सबहीको ॥२६॥

चाहे वह चराचर में कोई भी हो, उत्तम जाति का हो या निकृष्ट जाति का। चाहे किन्नर हो, चाहे मनुष्य अथवा स्त्री। चाहे स्थल पर रहता हो, चाहे जल में। चाहे शरीरधारी हो या अग रहित हो। चाहे मूर्ख हो या बुद्धिमान् हो। उदासीन हो शत्रु हो अथवा मित्र हो केशव दास कहते हैं कि जिसके प्रकाश से सब प्रकाशित हैं वह कहीं भी अस्त न हो।

११—प्रेमालंकार

कपट निपट मिटिजाय जहँ, उपजै पूरण छेम।
ताहीसों सब कहत हैं, केशव उत्तम प्रेम ॥२७॥

जहाँ कपट बिलकुल दूर हो जाय और पूर्ण रूप से मंगल कामना के भाव उत्पन्न हो उनको (केशवदास कहते हैं कि) सब लोग उत्तम 'प्रेमालकार' कहते हैं।

जहाँ कपट बिलकुल दूर हो जाय और पूर्णरूप से मंगल कामना के भाव उत्पन्न हों, उसको (केशवदास कहते हैं कि) सब लोग उत्तम 'प्रेमालंकार' कहते हैं। उदाहरण

सवैया

कछु बात सुनै सपनेहू वियोग की, होन चहै दुइ टूक हियो।
मिलिखेलिये जा सँगबालकतें, कहि तासों अबोलो क्यों जातकियो॥
कहिये कह केशव नैननसों, बिन काजहि पावकपुंज पियो।
सखि तूं घरजै अरु लोग हँसैं सब, काहेको प्रेमको नेमलियो॥२८॥

वियोग की तनिक सी भी चर्चा सपने में भी सुनने पर, मेरा हृदय दो टुकडे होना चाहता है। जिसके साथ बालकपन से मिल-जुल कर खेलती रही, उससे चुप होकर रहना कैसे बन सकता है। (केशवदास-सखी की ओर से कहते हैं कि) इन आँखों को मैं क्या कहूँ जो (उन्हें बिना देखे) आग सी पिये रहते हैं अर्थात् जलते रहते हैं। हे सखी! इधर तू तो मना करती है (कि उससे मत बोला कर) और उधर लोग हँसते हैं और कहते हैं कि फिर तूने प्रेम का नियम क्यों लिया?'

उदाहरण

दो अर्थ का श्लेष

कवित्त

धरत धरणि, ईश शीश चरणोदकनि,
गावत चतुर मुख सब सुख दानिये।
कोमल अमल पद कमला कर कमल,
लालित, बलित गुण, क्यों न उर आनिये।
हिरणकशिपु दानकारी प्रह्लाद हित,
द्विज पद उरधारी वेदन बखानिये।
'केशोदास' दारिद दुरद के विदारवे को

पहला अर्थ

श्री नृसिह पक्ष में

वह पृथ्वी को धारण करते हैं, उनके चरणोदक को श्री शकर जी अपने शिर पर लेते हैं। उनका यश ब्रह्मा जी गाते हैं और वह सब सुखों को देने वाले हैं अथवा ब्रह्मा जी उन्हें 'सर्व सुखदाता' कहकर उनकी प्रशसा करते हैं। जिनके कोमल और निर्मल चरण श्री लक्ष्मी जी के कर-कमलों द्वारा सेवित हैं। जो गुणों से युक्त हैं। उन्हें हृदय में क्यों स्थान नहीं देते ? अथवा उन्हें हृदय मे स्थान क्यों न दिया जाय। जो हिरण कशिपु को मारने वाले तथा प्रहलाद के हितूकर्त्ता हैं, ब्राह्मण (भृगु) के चरण को छाती पर धारण करने वाले हैं तथा वेदों मे जिनकी प्रशसा है। 'केशवदास' कहते हैं कि दरिद्र रूपी हाथी को मारने के लिए एक नृसिह को अथवा राजा अमरसिंह को समर्थ समझना चाहिए।

दूसरा अर्थ

(अमरसिंह पक्ष मे)

पृथ्वी के बड़े बड़े राजा जिनका चरणोदक अपने शिर पर धारण करते हैं, तथा जिन्हें लोग सुखदाता बतलाते हुए चारों ओर प्रशसा करते हैं। जिनके कोमल तथा स्वच्छ चरण, सुन्दर स्त्रियो के हाथों से सेवित होते हैं, जो अनेक गुणों से युक्त हैं। उन्हें अपने हृदय मे क्यों न स्थान दिया जाय। जो सोने की शैय्या के दान करने वाले हैं और महा आनन्द के हितू हैं। जो ब्राह्मण के चरण को हृदय में रखते हैं अर्थात् उनका आदर करते हैं) और जो वेदों की व्याख्या करने वाले हैं। अतः (केशवदास कहते हैं कि) दारिद्रयरूपी हाथी के मारने के लिए एक नृसिह अथवा राजा अमरसिह ही को समर्थ मानना चाहिए।

तीन अर्थ का श्लेष

कवित्त

परम विरोधी अविरोधी ह्वै रहत सब
दानिन के दानि, कवि केशव प्रमान है।
अधिक अनन्त आप, सोहत अनन्त संग,
अशरण शरण, निरच्छक निधान है।
हुतभुक, हित मति, श्रीपति बसत हिय,
गावत है गंगाजल, जग को निदान है।
'केशौराय' की सौं कहैं 'केशौदास देखि देखि,
रुद्र कौ समुद्र की अमरसिंह रान है॥३१॥

पहला अर्थ

श्रीरुद्र पक्ष में

जिनके यहाँ परम विरोधी (सिंह, बैल, सांप मोर, चूहा-साँप, और अग्नि-जल) जीव और पदार्थ अविरोधी होकर (परस्पर प्रेम पूर्वक) रहते हैं। जो दानियों को दान देने वाले हैं अर्थात् देवताओं को भी वरदान देते हैं और जो केशव (श्रीनारायण) के सच्चे कवि हैं अर्थात् उनका गुण गान करते हैं। जो स्वयं अनन्त से अधिक (बड़े) हैं परन्तु अनन्त (शेष नाग) के साथ रहते हैं। जो शरण हीनों की शरण हैं तथा अरक्षित जीवों के लिए (सुख के) निधान हैं। अग्नि के हित पर जिनकी बुद्धि रहती है अर्थात् जिन्हें यज्ञादि अच्छे लगते हैं और जिनके हृदय में श्रीपति (श्रीविष्णु) रहते हैं जिन्हें गंगाजल अच्छा लगता है तथा जो संसार के जीवों की शरण है। ईश्वर की शपथ, केशवदास देख देखकर कहता है कि यह रुद्र है समुद्र है या अमर सिंह राना है।

जो गौओं को आकर्षित करते हैं अर्थात् गौएं उनके पीछे पीछे घूमती फिरती हैं और जो सुन्दर गुणों से भूषित है बड़े बड़े राजाओं को परास्त करने वाले या दुष्ट राजाओं को मारने वाले हैं। जो पाप कर्मों को हरने वाले और खर (गदहे का रूप रखकर आने वाले धेनुक राक्षस) को मारने वाले हैं तथा 'केशव' कहते हैं जिनका यश दासों (भक्तों) ने गाया है। जिन्हें नाग का शरीर प्रिय है (क्योंकि प्रभास क्षेत्र में साप का रूप रखकर समुद्र में गये थे) और जो लोग-माता यशोदा, रोहिणी आदि को सुख देने वाले है । जो अपने भाई (श्रीकृष्ण) के (कुवलया और कस वध आदि कार्यों में सहायक है, जो सदा नवल वय के और मन को अच्छे लगने वाले हैं। ऐसे या तो राजा रामचन्द्र है, या श्रीबलराम जी है, या श्री परशुराम जी है या राजा अमरसिंह है ।

तीसरा अर्थ

परशुराम पक्ष

जिन्हें दान वारि (दान देते समय सकल्प का जल) सुख देता है अर्थात जिन्हें दान देने में बड़ा आनन्द मिलता है। अपने जनक (जमदग्नि) की पीड़ा (कष्ट) का अनुसरण करके जो धनुष की प्रत्यता खींचते हुए, तत्कालीन (रौद्र) रस से सुशोभित लगते थे। जो अनेक राजाओं को मारने वाले कर्मा (पाप कर्मों) के हरने वाले है । जो बड़े बड़े दोषों के नाशक है और केशव कहते हैं कि उनके दासों ने उनकी प्रशसा इसी प्रकार की हैं। जिन्हें नागधर (श्री शकर जी) प्रिय मानते हैं और जो लोक-माता श्री पार्वती को (अपने गुणों से सुख देने वाले हैं । जिनका सहायक कोई सगा भाई न था और अपने बल के भरोसे रहने के कारण ही जिनकी प्रशसा की जाती है। ऐसे श्री परशुराम जी हैं, जो मेरे मन को अच्छे लगते हैं ।

चौथा अर्थ

राजा अमरसिंह पक्ष

जो दानवों के बैरी देवताओं को (यज्ञ, पूजा-पाठ-आदि में) सुख देते हैं और नीच पुरुषों के अनुकूल नहीं चलते। धनुष की डोरी खींचते समय बहुत ही अच्छे लगते हैं। जो नर-देव (ब्राह्मणों) के लिए क्षयकर (हानि पहुँचाने वाले) कर्म (कार्य) हैं, उन्हें हर लेते हैं अर्थात् उनको हानि करने वाले कार्यों को नहीं होने देते। 'केशव' कहते हैं कि जो खर दूषण को मारने वाले श्री रामचन्द्र के दास हैं। जो नाग-धर (हाथियों को पकड़ने वाले) भीलों को प्रिय मानते हैं। अपनी माता को सुख देने वाले हैं। प्रजा को भाई के समान सहायता देने वाले तथा नवल गुणों से भूषित हैं, जिनकी सभी प्रशंसा करते हैं। ऐसे राजा अमरसिंह हैं जो मेरे मन को अच्छे लगते हैं।

पाँच अर्थ का श्लेष

कवित्त

भावत परम हंस, जात गुण सुनि सुख,
पावत संगीत मीत विबुध बखानिये।
सुखद सकति धर समर सनेही बहु,
बदन विदित यश 'केशौदास' गानिये।
राजै द्विज राज पद भूषन विमल कम—
लासन प्रकास परदार प्रिय मानिये।
ऐसे लोकनाथ कै त्रिलोकनाथ नाथ नाथ,
कैधों रघुनाथ कै अमरसिंह जानिये ॥२३॥

पहला अर्थ

ब्रह्मा जी के पक्ष में

जिन्हें परम् अर्थात् श्रीनारायण भगवान् अच्छे लगते हैं तथा जिन्हें हंस प्रिय हैं (क्योंकि उनका वाहन है) और जो जात अर्थात्

जो संगीत प्रिय हैं तथा बड़े बुद्धिमान कहे जाते हैं जो सुन्दर शक्ति (बर्छी) के धारणकर्त्ता हैं अर्थात् भाला चलाने मे निपुण हैं। जो युद्ध-प्रिय हैं। जिनके यश का वर्णन बहुत से लोग करते हैं और केशवदास भी करते हैं। जो ब्राह्मणो के चरणो को स्वच्छ भूषण मानते हैं अर्थात् उनके भक्त है। जो लक्ष्मीवान और परदार (शत्रु की भूमि) को प्यार करने वाले अथवा लेने की इच्छा रखने वाले हैं। ऐसे गुणों से युक्त राणा अमरसिंह को समझना चाहिए।

श्लेष अलंकार के भेद

दोहा

तिनमें एक अभिन्न पद और भिन्नपद जानि।
श्लेष सुबुद्धि दुवेष के, केशवदास बखानि ॥३४॥

'केशवदास' कहते हैं कि हे सुबुद्धि पाठक! श्लेष अलकार दो तरह के होते हैं। उनमे से एक 'अभिन्नपद' कहलाता है और दूसरा 'भिन्नपद' कहलाता है।

उदाहरण

अभिन्नपद

कवित्त

सोहति सुकेशी मंजुघोषा रति उर बसी,
राजाराम मोहिबे को सूरति सोहाई है।
कलरव कलित सुरभि राग रंग युत,
बदन कमल षटपद छवि छाई है।
भृकुटी कुटिल धनु, लोचन कटाक्ष शर,
भेदियत तन मन अति सुखदाई है।
प्रमुदित पयोधर दामिनी सी नाथ साथ,
काम की सी सेना काम सेना बनि आई है ॥३५॥

काम मेना वेश्या कामदेव की सेना के समान ही बनकर आई है। क्योंकि जिस कामदेव की सेना में सुकेशी, मञ्जुघोषा रति, तथा उरवसी जैसी सुन्दरियाँ रहती हैं, उसी प्रकार कामसेना भी सुकेशी (सुन्दर बाले वाली) मञ्जुघोषा (मधुर बोलने वाली रति के समय हृदय में बसने वाली हैं। जिस प्रकार काम की सेना देखने मे सुन्दर लगती है, उसी प्रकार कामसेना वेश्या की भी सुहावनी मूर्त्ति है। जिस प्रकार कामदेव की सेना सुन्दर स्वर और रागरग से युत्त रहती है, उसी प्रकार यह कामसेना वेश्या भी सुन्दर स्वरवाली और सुगध तथा रागरग से युत्त रहती है। काम की सेना का जिस प्रकार बदन कमल है, उसी प्रकार इसका मुख भी कमल के समान है। जैसे काम की सेना में भौंरे गुंजारते हैं वैसे इसके मुख कमल पर भी भौंरे मडराते हैं। जिस प्रकार काम की सेना मे टेढ़ी भौंहें, टेढे धनुष का काम करती है और आँखों की तिरछी दृष्टि वाण के समान शरीर को भेद डालते हैं, उसी प्रकार इस काम सेना वेश्या की टेढ़ी भौंहें तथा आँखों की तिरछी दृष्टि धनुष-वाण का काम देती हुई शरीर को भेद डालती हैं। कामदेव की सेना जिस प्रकार तन और मन को सुख देने वाली होती है, उसी प्रकार यह कामसेना वेश्या भी शरीर और मन को सुख दायिनी है। काम की सेना मे जिस प्रकार उन्नतकुच और दामिनी जैसी नायिकाएँ होती हैं उसी प्रकार यह कामसेना भी उन्नत कुचवाली और दामिनी जैसी सुन्दर वर्ण की तथा चचल है। काम की सेना जिस प्रकार अपने नाथ (कामदेव) के साथ रहता है, उसी प्रकार यह अपने साथ राजारामसिंह के साथ रहती है।

भिन्नपद श्लेष

दोहा

पदही में पद काढिये, ताहि भिन्नपद जानि।
भन्नभिन्न पुनि पदनिके, उपमा श्लेष बखानि ॥२३॥

जात हैं बिलीन ह्वै दुनी के दान देखि राम-
चन्द्र जी को दान कैधों केशव कृपान है ॥४०॥

'केशवदास' कहते हैं कि यह श्रीरामचन्द्र जी का दान है या उनकी तलवार है। क्योंकि जिस प्रकार दान में पहले श्रेष्ठ ब्राह्मणों को सोने के आभूषणों सहित इतने घोड़े दिये जाते हैं कि जिनका कोई प्रमाण (सीमा) नहीं होता, उसी प्रकार तलवार भी घोड़ों पर सवार क्षत्रिय राजाओं पर चलती हैं और वह सुन्दर रग की अर्थात् चमकीली तथा जिसका कोई प्रमाण नहीं है अर्थात् बहुत लम्बी है। जिस प्रकार दान सजल (जल के सहित) तथा सहित (प्रेम पूर्वक) होता है और अग (शरीर) में उत्साह के साथ प्रसंग पर प्रेम रखकर दिया जाता है, उसी प्रकार तलवार सजल (पानीदार) अङ्ग (मूठ) सहित होती है और विक्रम का प्रसग उपस्थित होने पर अपना रग दिखलाती है। जिस प्रकार दान (कोष) खजाने से निकालकर धैय पूर्वक दिया जाता है उसी प्रकार तलवार भी कोष (मियान) से नि।लकर चलानेवाले को धैर्य देती है। जिस प्रकार दान दीनों को दयालु होकर दिया जाता है और इतना दिया जाता है प्रति द्वन्द्वी दानी को खटकता है, उसी प्रकार तलवार कायरों पर दया प्रकट करती है और शत्रुओं को खटकती है। जिस प्रकार दान कीर्त्ति का प्रतिपालन करता है, उसी प्रकार तलवार से भी कीर्त्ति ाप्त होती है इसे सारा ससार जानता है। जिस प्रकार उनके दान को देखकर सब दान लुप्त हो जाते हैं उसी कार उनकी तलवार को देखकर सब का मद उतर जाता है।

उदाहरण—२

भिन्न क्रिया श्लेप

कछु कान्ह सुनो कल कूकति कोकिल काम की कीरति गावन सी।
पुनि बातें कहै कलभाषिनि कामिनि कोऊ कलान पढावत सी ॥

सुनि बाजत बीन प्रवीन नवीन सुराग हिये उपजावत सी।
कहि केशवदास प्रकास विलास सबै बन शोभ बढ़ावत सी ॥४१॥

हे कृष्ण सुनो। कोयल, कामदेव की कीर्त्ति गाती हुई सी, बोल रही है। मधुर भाषिणी कामिनियाँ, काम-कला पढ़ाती हुई सी बातें कर रही हैं। हृदय में नवीन राग को उत्पन्न करती हुई सी नवीन वीणा किसी प्रवीण के द्वारा बज रही है। 'केशवदास' कहते हैं कि ये सभी विलास बन (बाग, घर और जगल) की शोभा ही बढ़ाते हैं।

उदाहरण—२

विरुद्धकर्मा श्लेष

कवित्त

दोऊ भगवंत, तेजवंत, बलवंत दोऊ,
दुहुन को बेदन बखानी बात ऐसी है।
दोऊ जानैं पुण्यपाप, दुहुन के ऋषि बाप,
दुहुन की देखियत मूरति सुदेशी है।
सुनौ देवदेव बलदेव, कामदेव प्रिय,
'केशोराय' की सौं तुम कहौ तैसी जैसी है।
बारुणी को राग होत, सूरज करत अस्त,
उदौ द्विजराज को जु होत यह कैसी है ॥४२॥

दोनों (सूर्य और चन्द्रमा) किरणधारी हैं, दोनों ही तेजस्वी और बलवान हैं तथा दोनों ही का वर्णन वेदों में है। दोनों ही पाप-पुण्य जानते हैं, दोनों के पिता ऋषि हैं। दोनों ही की मूर्त्ति सुन्दर दिखलाई पड़ती है। हे देव-देव बलदेव सुनिए! आपको केशवराय (श्रीकृष्ण) की शपथ है। जैसी बात है वैसी ठीक-ठीक बतलाइए। वारुणी (पश्चिम) के लाल होते ही चन्द्रमा के उदय होने पर, सूर्य अस्त हो जाते हैं ऐसी बात क्यों होती है? वारुणी (शराब) पर अनुराग

होने पर सूर्य (क्षत्रिय वर्ण) का अस्त हो और चन्द्र (ब्राह्मण) का उदय हो, यही विचित्रता है।

उदाहरण—४

नियमश्लेष

कवित्त

बैरी गाय ब्राह्मन को, कालै सब काल जहां,
कवि कुल ही को सुबरण हर काज है।
गुरु सेज गामी एक बालकै बिलोकियत,
मातंगनि ही को मतवारे को सो साज है।
अरि नगरीन प्रति होत है अगम्या गौन,
दुर्गन ही 'केशौदास' दुर्गति आज है।
राजा दशरथ सुत राजा रामचन्द्र तुम,
चिरु चिरु राज करौ जाको ऐसो राज है॥ ३॥

जहाँ गाय और ब्राह्मण का वैरी यदि कोई है तो काल (मृत्यु) ही है, अन्यथा कोई वैरी नहीं। जहाँ सुवरण हरने का काम केवल कवियों का ही है अर्थात् कोई सुवर्ण सोने की चोरी नहीं करता, केवल कवि लोग सुवर्ण (सुन्दर अक्षर) का हरण काव्य रचना के लिए करते हैं। जहाँ गुरु की शय्या पर सोता हुआ केवल बालक ही देखा जाता है अर्थात् गुरु (माता) के साथ केवल बालक सोता है अन्यथा गुरु सेजगामी कोई नहीं है। जहाँ मतवालापन केवल हाथियों में ही पाया जाता है, अन्यथा कोई मतवाला नही है। जहाँ अगम्यागमन (अगम्य स्थानों में पहुँचना) केवल शत्रु नगरी पर ही होता है अन्यथा अगम्यागमन (अगम्य स्त्री-सगम) कहीं सुनाई तक नहीं पड़ता। 'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ दुर्गति (टेढी हालत) केवल दुर्गों (किलों) मे ही मिलती है अन्यत्र दुर्गति कहीं नहीं है। हे राजादशरथ

के पुत्र रामचन्द्र ! आपका ऐसा राज्य है, आप चिरकाल तक राज्य करें।

उदाहरण—५

विरोधीश्लेष

सवैया

कृष्ण हरे हरये हरैं संपति, शम्भू विपत्ति इहै अधिकाई।
जातक काम अकामनि को हित घातक काम सुकाम सहाई।
छातीमें लच्छि दुरावत वेतो फिरावत ये सबके सँग धाई।
यद्यपि 'केशव' एक तऊ, हरि त हर सेवक कोमत भाई ॥४४॥

श्रीकृष्ण तो अपने दासों की) धीरे-धीरे सम्पत्ति हर लेते हैं और श्रीशङ्कर जी विपत्ति को हरते हैं यही अधिकता है। हरि (श्रीकृष्ण) काम को उत्पन्न करनेवाले हैं अर्थात् उसके पिता हैं और निष्काम भक्तों के हितैषी हैं। श्रीशङ्कर ज कामदेव का घातक (मारने वाले) और सकाम इच्छा से भक्ति करनेवाले) भक्तों के सहायक हैं। वे श्रीकृष्ण) लक्ष्मी को अपनी छाती में छिपाए रखते हैं और ये (श्री शकर जी) सभी (भक्तों) के साथ उसे फिराते रहते हैं अर्थात् भक्तों को लक्ष्मी प्रदान करते रहते हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि यद्यपि हरि और (श्रीकृष्ण) और हर (श्रीशङ्कर जी) एक ही हैं, परन्तु शङ्कर जी सेवक (भक्त) पर अधिक सद्भाव रखते हैं।

१३—सूक्ष्म अलङ्कार

दोहा

कौनहु भाव प्रभाव ते, जानै जिय की बात।
इंगित तें आकार तें, कहि सूक्ष्म अवदात ॥ ४५ ।

किसी भी भाव, संकेत या आकार से, जब दूसरे के मन की बात जान ली जाती है, तब उसे सूक्ष्म अलकार कहते हैं।

उदाहरण—६

सवैया

सखि सोहत गोपसभा महि गोविन्द बैठे हुते द्युतिको धरिकै।
जनु केशव पूरणचन्द्र लसै चित चारु चकोरनिको हरिकै॥
तिनको उलटोकरि आनि दियो केहु नीर नयो भरिकै।
कहि काहेतें नेकु निहार मनोहर फेरि दियो कविता करिकै॥४६॥

(केशवदास किसी सखी की ओर से कहते हैं कि हे सखी! श्रीकृष्ण गोपों की मडली में, शोभा धारण किये हुए बैठे थे। वह ऐसे ज्ञात हो रहे थे माना चकोरों का मन हरण करता हुआ पूर्ण चन्द्रमा सुशोभित हो रहा हो। इसी बीच मे, किसी ने उनको कमल के पुष्प में पानी भरकर उलटा करके, दे दिया। श्रीकृष्ण ने उसकी ओर तनिक देखा और उस कमल को काली जैसा करके (खिले हुए फूल को, बन्द करके) लौटा दिया। बता, क्यो?

[कमल पुष्प लाने वाले का तात्पर्य यह था कि वियोगिनी अपना कमल-मुख लटकाये हुए, आपके विरह में रो रही है। श्रीकृष्ण ने, कमल को कली बनाकर यह सकेत किया कि जब कमल सकुचित हो जाते हैं, तब रात मे मिलूँगा।]

१४—लेशालंकार

दोहा

चतुराई के लेसतें चतुर न समझैं लेस।
बरणत कवि कोविद सबै, ताको केशव लेस॥४७॥

केशवदास कहते हैं जहॉ ऐसी गूढ चतुराई की जाय कि उसे चतुर लोग भी लेशमात्र न समझ पावैं, वहॉ, उसे कवि लोग तथा विद्वान् सभी 'लेश' अलकार कहा करते हैं।

उदाहरण

सवैया

खेलत हैं हरि बागे बने जहँ बैठी प्रिया रतितें अतिलोनी।
केशव कैसेहु पीठ में दीठि परी कुच कुंकुमकी रुचिरोनी॥
मातु समीप दुराइ भले तिन सात्त्विक भावन की गति होनी।
धूरिकपूरकी पूरि विलोचन सूँघि सरोरुह ओढि उढ़ोनी॥४८॥

श्रीकृष्ण बने-ठने हुए बाग में खेल रहे थे और उनकी रति से भी सुन्दर प्रिया वहीं बैठी हुई थी। 'केशवदास कहते हैं कि किसी प्रकार उसकी दृष्टि उनकी पीठ पर लगे हुए, निज कुचकुँकुम की रमणीय चमक पर जा पड़ी। माता के समीप होने के कारण उसने अपने सात्त्विक भावों (आँसू, कम्प तथा रोमाञ्च) को भलीभाँति छिपा लिया। आँसुओं को छिपाने के लिए कपूर की धूल आँखों में छोड़ ली, कम्प छिपाने के लिए कमल को सूँघने लगी (जिससे ज्ञात हो कि कमल की सुगंध की प्रशंसा में शिरहिल रहा है) और रोमाञ्च को छिपाने के ओढ़नी को अच्छी तरह से ओढ़ लिया।

[प्रणय-कलह के समय श्रीकृष्ण ने प्रिया की ओर से पीठ दी थी। नायिका ने प्रेम-वश, पीछे से ही उनके मुख का चुम्बन किया था, अत उनके कुचों का कुँकुँम उनकी पीठ पर लग गया था उसी को देखकर नायिका को सात्त्विक भाव उत्पन्न हुए और उसने उन्हें चतुराई से छिपा लिया।]

१५—निदर्शना

दोहा

कौनहुँ एक प्रकारते, सत अरु असत समान।
कहिये प्रकट निदर्शना, समुझत सकल सुजान॥ ४९॥

जहाँ किसी भी एक ढङ्ग से, भली और बुरी बातों का समान परिणाम (अर्थात् भले का भला और बुरे का बुरा) प्रकट किया जाता है उसे निदर्शना' कहते हैं, इसको सभी चतुर लोग जानते हैं

उदाहरण

कवित्त

तेई करैं चिरराज, राजन में राजैं राज,
तिनही को यश लोक-लोक न अटतु है।
जीवन, जनम तिनही के धन्य 'केशौदास'
औरन को पशु सम दिन निघटतु है।
तेई प्रभु परम प्रसिद्ध पुहुमी के पति,
तिनही की प्रभु प्रभुताई को रटतु है।
सूरज समान सोम मित्रहू अमित्र कहँ,
सुख, दुख निज उदै अस्त प्रगटतु है ॥५०॥

वे ही राजा चिरकाल तक राज्य करते हैं, तथा वे ही राजाओं में अच्छे माने जाते हैं और उन्हीं का यश लोकों में नहीं समाता। 'केशवदास' कहते हैं कि उन्हीं का जन्म धन्य समझना चाहिए और अन्य राजाओं के दिन तो पशु के समान (केवल, खाने-पीने और सोने में) कटते हैं। वही राजा प्रसिद्ध होते हैं और उन्हीं राजाओं की प्रभुताई को लोग रटते रहते हैं, जो सूर्य और चन्द्रमा की भाँति अपने उदय तथा अस्त से, मित्र तथा शत्रुओं को, सुख अथवा दुःख देते हैं।

१६—ऊर्जालंकार

दोहा

तजै निज हँकार का, यद्यपि घटै सहाय।
ऊर्ज नाम तासों कहें, केशवकवि कविराय ॥ ५१ ॥

केशवदास कहते हैं कि जहाँ सहायता के घटने पर भी (अर्थात् सहायहीन होने पर भी) स्वाभिमान को न छोड़ा जाय, वहाँ सभी श्रेष्ठ कविगण 'ऊर्ज' अलकार कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

को बपुरो जो मिल्यो है विभीषण है कुलदूषण जीवैगो कौलो।
कुम्भकरन्न मरयो मघवारिपु, तौहू कहा न डरों यम सौलों।
श्रीरघुनाथ के गातनि सुन्दरि जानसितू कुशलात न तौलों।
शाल सबै दिगपालनिको कर रावण के करवाल है जौलों॥५२॥

(रावण मन्दोदरी से कहता है कि) विभीषण जो रामचन्द्र से जा मिला है, वह वेचारा क्या है और वह कुलकलक जीवेगा ही कब तक? कुम्मकर्ण और मेघनाथ भी जो मर गये, उसका भी मुझे शोच नहीं है मैं सौ यमराजों से भी नहीं डरता। हे सुन्दरी! जब तक समस्त दिग्पालों को शालनेवाला खड्ग मेरे हाथों में है, तब तक श्रीराम-चन्द्र जी के शरीर की कुशल मत समझ।

१७—रसवत अलङ्कार

दोहा

रसवत होय सुजानिये, रसवत केशवदास।
नव रसको संक्षेपही, समझो करत प्रकास॥ ५३॥

'केशवदास' कहते हैं कि किसी भी रस-मय वर्णन को रसवत अलकार समझिए। अथवा यह मानिए कि यह अलकार मानो नवों रसों का सक्षेप में प्रकटीकरण है।

उदाहरण

शृङ्गार रसवत

आन विहारी, न आन कहौं, तनमें कछु आन न आनहीं कैसो।
केशव स्याम सुजान स्वरूप न, जाय कह्यो मन जानतु जैसो॥

लोचन शोभहि पीवत जात, समात सिहात, अघात न तैसो।
क्यों न रहात बिहात तुम्हें, बलिजात सुबात कहौ टुक वैसो ॥५४॥

मैं आपकी शपथ खाकर कहती हूँ कि 'मुझे आपसे और कुछ भी नहीं कहना है।' (यदि कुछ कहना चाहती हूँ तो यही कि कुछ कुछ आपका शरीर तथा पूर्णरूप से मुख अन्य (अर्थात् मेरे पति) जैसा ही है। (केशवदास उस नायिका की ओर से कहते हैं कि) सुजान श्याम का जैसा स्वरूप है, वह कहा नहीं जा सकता। वह जैसा है, वैसा मन ही जानता है। (परन्तु) मेरे नेत्र आपकी शोभा को भी पीते जाते हैं, उसी में समाते से जाते हैं और वैसे ही सिहाते हुए अघाते नहीं। यदि आपको मेरे पास रहते नहीं बनता तो मैं बलिहारी जाती हूँ, थोड़ी देर मेरे पास बैठकर कुछ बातें ही कीजिए।'

[इसमें वियोग शृङ्गार मुख्य है, क्योंकि नायिका वियोगिन है परन्तु अन्य पुरुष से प्रेम प्रकट करती हुई बातें करना चाहती है, अतः संयोग शृङ्गार भी गौण रूप से विधमान है। अत. वियोग शृङ्गार का पोषक संयोग शृंगार रसवत है]

वीर रसवत

छप्पय

जिहि शर मधुमद मर्दि महासुर मर्दन कीनों।
मारयो कर्कस नरक शंख, हनि शख सुलीनों॥
निःकण्टक सुरकटक कयो, कैटभ वपु खण्डयो।
खरदूषण त्रिशिरा कबन्ध तरु खण्ड विहण्डयो॥
बल कुम्भकरण जिमि सहरयो पल न प्रतिज्ञातैं टरौं।
तिहि बाण प्राणदशकठ के, कठ दशौ खडित करौं॥५५॥

जिस बाण से मैंने 'मधु' राक्षस के अभिमान को चूर किया और जिससे मैंने 'मुर' राक्षस का मर्दन किया। जिससे दुष्ट नरकासुर और

शखासुर को मारा जिससे 'कैटभ राक्षस के शरीर को खण्डित करके, देवताओं के समूह को निष्कण्टक बनाया। जिससे खर, दूषण, त्रिशिरा और कबन्ध राक्षसों को नष्ट किया और सातों ताल वृक्षों को काट गिराया जि के बल मैंने कुम्भकर्ण को मारा, उसी बाण से रावण के दशों शिरों को काट गिराऊँगा इसकी मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। इससे मैं पल भर का भी न डिगूँगा।

[इस उक्ति को श्रीरामचन्द्र जी ने श्रीलक्ष्मण जी को हतोत्साह होते देख कहा था। उत्साहित करने के कारण इसका स्थायी भाव उत्साह है अत वीर रस से पुष्ट वीर रसवत हुआ]

रौद्र रसवत

उदाहरण

छप्पय

करि आदित्य अदृष्ट नष्ट यम करौं अष्ट वसु।
रुद्रनि बोरि समुद्र करौं गन्धर्व सर्व पसु॥
बलित अबेर कुबेर बलिहि गहि देउँ इन्द्र अब।
विद्याधरनि अविद्य करौं बिन सिद्धि सिद्ध सब॥
लैकरौं दासिदिति की अदिति अनिल अनल मिलिजाहि जब।
सुनि सूरज सूरज उगतहीं, करौं असुर संसार सब॥५६॥

[यह श्रीरामचन्द्र जी की उक्ति है। जिस समय श्रीलक्ष्मण जी के शक्ति लगी थी और वह अचेत पड़े हुए थे, उस समय वह बहुत व्यग्र हो रहे थे कि कहीं सूर्योदय न हो जाय और श्रीलक्ष्मण जी की औषधि न हो सके, क्योंकि ऐसा ही बतलाया गया था कि सूर्योदय पर औषधि का कोई प्रभाव न रहेगा। उन्हें देवताओं पर क्रोध आ गया कि मैं तो इनके हित के लिए ही रावण से युद्ध कर रहा हूँ और ये

श्रीरघुनाथ गनो असमर्थ न, देखि बिना रथ हाथिहि घोरहि।
तोयो शरासन शंकर को जिहि, शोच कहा तुव लंक न तोरहि ॥५६॥

(मन्दोदरी ही फिर कह रही है कि) जब दूसरे (सुग्रीव) का अपराध करके उनके हाथ से बालि नहीं बच सका, तब तुम उन्हीं का अपराध करके कैसे बचोगे ? (केशवदास मन्दोदरी की ओर से कहते हैं कि) जब उन्होंने क्षीर समुद्र मथ डाला, तब इस छोटे समुद्र को क्यों न बाँधलेंगे। इसलिए तुम श्रीरघुनाथ जी को, बिना रथ, घोड़े और हाथियों के देख असमर्थ न समझो। जिन्होंने श्रीशङ्कर जी का धनुष तोड़ डाला, वह तुम्हारी लक (कमर) को न तोड़ सकेगा—इसमें सोच-विचार ही क्या है।

अद्भुत रसवत

उदाहरण (१)

कवित्त

आशीविष, सिन्धु विष, पावक सों नातो कछू
हुतो प्रह्लाद सों, पिता को प्रेम टूटो है।
द्रौपदी की देह में खुथी ही कहा दुःशासन,
खरोई खिसानों खैंचि वसन न खूँटो है।
पेट में परीछित की, पैठि कै बचाई मीचु,
जब सब ही को बल विधवान लूटो है।
केशव अनाथन को नाथ जो न रघुनाथ,
हाथी कहा हाथ कै हथ्यार करि छूटो है ॥६१॥

जिस समय पिता का प्रेम टूट गया, उस समय सर्प हलाहल विष, तथा अग्नि से क्या प्रह्लाद का कुछ नाता था (जो वह बच गया) ? द्रौपदी की देह में क्या वस्त्रों की धरोहर रखी हुई थी, जो दुःशासन

खींच-खींच कर थक गया और वस्त्र कम न हुए। जब ब्रह्मा के बाण (ब्रह्मास्त्र) ने सबका बल लूट लिया अर्थात् नि.शक्त बना दिया, तब (चक्रसुदर्शन) द्वारा पेट मे पहुँचकर परीक्षित को बचाया था। 'केशवदास' कहते हैं कि यदि श्रीरामचन्द्र जी अनाथों के नाथ न होते तो क्या हाथी ग्राह के फन्दे से, अस्त्र चलाकर छूटा था ?

(उक्त घटनाओं से आश्चर्य का भाव उत्पन्न होता है अत: अद्भुत रसवत है)

उदाहरण (२)

कवित्त

केशौदास वेद विधि व्यर्थ ही बनाई विधि,
व्याध शवरा को, कौने संहिता पढ़ाई ही।
वेष धारी हरि वेष देख्यो है अशेष जग,
तारका को कौने सीख तारक सिखाई ही।
वारानसी वारन करयो हो वसोवास कब
गनिका कबहि मनि कनिका अन्हाई ही।
पतितन पावन करत जो न नन्दपूत,
पूतना कबहिं पति देवता कहाई ही ॥६७॥

'केशवदास' कहते हैं कि वेद-विधि व्यर्थ ही बनाई गई है (क्योंकि यदि वेदानुकूल चलने से ही मोक्ष मिलता तो) व्याध तथा शबरी को किसने संहिता पढाई थी (जो तर गये , ? (श्रीकृष्ण का रूप रखकर राजकुमारी से विवाह करने वाले श्रीकृष्ण वंशधारी की जो लज्जा रखी थी, उसे भी सारे संसार ने देखा था ताड़का को तारक मन्त्र की शिक्षा किसने दी थी (जो वह भी तर गई) ? हाथी ने बनारस में जाकर कब निवास किया था और गणिका कब मणि कर्णिका पर स्नान करने गई थी ? यदि नन्द के पुत्र (श्रीकृष्ण) पतितों को

उद्धार करनेवाले न होते तो पूतना कहाँ की पतिव्रताई कहलाती थी (जो उसका उद्धार हो गया) ।

(इसमें भी अद्भुत बातों के कारण 'आश्चर्य' का उदय होता है अतः अद्भुत रसवत है)

हास्य रसवत

उदाहरण

सवैया

बैठति है तिनमें हठिकै, जिनकी तुपसों मति प्रेमपगी है।
जानत हौं नलराज दमन्ती की दूत कथा रसरग रँगी है॥
पूजैगी साध सबै सुखकी मन, भाग की केशव जोति जगी है।
भेद की बात सुनेते कछू वह मासकते मुसुक्यान लगी है॥६३॥

(एक दूती नायक से कहती है कि जिसकी बुद्धि तुम्हारे प्रेम में पगी हुई है अर्थात् जो तुमसे प्रेम करती हैं, वह उन्हीं में हठपूर्वक जाकर बैठा करती है। मैं यह भी जानती हूँ कि वह राजा नल और दमयन्ती की कथा में बड़ा आनन्द लेती है (क्योंकि दमयन्ती ने पहले हँस के द्वारा दूतत्व करवाया था)। (केशवदास दूती की ओर से कहते हैं कि मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि तुम्हारे मन की सब साध पूरी होगी और तुम्हारे भाग्य की ज्योति अब जग गई है अर्थात् तुम्हारा भाग्योदय हो गया है। इधर भेद की बातें (प्रेम मयी बातें) सुनकर वह लगभग एक महीने से मुसकराने भी लगी है।

(उक्त बातों को सुनकर नायक के मन में हँसी का भाव उदय होना स्वाभाविक है, अतः हास्य रसवत अलंकार है)

शान्त रसवत

उदाहरण

सवैया

देइगो जीवनवृत्ति वहै प्रभु है मवरे जगको जिनदैये।
आवत ज्यों अन उद्यमते सुख, त्यों दुख पूरवके कृत पैये॥
राज औ रक सुराज करो अब काहे को केशव काहु डरैये।
मारनहार उबारनहार सुतौ सबके शिर ऊपर हैये॥६४॥

जो प्रभु सारे समार को जीवन वृत्ति देता है, वही मुझे भी जीविका देगा। बिना उधम किये जैसे सुख मिलता है वैसे ही पूर्वजन्म कृत पुण्य के अनुसार दु ख भी प्राप्त होता है। 'केशवदास' कहते हैं कि (यही सोचकर राजा और रक सभी आनन्द करो क्योंकि मारने और बचानेवाला तो सबके ऊपर है ही।

(इसमें ईश्वर पर दृढ विश्वास की शिक्षा दी गई है, अतः शान्त रसवत अलङ्कार है)

१८—अर्थान्तर न्यास

दोहा

और जानिये अथ जहँ औरे वस्तु बखानि।
अर्थांतर को न्यास यह, चारि प्रकार सुजानि॥६५॥

जहाँ दूसरी वस्तु का वर्णन करके, दूसरा अर्थ लगाया जाय, वहाँ अर्थान्तर न्यास अलङ्कार होता है। यह चार प्रकार का समझना चाहिए।

सामान्य उदाहरण

सवैया

भोरेहूँ भौह चढ़ाय चितै, हरपायइये कै मन केहूँ करेरो।
ताको तौ केशव कारहिये दुख होत, महा सु कहौ इत हेरो॥

कैसोहैं तेरो हियो हरि में रहि छोरैं नहीं तनु छूटत मेरो।
बूँदकदूधको मारयो है बांधि, सुजानत हौं माई जायो न तेरो ॥६६॥

(कोई एक व्रजनारी यशोदा जी से कहती है कि) मैं तो धोखे से भी अपने बच्चे को भौंहें चढ़ाकर जी कड़ा करके डरवाती हूँ तो (केशवदास उसकी ओर से कहते हैं कि) मुझे उसका करोड़ों भाँति से, हृदय में महादुःख होता है इसीलिए कहती हूँ कि जरा इधर देख। तेरा हृदय श्रीकृष्ण के प्रति कैसा है ? तनिक ठहर जा। (देख ऐसी गाँठ लगाई है कि) तनिक भी खोलने से नहीं खुलती तूने एक बूंद दूध को फैला देने पर अपने पुत्र को बाँधकर मारा है इससे ऐसा समझती हूँ कि यह तेरा जन्माया हुआ नहीं है।

[इसमें 'जायो न तेरो वाक्यांश से तुझे पुत्र के प्रति प्रेम नहीं है' अर्थ सूचित होता है अतः अर्थान्तर न्यास है।]

अर्थान्तर न्यास के चार भेद

दोहा

युक्त, अयु , बखानिये, और अयुक्तायुक्त।
केशवदास विचारिये, चौथो युक्तायुक्त ॥ ६७।

'केशवदास' कहते हैं कि (अर्थान्तर न्यास के) (१) युक्त (२) अयुक्त (३) अयुक्तायुक्त और (४) युक्ता-युक्त ये चार भेद माने जाते हैं।

१—युक्त अर्थान्तर न्यास

दोहा

जैसो जहाँ जु बूझिये, तैसो तहाँ सु आनि।
रूपशील गुण युक्ति बल, ऐसो युक्त बखानि। ६८॥

जिसको जैसा समझकर वर्णन किया जाय, उसको रूप, शील, गुण और युक्ति बल से वैसा ही प्रमाणित भी किया जाय तब उसे युक्त कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

गरुवो गुरू को दोष, दूषित कलंक करि,
भूषित निशचरीन अंकन भरत हैं।
चंडकर मण्डल तें लै लै वहु चडकर,
'केशौदास' प्रतिभास मास निसरत हैं।
विषधर बन्धु हैं अनाथिनि को प्रति वन्धु,
त्रिष को त्रिशेष वन्धु हिये हहरत हैं।
कमल नयन की सौं, कमल नयन मेरे,
चन्द्रमुखी! चन्द्रमा ते न्याय ही जरत हैं।

(कोई विरहिणी अपनी सखी से कहती है कि) हे चन्द्रमुखी! मैं कमल-नयन (श्रीकृष्ण) की शपथ खाकर कहती हूँ कि मेरे कमल जैसे नेत्र चन्द्रमा को देखकर ठीक ही जलते हैं, (क्योंकि चन्द्रमा और कमल का वैर स्वाभाविक ही है) दूसरे यह चन्द्रमा गुरु के प्रति भारी अपराध का अपराधी है कलंक से दूषित है। निशाचरियों को को अङ्क भरता है। क्योंकि राक्षसनियाँ रात में ही विचरती और सुख पाती हैं) सूय मण्डल से बहुत सी किरणों को चुरा-चुरा प्रतिमास निकला करना है। इसके विषधर (श्रीशङ्कर जी) बन्धु हैं। विरहिणियों शत्रु हैं और उस विष का तो विशेष भाई (सहोदर) ही है, जिससे सबके हृदय हिल जाते हैं।

[इसमें चन्द्रमा का वर्णन पहले यह कह कर किया गया कि 'मेरे नेत्र चन्द्रमा को देखकर जलते हैं फिर इसी कथन को उसके रूप, शील, गुण तथा युक्ति बल से प्रमाणित किया गया है अतः युक्ति अर्थान्तर न्यास है]

२—अयुक्त अर्थान्त न्यास

दोहा

जैसो जहा न बूझिये, तैसो तहां जु हो।
केशवदास अयुक्त कहि, बरणत हैं सब कोय ॥ ७० ॥

जहाँ जैसा वर्णन न करना चाहिए, वहाँ वैसा ही वर्णन किया जाय तब 'केशवदास' कहते हैं कि उस ो सब लोग अयुक्त अर्थान्तर न्यास कहकर वर्णन करते हैं।

उदाहरण

कवित्त

'केशवदास होत मारसिरो पै सुमार सी री,
आरसी लै देख देह ऐसिये है रावरी।
अमल बतासे ऐसे ललित कपोल तेरे,
अधर तमोल धरे दृग तिल चावरी।
यहा छबि छकि जात, छन में छबीले छैल,
लोचन गँवार छीनि लै हैं, इत आवरी।
बार-बार बरजति, बार बार जातिकत,
मैले बार बारों, अनिवारी है तू बावरी ॥७१॥

(केशवदास किसी सखी की ओर से उसकी सखी से कहते हैं कि) हे सखी। तेरी शाभा से, कामदेव पर माना मार सी पड़ रही है अर्थात् उसकी शोभा तेरी शोभा के आगे मन्द जान पड़ती है तनिक दर्पण लेकर देख। तेरी छवि ऐसी ही है तरे बतासे जैसे सुन्दर कपोल हैं, ओठों पर तेरे पान हैं और आँखें तिल चावरी (सफेद और काले तिल) की भाँति काली और श्वेत हैं। तेरी इस शोभा से ही तो छबीले छैल क्षण भर मे छक जाया करते हैं। गँवारों के नेत्र, तेरी इस शोभा को छीन लेंगे (नजर लग जायगी), इसलिए तू इधर

आजा। मैं तुझे बार-बार मना करती हूँ कि तू दरवाजे-दरवाजे क्यों घूमती है? मैं शाभावली अनेक स्त्रियों को तुझ पर निछावर करती हूं, तू ऐसी ही शोभावली है।

[इसमें स्त्री की शोभा की समता रति से न करके कामदेव से की गई है आरसी में मुँह न दिखाकर, देह को दिखाने के लिए कहा गया है, बतासे जैसे गाल बताये गये हैं, अधर पर तमोल का वर्णन है तथा सितासित न कहकर तिल चाँवरी सी आँखें बताई गई हैं। अत. ये सब वर्णन अयुक्त हैं—इसीलिए अयुक्त अर्थान्तर न्यास है]

३—अयुक्त-युक्त अर्थान्तर न्यास

दोहा

अशुभै शुभ ह्वै जात जहँ, क्यों हूँ केशवदास।
इहै अयुक्तै युक्त कवि, बरणत बुद्धि विलास ॥ ७२ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ पर अशुभ वर्णन किसी प्रकार शुभ वर्णन हो जायँ, वहाँ बुद्धिमान कवि लोग अयुक्तायुक्त अर्थान्तर न्यास कहते हैं।

उदाहरण (१)

सवैया

पातकहानि पितासगहारि वे, गभ के शूलनितें डरिये जू।
तालनि को बँधिवो बध रोरको, नाथ के साथ चिता जरिये जू ॥
पत्रफटेतें कटे ऋण केशव, कैसहूँ तीरथ में मरिये जू।
नीकी सदा लगै गारि सगेन की, डांड़ भलो जु गया भरिये जू ॥७३॥

पातक (पाप) की हानि भली है, पिता से हार जाना अच्छा है। गर्भवास के कष्टों से डरना अच्छा है तालाबों का बंधना निर्धनता का नाश और अपने पति के साथ चिता पर जलना भी अच्छा है

७—सहज व्यतिरेक

सवैया

गाय बराबरि धाम सबै, धन जाति बराबरिही चलिआई।
केशव कस दिवान पितानि, बराबरिही पहिरावनि पाई॥
बैस बराबरि दीपति देह, बराबरि ही विधि बुद्धि बड़ाई।
ये अलि आजुही हाहुगो कैसे, बड़ी तुम आँखि नहीं की बडाई॥८०॥

दोनों के गायें बराबर हैं, घर, धन और जाति भी सदा से बराबर ही चले आते हैं। (केशवदास सखी की ओर से) कहते हैं कि तुम्हारे पिताओं ने कस के दरबार से पहरावन (सिरोपाव) भी बराबर ही पाई है। तुम लोगों की वयस भी बराबर ही है। देह की सुन्दरता भी एक सी है तथा विधि (सस्कारादि, कुल परम्परा), बुद्धि और प्रतिष्ठा भी बराबर है। फिर हे सखी! केवल आँखों की बड़ाई के कारण तुम आज उनसे कैसे बड़ी हो जाओगी?

[यहाँ सब बातें समान होने पर भी नायिका की आँखें बड़ी हैं अतः व्यतिरेक अलङ्कार है]

१०—अपन्हुति अलङ्कार

दोहा

मनकी वस्तु दुराय मुख, औरै कहिये बात।
कहत अपन्हुति सकल कवि, यासों बुधि अवदात॥८१॥

जहाँ मन की वस्तु छिपाकर कोई दूसरी बात प्रकट की जाय, वहाँ श्रेष्ठ बुद्धि वाले सभी कवि 'अपन्हुति' अलङ्कार कहते हैं।

उदाहरण (१)

कवित्त

सुन्दर ललित गति, वलित सुवास अति,
सरस सुवृत्त मति मेरे मन मानी है।
अमल अदूषित, सु भूषननि भूषित,
सुवरण, हरनमन, सुर सुखदानी है।
अंग अंग हीं को भाव, गूढ़ भाव के प्रभाव,
जानै को सुभाव रूप रुचि पहिचानी है।
'केशौदास' देवी कोऊ देखी तुम ? नाहीं राज,
प्रगट प्रवीन राय जू की यह बानी है ॥८७॥

वह सुन्दर है, ललित गति वलित (सुन्दर चाल वाली या सुन्दर रागिनी बोलने वाली) है, सुवास (सुन्दर वस्त्र वाली अथवा सुगंध युक्त मुखवाली) है, अति रसीली है, सुवृत्त मति (सुन्दर चरित्र तथा बुद्धि वाली अथवा सुन्दर छन्दों में बुद्धि लगाने वाली) है, और मेरे मन को अच्छी लगती है। वह निर्मल है, अदूषित (दोष रहित) है, सु भूषन भूषित (अच्छे गहना से सजी हुई अथवा अलङ्कार युक्त) है, सुवरण (अच्छे रंगवाली अथवा सुन्दर अक्षरों वाली) है, वह मन हरने वाली है, और सुर सुखदायिनी (देवताओं को सुख देने वाली अथवा स्वरों को सुख देने वाली है। उसके अंग अंग से हृदय का (गूढ़ अथवा दिव्य) भाव प्रकट होता है। उसके गूढ़ भाव के प्रभाव को (दूसरों के मन की बात को जानने के गुण को अथवा व्यंग्य भरे भेद को) कौन जान सकता है ? मैंने तो उसे रूप और रुचि से पहचानता हूँ। 'केशवदास' कहते हैं कि राजा इन्द्रजीत मुझसे पूछने लगे कि 'तुमने क्या कोई देवी देखी है, जिसका वर्णन कर रहे हो ! मैंने कहा नहीं राजन्। मैं तो प्रवीणराय की वाणी का प्रत्यक्ष वर्णन कर रहा हूँ।

उदाहरण (२)

कवित्त

कारे सटकारे केश, लोनी कछु होनी बैस,
सोने ते सलोनी दुति देखियत तन की।
आछे आछे लोचन, चितौनि औ चलनि आछी,
सुख मुख कविता विमो है मति मन की।
'केशौदास' केहूँ भाग पाइये जो बाग गहि
सांसनि उसासैं साध पूजै रति रन की।
मटी काहू गोप की बिलोकी प्यारे नन्द लाल ?
नाहीं लोल लोचनी ! बड़वा बडे पन की ॥८३॥

उसके काले सटकारे (लम्बे) केश (बाल अथवा गर्दन पर के बाल) हैं, वह लोनी (सुन्दर) है, और होनहार वयस की है अर्थात् युवती होने वाली है। उसके शरीर की चमक सोने जैसी दिखलाई पड़ती है। उसके अच्छी अच्छी आँखें है, चितवन और चाल भी अच्छी है। सुख-मुख सुन्दर मुख वाली अथवा मुख से सुख देने वाली) है। उसकी कविता (काव्य अथवा लगाम चबाने की ध्वनि) बुद्धि और मन को हर लेती है। (केशवदास श्रीकृष्ण की ओर से कहते हैं कि) यदि किसी तरह भाग्य वश उसे बाग में पकड़ पाऊं (अथवा किसी प्रकार भागकर लगाम पकड़ पाऊँ) तो एक सास मे मेरे रति-रण (रति रूपी रण अथवा रण के प्रति प्रेम) की साध (इच्छा) पूरी हो जाय। श्रीकृष्ण की इन बातों को सुनकर श्री राधिका जी ने पूछा कि 'हे प्यारे नन्द लाल ! क्या आपने किसी गोप की बेटी को देखा है, जिसका वर्णन कर रहे हो ?' उन्होंने उत्तर दिया—'नहीं ! चचल नेत्र वाली ! मैं तो किसी बहुमूल्य घोड़ी का वर्णन कर रहा हूँ।'

—:※:—

बारहवाँ प्रभाव

२१—उक्ति अलंकार

दोहा

बुद्धि विवेक अनेक विधि उपजत तर्क अपार।
तासों कविकुल युक्ति कहि, बरणत विविध प्रकार ॥ १ ॥

बुद्धि और विवेक आदि के बल पर जहाँ अनेक तर्क उपस्थित किये जा सकें, वहाँ कविगण उसे 'युक्ति' अलङ्कार कहकर अनेक प्रकार से वर्णन करते हैं।

'युक्ति' अलंकार के भेद

दोहा

वक्र अन्य व्यधिकरण कहि, और विशेष समान।
सहित सहोकति में कही, उक्ति सु पंच प्रमान ॥ २ ॥

वक्रोक्ति, अन्योक्ति, व्याधिकरणोक्ति, विशेषोक्ति और सहोक्ति ये पाँच भेद उक्ति अलङ्कार के कहे गये हैं।

१—वक्रोक्ति

दोहा

केशव सूधी बात में, बरणत टेढ़ो भाव।
वक्रोकति तासों कहत, सदा सबै कविराव ॥ ३ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ सीधी-सरल बात में टेढ़े अथवा गूढ़ भाव प्रकट किये जाते हैं, वहाँ सभी कविलोग 'वक्रोक्ति' कहा करते हैं।

उदाहरण (१)

सवैया

ज्यों ज्यों हुलाससों केशवदास विलास निवास हिये अवरेख्यो।
त्यों-त्यों बढ़्यो उर कंप कछू भ्रम, भीत भयो किधौं शीत विशेख्यो॥
मुद्रित होत सखी बरही मम नैन सरोजनि सांच कै लेख्यो।
तैं जु कह्यो मुख मोहन को अरविंद सोहै, सोतो चन्द सो देख्यो॥२॥

'केशवदास (किसी खडिता की ओर से उसी सखी से) कहते हैं कि मैंने जैसे-जैसे विलास-निवास (श्री कृष्ण) को हृदय से देखा, वैसे-वैसे मेरे हृदय में कप बढ़ गया। मैं नहीं जानती कि वह भ्रम वश ऐसा हुआ, या मुझे डर लग गया या विशेष शीत लग गया मेरी कमल जैसी आँखें बरबस मुँदी जा रही हैं। मैंने तो तेरा कहना सच मान लिया था कि मोहन (श्रीकृष्ण) का मुख कमल सा है परन्तु अब देखा तो उसे चन्द्र जैसा पाया (अन्यथा यह बात न होती तो मेरी आँखें उन्हें देखकर क्यों मुंद जाती, क्योंकि चन्द्रमा को देखकर ही कमल मुंदता है)।

(गूढ़ भाव यह छिपा हुआ है कि उनके मुख पर अन्य स्त्री के काजल आदि के चिन्ह हैं इसीसे मैंने उनकी ओर से मारे क्रोध के आँखें बन्द करलीं)

उदाहरण (२)

सवैया

अग अलीं धरिय अंगियाऊ न आजु तें नींद न आवन दीजै।
जानति हौ जिय नाते सखीन के, लाज हू को अब साथ न लीजै॥
थोरेहि द्यौस तें खेलन तेऊ लगीं उनसो जिन्हें देखि कै जीजै।
नाह के नेह के मामिले आपनी छांहहु को परतीति न कीजै॥ ५॥

हे सखी ! मन होता है कि आज से अगिया न पहनूँ और नींद को भी पास में न आने दूँ और सखी के नाते लज्जा को भी साथ में न लूँ (क्योंकि ये भी स्त्री वर्ग की हैं, कहीं पति से मेल न कर लें। (क्योंकि मैं देखती हूँ कि) थोड़े दिनों से वे सखियाँ भी उनसे प्रेम करने लगीं हैं, जिन्हें देख देखकर मैं जिया करती थी अर्थात् जिन्हें प्राणों के समान प्यारा समझती थी। इसीलिये अब यह सिद्धान्त स्थिर किया है कि) प्रेम के मामले में (सखी तो सखी) अपनी छाह तक का विश्वास नहीं करना चाहिए (क्योंकि सम्भव है वह भी प्राणों से प्यारी सखियों की भाँत धोखा दे जाय)

[इसमें गूढ़ व्यंग्य द्वारा अपनी सखी के प्रति क्रोध प्रकट करती हुई संकेत करती है कि तेरी अगिया फटी है तू रात भर सोई नहीं, तू निर्लज्ज है और तेरी छाया भी मलिन जान पड़ती है]

२—अन्योक्ति

दोहा

औरहि प्रति जु बखानिये, कछू और की बात।
अन्य उक्ति यह कहत हैं, बरणत कवि न अघात ॥ ६ ॥

जहाँ किसी दूसरे की बात किसी दूसरे के प्रति कहकर प्रकट की जाती है, वहाँ 'अन्योक्ति' कहते हैं, जिनका वर्णन करते-करते कविलोग कभी तृप्त नहीं होते।

उदाहरण

सवैया

दल देखौ नहीं जड जाडो बडो, अरु घाम घनो जल क्यों हरिहैं।
कहि केशव बावु बहै, दिन दाव, दहै घर धीरज क्यों धरिहैं॥
फलहैं फुलि हैं नहीं तोलौ तुहीं, कहि मो पहि भूख महा परिहै।
कछु छांह नहीं सुख शोभा नहीं रहि कीर करील कहा करिहैं। ७।

इस करील के वृक्ष में कभी पत्ते नहीं देखे। यह बड़ा जाड़ा, घाम और वर्षा से कैसे बचावेगा ? केशवदास कहते हैं कि जब दिन प्रतिदिन प्रचड वायु चलेगी और दावाग्नि जलेगी, तब तू कैसे धैर्य धारण करेगा ? जब तक यह फले फूलेगा नहीं तब तक तू ही बता, तुझसे भूख कैसे सही जायगी ? इसमें न तो कुछ छाया है, न सुख है और न शोभा है, अत. हे सुग्गे ! तू करील पर रहकर क्या करेगा ?

[इसमें तोते को लक्ष्य करके, ऐसे व्यक्ति के प्रति सकेत किया गया है, जो किसी ऐसे व्यक्ति की सेवा करता है, जो साधन सम्पत्ति हीन है, अत. उससे सुख पाना व्यर्थ है]

३—व्याधिकरणोक्ति

दोहा

औरहि में कीजै प्रकट, औरहि को गुण दोष ।
उक्ति यहै व्यधिकरन की, सुनत होत संतोषं ॥ ८ ॥

जहाँ किसी और का गुण-दोष किसी और में प्रकट किया जाता है वहाँ व्याधिकरण उक्ति होती है, जिसे सुनकर सतोष होता है

उदाहरण (१)

कवित्त

जानु, कटि, नाभि कूल, कंठ पीठ, भुजमूल,
उरज करज रेख रेखी बहु भाँति है।
दलित कपोल, रद ललित अधर रुचि,
रसना-रमित रस, रोम मे रिसाति है।

लेटि लेटि लौट पौटि लपटाति बीच बीच,
हां हां, हूँ हूं, नेति, नेति वाणी होति जाति है।
आलिगन अंग अंग पीडियत पद्मिनी के,
सौतिन के अंग अंग पीडनि पिराति है॥ ९॥

जघा, कमर, नाभि, कण्ठ पीठ, भुजामूल तथा उरोजों में नखों के चिन्ह अनेक भाँति किये गये हैं। कपोल दलित हैं, ओटों पर दाँतों की शोभा है। जीभ से तत्कालीन ध्वनियों का आनन्द लेनी है और बनावटी रोष भी प्रकट करती है। बार-बार लेट-लेटकर और उलट-पलटकर हां, हा, हूँ, हूँ तथा नहीं, नहीं की ध्वनि भी करती जाती है। उधर तो पद्मिनी नायिका के अग अग आलिगन से पीड़ित किये जा रहे हैं और इधर सौतों के अग मर्दन से पीड़ित होते हैं।

[इसमें दोष तो नायिका का है पर अंग सौतो के पीड़ित होते हैं अतः और का रोष और में प्रकट किया गया है]

उदाहरण (२)

कवित्त

राजभार, रजभार, लाजभार, भूमभार,
भवभार, जयभार, नीके ही अटतु हैं।
प्रेमभार, पनभार, केशव सम्पत्तिभार,
पतिभार युत अति युद्धनि जुटतु हैं।
दानभार, मानभार, सकल सयान भार,
भोगभार, भागभार, घटना घटतु हैं।
ऐते भार फूल सम राजै राजा रामसिर,
तेहि दुःख शत्रुन के शीरष फटतु हैं॥१०॥

राज्य का भार, क्षत्रियपन का भार, भूमि का भार, संसार का भार विजय का भार अच्छी तरह उठाये रहते हैं। प्रेम का भार प्रतिज्ञा का भार, केशवदास कहते हैं कि सपत्ति का भार, मर्यादा का भार उठाते हुए युद्धों में भी भिड़ जाते हैं। दान का भार, मान का भार, सभी गुणों का भार, भोग का भार और लोगों के भाग्यों का भार सहन करते हुए भी काम करते रहते हैं। राजाराम तो अपने सिर इतने भारों को फूल के समान सरलता पूर्वक वहन करते हैं और शत्रुओं के शिर फरत हैं।

उदाहरण—३

सवैया

पूत भयो दशरत्थको केशव, देवन के घर बाजी बधाई।
फूलिकै फूलनको बरषै, तरु फूलि फलै सबही सुखदाई॥
चीर वही सरिता सब भूतल, धीर समार सुगध सुहाई।
सर्वसु लोग लुटावउ देखि कै, दारिद देह दरारसी खाई॥११।

केशवदास' कहते हैं कि राजा दशरथ के पुत्र हुआ तो देवताओं के घर बधाई बजने लगी। पेड़ फूल, फूलकर फूल बरसाने लगे और सभी को आनन्द देने लगे सभी नदियाँ दूध की धारा बहाने लगी और मन्द वायु सुगंधित हो गई इस तरह लोगों को सर्वस्व लुटाते देख, दरिद्रता के शरीर में दरारें सी हो गई।

[इसमें दूसरे के गुणों से दूसरे के दोषों का वर्णन है, अतः व्याधिकरणोक्ति है]

उदाहरण—४

दोहा

होय हँसी औरनि सुनै, यह अचरज की बात।
कान्ह चढावत चदनहिं, मेरो हियो सिरात॥१२॥

यस आश्चर्य की बात सुनकर दूसरों को हँसी आवेगी कि श्रीकृष्ण
ा चन्दन लगाते हैं और उससे मेरा हृदय शीतल होता है।

उदाहरण—५

सोरठा

दिये सोनारन दाम, रावर को सोनो हरौ।
दुख पायो पतिराम, मोहित केशव मिश्रसों ॥१३॥

रनिवास का सोना तो पतिराम सुनार ने चुराया और दाम दूसरे सुनारों को दण्ड स्वरूप देने पड़े। राजा का अधिक प्रेम तो केशव मिश्र पर है, पर दुख पतिराम सुनार को होता है।

[उक्त दोनों दोहों तथा सोरठे में और के गुणदोष से और के गुणदोष का वर्णन है अतः व्याधिकरणोक्ति अलङ्कार है]

४—विशेषोक्ति

दोहा

विद्यमान कारण सकल, कारज होइ न सिद्ध।
सोई उक्ति विशेषमय, केशव परम प्रसिद्ध ॥१४॥

'केशवदास' कहते हैं जहाँ सभी कारणों के रहते हुए भी, कार्य की सिद्धि न हो, वही परम प्रसिद्ध विशेषोक्ति है।

उदाहरण (१)

सवैया

कर्ण से दुष्ट ने पुष्ट हुते भट, पाप और कष्ट न शासन टारें।
सोदरसैन कुयोधन से सब, साथ समर्थ भुजा उसकारे॥
हाथी हजारन के बल केशव, खैंचि थके पट को डरडारे।
द्रौपदी को दुःशासन पै तिल, अंग तऊ उघरयो न उघारे॥१३॥

कर्ण जैसे दुष्ट से भी अधिक दुष्ट बहुत से योद्धा थ, पाप और कष्ट भी जिनके शासन को नहीं टालते थे अर्थात् उनकी अवज्ञा नहीं करते थे और आज्ञानुसार चलते थे दुर्योधन जैसे सब भाइयों का दल भी, बाहें उसकाये हुए साथ था केशवदास कहते हैं कि हजारों हाथियों के बल से, निडरता के साथ, वस्त्र को खींचते खींचते थक गया, परन्तु दु:शासन से, द्रौपदी का तिल-भर अग भी उघारे नहीं उघरा।

उदाहरण—२

कवित्त

सिखै हारी सखी, डरपाय हारी कादंबिनी
दामिनि दिखाय हारी, दिसि अधिरात की।
झुकि झुकिहारी रति, मारि मारि हारयो मार,
हारी झकझोरित विविध गति बात की।
दई निरदई दई वाहि ऐसी काहे मति,
आरति जु ऐन रैन दाह ऐसे गात की।
कैसेहू न मानै, हौं मनाइहारी 'केशौदास'
बोलिहारी को किला, बोलायहारी चातकी ॥१६॥

सखी सिखा सिखाकर हार गई, मेघमाला डरा-डराकर हार गई और बिजली आधी रात के समय दिशाओं को दिखला दिखलाकर हार गई। रति बेचारी झुक झुककर (निहोरे करते, करते) हार गई कामदेव मार-मारकर (आक्रमण कर, करके) हार गया और वायु की गति की अनेक विधियाँ (शीतल, मन्द, और सुगध) झकझोर, झकझोर कर हार गई। हे निर्दयी दैव! ऐन रात में, अपने ऐसे शरीर को कष्ट देने की बुद्धि क्यों दे दी? केशवदास (सखी की ओर से) कहते

हैं कि वह किसी प्रकार भी मनाये नहीं मानती, मैं मना, मनाकर हार गई। कोयल वेचारी कूक कूककर हार गई और चातकी बुलाने की चेष्टा कर, करके हार गई (पर उस पर असर नहीं हुआ)

[यहाँ सभी कारणों के रहते हुए भी कार्य सिद्ध नहीं होता अतः विशेषोक्ति हुई]

उदाहरण—३

सवैया

कर्ण कृपा द्विज द्रोण तहाँ, तिनको पन काहू पै जाय न टारयो।
भीम गदाहि धर धनु अर्जुन, युद्ध जुरे जिनसों यम हारयो॥
केशवदास पितामह भीषम, मीच करी वश लै दिशि चारयो।
देखतही तिनके दुरयोधन द्रौपदी, सामुहे हाथ पसारयो॥१७॥

कर्ण, कृपाचार्य और द्रोणाचार्य, जैसे वीर जिनका व्रत किसी के हटाये नहीं हटता था, विद्यमान थे। गदाधारी भीम तथा धनुधारी अर्जुन सरीखे भी थे जिनसे युद्ध करने पर यम भी हार जाते थे। 'केशवदास कहते हैं कि भीष्म पितामह जैसे वीर, जिन्होंने चारों ओर मृत्यु तक को वश में कर लिया था विद्यमान थे परन्तु इन सबों के देखते-देखते दुर्योधन ने द्रौपदी के आगे हाथ फैला ही दिया।

[अनेक प्रबल कारण द्रौपदी के आगे हाथ फैलाने के कार्य को न रोक सके अत. विशेषोक्ति हुई]

उदाहरण—४

सवैया

वेई हैं बान विधान निधान, अनेक चमू जिन जोर हईजू।
वेई हैं बाहु वहै धनु धीरज, दीह दिशा जिन युद्ध जईजू॥
वेई हैं अर्जुन आन नहीं जगमें, यशकी जिनि वेलि वईजू।
देखतहीं तिनके तव कोलनि, नीकहि नारि छिनाय लईजू॥१८॥

अर्जुन के पास वे ही अनेक विधानों से चलनेवाले बाण थे, जिनसे उन्होंने कई सेनाओं को बल पूर्वक मारा था। वे ही भुजाएँ थी, वही धनुष था और वही धैर्य था जिससे युद्ध में उन्होंने चारों दिशाएँ जीत ली थी। यह वही अर्जुन थे, कोई दूसरे नहीं, जिन्होंने ससार म यश की वेल बोदी थी। परन्तु उनके देखते-देखते (श्री कृष्ण के परिवार की) स्त्रियों को (हस्तिनापुर जाते समय) भीलों ने छीन ही लिया।

[यहाँ भी प्रबल कारणों के रहते हुए भी कार्य सिद्ध नहीं हुआ, अतः विशेषोक्ति है]

उदाहरण—५

दोहा

तुला, तोल, कसवान वनि, कायथ लखत अपार।
राख भरत पतिराम पै, सोनो हरति सुनार ॥१९॥

कोई तराजू लेकर, कोई बाट लेकर, कोई कसौटा लेकर अनेक कायस्थ देख भाल करते रहते हैं परन्तु पतिराम सुनार की स्त्री राख भरते समय, सोना चुराही ले जाती है।

[यहाँ भी प्रबल कारणों के रहते हुए भी कार्य सिद्ध नहीं होता अतः विशेषोक्ति है]

५—सहोक्ति

दोहा

हानि वृद्धि शुभ अशुभ कछु, करिये गूढ़ प्रकास।
होय सहोक्तिसु साथही, वर्णत केशवदास ॥२०॥

केशवदास कहते हैं कि जहाँ हानि, वृद्धि, शुभ, अशुभ गूढ या प्रकट कुछ भी वर्णन करते समय साथ ही एक और घटना का वर्णन रहे, वहाँ 'सहोक्ति' होती है।

उदाहरण

कवित्त

शिशुता समेत भई, मन्दगति चरनिन,
गुणन सो वलित, ललित गति पाई है।
भौहन की होडा होड़ी ह्वै गई कुटिल अति,
तेरी बानी मेरी रानी सुनत सुहाई है।
'केशौदास' मुखहास हिसखै ही कटितर,
छिन छिन सूछम छबीलो छवि छाई है।
बार बुद्धि बारन के साथ ही बढ़ी है बीर,
कुचनि के साथ ही सकुच उर आई है।।२१।।

शिशुता के सान ही साथ तेरे चरणों की गति भी मन्द पड़ गई है और गुणों के साथ ही तुझ में सुन्दर चाल भी आ गई है हे मेरी रानी (सखी)। भौहों की स्पर्द्धा के साथ ही तेरी वाणी भी कुटिल हो गई है। केशवदास (उस सखी की ओर से) कहते हैं कि हास्य की होड़ करते करते तेरी कमर भी क्षण क्षण पतली होती जा रही है और हे सखी ! बाल-बुद्धि (भोलापन) के साथ ही साथ तेरे बाल भी बढ़े हैं तथा कुचों के साथ ही साथ तेरे हृदय में सकुच भी आ गई है।

२२—२३ व्याज स्तुति-निन्दा

दोहा

स्तुति निंदा मिस होय जहँ स्तुतिमिस निंदा जानि।
व्याजस्तुति निन्दा यहै, केशवदास बखानि॥

केशवदास कहते हैं कि जहाँ निन्दा के बहाने स्तुति और स्तुति बहाने निन्दा की जाती है, वहाँ 'व्याज स्तुति' और 'व्याज निन्दा' अलङ्कार कहा जाता है।

उदाहरण

कवित्त

शीतलहू हीतल तुम्हारे न बसति वह,
तुम न तजत तिल ताको उर ताप गेहु।
आपनो ज्यौं हीरा सा पराये हाथ ब्रजनाथ,
दैकै तो अकाथ साथ मैन ऐसो मन लेहु।
एते पर केशौदास' तुम्हें परवाह नाहिं,
वाहै जक लागी भागी भूख सुख भूल्यो गेहु।
मांडो मुख छाडों छिन छल न छबीले लाल
ऐसी तो गँवारिन सों तुमही निबाहौ नेहु ॥२३॥

(कोई दूती श्रीकृष्ण से आकर कहती है कि) वह तो तुम्हारे शीतल हृदय म भी नही रहती और तुम उसके तप्त हृदय-निवास को एक घड़ी भर को नही छोड़त अर्थात् तुम्हारे हृदय में उसके प्रति प्रेम की गर्मी नही है और तुम उसके विरह से जलते हुए हृदय में सदा रहते हो। हे व्रजनाथ। तुम अपना हीरा सा मन पराये हाथ में देकर उसका मोम जैसा मन व्यर्थ ही लेते हो अर्थात् तुम हीरा के समान कठोर मन रखते हो और वह मोम जैसा कोमल मन रखती है। केशवदास (दूती की ओर से) कहते हैं कि इतने पर भी तुम्हें अपने हीरा जैसे मन की परवाह नही है और उसे अपने मोम जैसे मन की ऐसी धुन लग गई है कि तुम्हारे पास उसके मन के आ जाने से उसकी भूख भाग गई है. घर और सुख भी भूल गया है। वह

मुख से तो प्रशसा करती है, पर क्षण भर के लिए भी छल नही छोड़ती। हे छबीले लाल ! ऐसी गँवारिन से तुम्ही प्रेम निबाहते हो। दूसरा अर्थ यह भी निकल सकता है कि वह तो ऐसी गँवारिन नही है (ऐसी गँवारिन सो) तुम्ही प्रेम को नही निबाहते (तुम ही न चाहो नेहु)।

[इसमें ऊपर से श्रीकृष्ण की प्रशसा जँचती है पर है वास्तव में निन्दा। उधर नायिका की निन्दा प्रतीत होती है पर है वास्तव में स्तुति]

उदाहरण

व्याजस्तुति

कवित्त

केसर, कपूर, कुंद, केतकी. गुलाब लाल,
सूंघत न चंपक चमेली चारु तोरी हैं।
जिनकी तू पासवान बूझियत, आस पास,
ठाढ़ीं 'केशौदास' किन्हीं भय भ्रम भोरी हैं।
तेरी कौनो कृति किधौं सहज सुबास ही ते,
बसि गई हरि चित कहूँ चोरा चोरी हैं।
सुनहि ! अचेत चित आई यह हेत, नाहीं.
तोसो ग्वारि गोकुल में गोबरहारी थोरी हैं।

जब से तेरी देह की सुगन्ध पाली है, तब से लाल (श्रीकृष्ण) केसर; कपूर, कुन्द, केतकी और गुलाब को सूंघते तक नही और सुन्दर चमेलियों को तो उन्होंने तोड़कर फेंक दिया है। केशवदास (सखी की ओर से) कहते हैं कि तू जिनकी दासी जैसी जान पड़ती

है, ऐसी बहुत सी सुन्दरियाँ उनके आस पास भय और भ्रम में विमूढ होकर खड़ी हैं। यह तेरा ही कोई जादू है या स्वाभाविक सुवास ही के कारण तू ही श्री कृष्ण के चित्त में चुपचाप बस गई है? सुन! वह अचेत पड़े हैं इसीलिए आई हूँ नही तो क्या तरी जैसी गोबर बीनने वाली ग्वालिनें गोकुल गाँव में कम है?

उदाहरण

कवित्त

जानिये न जाकी माया मोहित गिलेहिं माझ,
एक हाथ पुन्य, एक पाप को बिचारिये।
परदार प्रिय मत्त मातग सुताभिगामी,
निशिचर को सो मुख देखो देह कारिये।
आज लौं अजादि राखे बरद विनाद भावै,
एते पै अनाथ अति केशव निहारिये।
राजन के राजा छांडि की जतु तिलक ताहि
भीषम सों कहा कहौं पुरुष न नारिये।७५॥

(जब भीष्म के कहने से श्रीकृष्ण को तिलक करने का विचार पक्का कर लिया गया तब शिशुपाल कहता है कि) जिसकी माया कुछ समझ में नही आती और जिनकी माया बीच ही में लोगों को मोह लेती है, तथा जिसके हाथ में पुण्य और एक मे पाप रहता है। जो परदार प्रिय है (पराई स्त्रियों) का प्रेमी है मतवाले मातग नामक चाडाल के पुत्र के पास जाता आता रहता है। जिसका निश्चर जैसा काला मुख है और देखो, निश्चर ही जैसा काल शरीर है। जो आज तक बकरियो को रखाता रहा और जिसे बैलों के साथ खेलना ही अच्छा लगता रहा। केशवदास (शिशुपाल की ओर से) कहते

हैं कि इतने पर भी अति अनाथ ही दिखलाई पड़ा, क्योंकि यह तनिक भी भूमि का नाथ नही रहा। इतने पर राजाओं के राजा को छोड़कर इसका तिलक कराते हैं। मैं उन भीष्म से भला क्या कहूँ जो पुरुष हैं न स्त्री हैं।

[यह श्रीकृष्ण की निन्दा है, इसी में उनकी स्तुति का भाव भी निकलता है, वह इस प्रकार है —]

जिनकी माया समझ में नही आती और चक्कर में डाल देती है। जो एक हाथ से पुण्य और एक हाथ में पाप कर्मों को विचारते हैं। जो लक्ष्मी के प्यारे हैं, गजेन्द्र को बचाने वाले हैं। जिनका चन्द्रमा सा मुँह है और जो सब जीवों की देह का बनानेवाले हैं। आज तक जो ब्रह्मादि देवताओं की रक्षा करते आये और जो वर देने वाले हैं तथा जिन्हें विनोद ही अच्छा लगता है। इतने पर भी नाथ रहित हैं अर्थात् उनका कोई स्वामी नही है और क्षीर समुद्र में सोने वाले हैं। अतः राजाओं को छोड़कर जो इन देव पुरुष को राज तिलक दिलवाने की बात भीष्म कहते हैं उनकी प्रशंसा मैं क्या करूँ क्योंकि ये कृष्ण न तो पुरुष हैं और न स्त्री (क्योंकि ब्रह्म तो नपुंसक माना गया है)

२४—अमित अलङ्कार

दोहा

जहां साधनैं भोगई, साधक की शुभ सिद्धि।
अमित नाम तासों कहत, जाकी अमित प्रसिद्धि ॥२६॥

जहाँ पर साधक (कार्य को करने वाले) की सफलता का श्रेय साधन (जिसके द्वारा कार्य हो) भोगता है उसको अमित प्रसिद्धि वाले अर्थात् विख्यात पुरुष अमित अलङ्कार कहते हैं।

उदाहरण (१)

सवैया

आनन सीकर सोक हियेकत ? तोहित ते अतिआतुर आई।
फीको भयो मुखही मुखराग क्यों ? तेरे पिया बहुबार बकाई॥
प्रीतमको पट क्यों पलटयो ? अलि, केवल तेरी प्रतीति को ल्याई।
केशव नीकेहि नायक सों रमि नायका बातनहीं बहराई॥ २७॥

मुँह पर पसीने की बूँदे और हृदय में लम्बी उसासें क्यों हैं ? इस लिए कि तेरे लिए दौड़ती हुई आई हूँ। तेरे मुख का राग सरलता से फीका कैसे पड़ गया ? क्योंकि तेरे पति ने मुझे अनेक बार बकवाया है। मेरे प्रियतम का वस्त्र तुझसे कैसे बदल गया ? हे सखी इसे तो मैं तेरे विश्वास के लिए लाई हूँ। 'केशवदास' कहते हैं इस तरह से उसके पति के साथ स्वयं रमण करके, बेचारी नायिका को बातों ही बातों में बहला दिया।

[इसमें जो सिद्धि नायिका को मिलनी चाहिए थी, वह उसकी सखी को मिल गई अतः अमित अलंकार है]

उदाहरण (२)

सवैया

को गनै कर्ण जगन्मणिसे नृप, साथ मत्रै दल राजनही को।
जानै को खान किते सुलतानसो, आयो शहाबुदी शाह दिलीको॥
ओडछे आनि जुरयो कहि केशव, शाहि मधूकरसों शॅक जीको।
दौरिकै दूलह राम सुजीति करयो अपने शिर कीरति टीको॥२८॥

जगन्मणि कर्ण से राजाओं को कौन गिनै ? उसके साथ तो राजाओं का पूरा दल ही था। ज्ञात नहीं कितने खान और सुलतानों को साथ लेकर, दिल्ली का शहाबुद्दीन लड़ने आया था। 'केशवदास' कहते हैं

कि जिससे राजा मधुकर शाह को अपने प्राणों की शका थी वहा शहाबुदीन ओड़छे पर आकर डट गया। यह सुनते ही दूलहराम ने दौड़कर उसे जीत कर अपने सिर कीर्त्ति का टीका ले लिया।

[यहाँ साधक मधुकरशाह को कीत्ति न मिलकर साधन दूलहराम को कीर्त्ति प्राप्त हुई अतः अमित अलकार हुआ]

२५ पर्यायोक्ति

दोहा

कौनहुँ एक अदृष्टत, अनहीं किये जु होय।
सिद्ध आपने इष्टकी, पर्यायोकति सोय॥

जहाँ अपने इष्ट की सिद्धि, किसी अदृष्ट कारण से, बिना प्रयत्न किए, हो जाय, वहाँ. पर्यायोक्ति होता है।

उदाहरण

कवित्त

खेलत ही सतरंज अलिन में, आपहि ते,
तहाँ हरि आये किधौं काहू के बोलाये री।
लागे मिलि खेलन मिले कै मन हरें हरें,
देन लागे दाउं आपु आपु मन भाये री।
उठि उठि गईं मिस मिसहीं जितहीं तित,
'केशौदास' कि सौं दोऊ रहे छवि छायेरी।
चौंकि-चौंकि-तेहि छन राधा जू के मेरी आली,
जलज से लोचन जलद से ह्वै आयेरी।

राधा जी सखियों में सतरज खेल रही थीं। इतने में श्रीकृष्ण या तो स्वत या किसी के बुलाये हुए वहां आपहूँचे। वहां फिर मिलकर

खेलने लगे और धीरे धीरे मन मिलाकर अपना दाव भी देने लगे। इसी बीच में किसी न किसी बहाने से सब सखियाँ उठगई और ईश्वर की सौगन्ध दोनों छवीले (श्रीकृष्ण और श्रीराधा) ही रह गये। हे मेरी सखी! उस समय राधा जी की कमलवत् आँखें चौंक चौंककर बादल सी हो आईं। (भाव यह है कि उनके आनन्दाश्रु आने लगे)

[यहाँ बिना यत्न किये ही अचानक कार्य-सिद्धि हुई है, अतः पर्यायोक्ति अलकार है)

२६ युक्ति अलंकार

दोहा

जैसो जाको बुद्धि बल, कहिये तैसो रूप।
तासों कविकुल युक्ति यह, बरणत बहुत सुरूप॥

जिसका जैसा बुद्धि-बल हो, उसको वैसाही वर्णन करने को कवि लोग 'युक्त' कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

मदन वदन लेत लाज को सदन देखि
यदपि जगत जीव मोहिवे को है छमी।
कोटि कोटि चन्द्रमा निवारि! वारि वारि डारौं,
जाके काज ब्रजराज आज लौं हैं संयमी।
'केशौदास' सविलास तेरे मुख की सुवास,
सुनियत आरस ही सारसनि लैरमी।
मित्रदेव, छिति, दुर्ग, दंड, दल कोप, कुल
वल जाके ताके कहौ कौन घात की कमी॥३०॥

हे नारी ! यद्यपि कामदेव सारे संसार को जीतने में समर्थ है, तथापि तेरे लज्जा से भरे मुख की वह प्रशंसा करता है। मैं तेरे मुख पर करोड़ों चन्द्रमा को निछावर कर डालूं जिस मुख के लिए श्रीकृष्ण आजतक संयमी हैं अर्थात् नियम किए हुए हैं कि दूसरा मुख न देखूंगा। केशवदास (सखी की ओर से) कहते हैं कि ऐसा सुना जाता है कि तेरे आलस के कारण तेरे मुख की सुगन्ध को कमल ले भागे हैं। उन कमलों के पास मित्र (सूर्य) जैसे हित, पृथ्वी, दुर्ग, दंड, दल, कोष और कुल तथा बल सभी कुछ तो है, न जाने उन्हें किस बात की कमी थी (जो मुख बास चुराई)।

—:❀:—
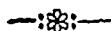
तेरहवाँ प्रभाव

२७—समाहित अलंकार

दोहा

हेतु न क्यों हूँ होत जहँ, दैवयोग तें काज।
ताहि समाहित नाम कहि, बरणत कविशिरताज ॥ १ ॥

जो कार्य किसी प्रकार भी न हो रहा हो, वह दैव योग से अचानक हो जाय, तब कवि शिरोमणि उसे 'समाहित' अलङ्कार कहकर वर्णन करते हैं।

उदाहरण (१)

कवित्त

छवि सों छबीली वृषभानु की कुँवरि आजु,
रही हुती रूप मद मान मद छकि कै।
मारहू ते सुकुमार नन्द के कुमार ताहि,
आये री मनावन सयान सब तकि कै।
हँसि, हँसि, सौहैं करि-करि पाँय परि-परि
'केशौराय' की सौं जब रहे जिय जकि कै।
ताही समै उटे घनघोर घोरि, दामिनी सी,
लागी लौटि श्याम घन उर सौं लपकि कै ॥२॥

हे सखी! आज छवि (शोभा) से छबीली वृषभानु की बेटी राधा अपने रूप के मद में मान किये बैठी थी इतने में कामदेव से भी सुकुमार नन्द के कुमार (श्रीकृष्ण), चतुराई से, अवसर

देखकर, उसे मनाने आये। हँस हँसकर, शपथ खा-खाकर और पैरों पड़ पड़कर, ईश्वर की सौगन्ध, जब वह थक गये, तब उसी समय घनघोर बादल उठे और वह बिजली की भाँति लपक घनश्याम से लपट गई।

[इसमें दैव योग से अचानक कार्य हो गया, अतः समाहित अलङ्कार है]

उदाहरण (२)

सवैया

सातहु दीपनि के अवनीपति हारि रहे जियमें जब जाने।
बीस बिसे व्रत भंग भयो, सु कह्यो अब केशव को धनु ताने।
शोक कि आगि लगी परिपूरण, आइगये घनश्याम बिहाने।
जानकी के जनकादिक केशव फूलि उठे तरु पुण्य पुराने॥ ३॥

'केशवदास कहते हैं कि जब सातों द्वीपों के राजा लोग हार गये, तब उन्होंने (राजा जनक ने), अपने मनमें कहा कि 'अब मेरी प्रतिज्ञा पूरी तरह से भग होना चाहती है क्योंकि अब धनुष को कौन खींचेगा।' उनके मनमें शोकाग्नि पूरी तरह से लगी हुई थी कि उसी समय घनश्याम (यहाँ श्रीराम) आ पहुँचे और उनके आते ही जानकी जी तथा जनकादि के पुराने पुण्य तरु फूल उठे अर्थात् उनकी इच्छा पूरी हुई।

२९—सुसिद्धालङ्कार

दोहा

साधि-साधि औरै मरै, औरै भोगै सिद्धि।
तासो कहत सुसिद्धि सब, जे हैं बुद्धि समृद्धि॥ ४॥

जहाँ कार्य कर करके तो कोई और मरे और उसकी सफलता कोई दूसरा भोगे उसे समृद्धि-बुद्धि (बुद्धिमान्) सुसिद्धालङ्कार कहते हैं।

उदाहरण (१)

सवैया

मूलनिसों फल फूल सबै, दल जैसी कछू रसरीति चलीजू।
भाजन, भोजन, भूषण भामिनि भौन भरी भव भाति भलीजू॥
डासन, श्रासन, वास निवास, सुवाहन यान विमान थलीजू।
केशव कैकै महाजन लोग, मरैं भुव, भोगवै न भोग बलीजू॥ ५॥

मूल से लेकर फलफूल तक जैसी कुछ आनन्द के साधन प्रचलित है, वे सभी तथा पात्र, भोजन, गहने, तथा भलीभाँति भावों से भरी हुई गृह-पत्नी शैय्या, आसन, सुगन्ध, घर, सुन्दर विमानादि सवारिया आदि को (केशवदास कहते हैं कि) एकत्र कर करके महाजन मरते हैं और उनका उपभोग कोई बलवान करता है।

उदाहरण (२)

छप्पय

सरघा सॅचि सॅचि मरै, शहर मधु पानकरत मुख।
खनि खनि मरत गँवार, कूप जल पथिक पियत सुख॥
बागवान वहिमरत, फूल बाधत उदार नर।
पचि पचि मरहिं सुआर, भूप भोजननि करत वर॥
भूषण सुनार गढ़ि गढ़ि मरहि, भामिनी भूषित करत तन।
कहि केशव लेखक लिखिमरहि पंडित पढ़हि पुराणगन॥ ६॥

मधु मक्खी तो शहद इकट्ठा कर करके मरती है और शहर के लोग सुख पूर्वक उसका मधु पीते हैं। गँवार तो कुआँ खोद खोदकर मरते हैं और पथिक आनन्दित होकर उनका पानी पीते हैं। बागवान फल फूल लगाकर मरता है और फूलों को उदार पुरुष बाँधते हैं। रसोइया पकवान बना बनाकर मरता है और राजा उन्हें खाते हैं। सुनार तो गहने बना बनाकर मरता है और स्त्रियाँ उनमे अपना शरीर

नजाती हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि लेखक तो पुराणों को लिख लिखकर मरता है और पंडित उसे पढ़ते हैं।

२९—प्रसिद्धालङ्कार

दोहा

साधन साधै एक भुव, भुगवै सिद्धि अनेक।
तासों कहत प्रसिद्ध सब, केशव सहित विवेक ॥ ७ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ कार्य को साधने वाला तो एक हो और उसकी सिद्धि को भोगने वाले अनेक हों, वहाँ विवेकी लोग, उसे प्रसिद्ध अलङ्कार कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

माता के मोह पिता परितोषन, केवल राम भरे रिसभारे।
औगुण एकहि अर्जुन को, छिति मंडल के सब छत्रिय मारे॥
देवपुरी कहँ औधपुरी जन, केशवदास बड़े अरु बारे।
शूकर श्वान समेत सबै हरिचन्द के सत्य सदेह सिधारे ॥ ८ ॥

[इसका अर्थ प्रभाव के स० में लिखा जा चुका है]

३०—विपरीतालंकार

दोहा

कारज साधक को जहाँ, साधन बाधक होय।
तासों सब विपरीत यों कहत सयाने लोय ॥ ९ ॥

जहाँ साधक का बाधक साधन हो जाता है, वहाँ सभी चतुर लोग उसे विपरीतालङ्कार कहते हैं।

उदाहरण (१)

कवित्त

नाह ते नाहर, तिय जेवरी ते सांप करि.
घालै, घर, बीथिका बसावती बननि की।
शिवहि शिवाहू भेद पारति जिनकी माया
माय हू न जानै छाया छलनि तिननि का।
राधा जू सों कहा कहौं, ऐसिन की मानैं सीख
सांपिनि सहित विष रहित फननि की।
क्यों न परै बीच, बीच आगियौ न सहि सकैं,
बीच परी अगना अनेक आगननि की।१०॥

जो दूतियाँ पति का सिंह जैसा भयानक और रस्सी का साँप बनाकर घरों को नष्ट करके, जङ्गलों में घर बसाती हैं। जिनकी माया श्रीशङ्कर तथा श्री पार्वती मे भी भेद करा दे सकती हैं और स्वय माया जिनके छल-कपटों की छाया तक नहीं समझ पातीं। मैं राधा जी से क्या कहूँ वह ऐसी स्त्रियों की शिक्षा को मानती हैं जो बिना फन की विषैली साँपिने हैं। फिर भला बीच क्यो न पड़े जो कृष्ण आगया तक का मध्यस्थ होना नहीं सह सकते थे, उनके बीच ये अनेक आगना अर्थात् घरों म जाने वाली स्त्रिया पड़ी हैं

[यहाँ दूती द्वारा मिलन होना चाहिये था, पर वही अनबन का कारण बन गई, अतः 'विपरीत' अलङ्कार है]

उदाहरण (२)

कवित्त

साथ न सहाय कऊ, हाथ न हथ्यार, रघु,
नाथ जू के यज्ञ को तुरग गहि राख्यो ई।

काछन कछोटा सिर छोटे-छोटे काकपच्छ,
पांच ही बरस के सु युद्ध अभिलाख्यो ई।
नील नल, अंगद सहित जामवंत हनु—
मंत से अनन्त जिन नीरनिधि नाख्यो ई।
'केशौदास' दीप-दीप भूपनि स्यों रघुकुल,
कुश लव जीति के विजय रस चाख्यो ई॥११।

जिनके साथ में कोई सहायक न था, और न जिनके हाथों में कोई हथियार था उन्होंने श्रीरामचन्द्र के यज्ञ के घोड़े को पकड़ कर रख ही लिया, जो अभी लगोटी ही पहते थे, जिनके घुंघराले बाल (या जुलफी) अभी छोटे छोटे थे, और जो अभी पाच ही वर्ष के थे, उन्होंने युद्ध करने की इच्छा कर ही ली। नील, नल, अंगद, जामवत तथा हनुमान् जैसे वीर जिन्होंने समुद्र को लाघ ही डाला था, उनके साथ ही (केशव दास कहते हैं) अन्य द्वीप द्वीपान्तरों के राजाओं के सहित श्रीरामचन्द्र जी को जीत कर, कुश और लव ने विजय रस चख ही लिया।

[कुश लव श्रीरामचन्द्र जी के सहायक न होकर बाधक हुए, अतः विपरीतालकार है]

अथ रूपक

दोहा

उपमाही के रूपसों, मिल्यो बरणिये रूप।
ताही सों सब कहत हैं, केशव रूपक रूप॥ १॥

केशवदास कहते हैं कि जहाँ पर उपमा से ही मिला हुआ उपमान का रूप वर्णित किया जाता है, वहाँ रूपक अलकार कहते हैं।

उदाहरण

दोहा

वदन चन्द्र, लोचन कमल, बाँह पाश, ज्यों जान।
कर पल्लव, अरु भ्रूलता, बिम्बाधरणि बखान ॥ १३ ॥

जैसे मुख, और चन्द्रमा को मिलाकर मुखचन्द्र, लोचन और कमल को मिलाकर लोचन-कमल, बाँह और पाश को मिलाकर बाह-पाश, कर और पल्लव को मिलाकर कर-पल्लव भ्रू और लता को मिलाकर भ्रूलता और बिम्बतथा अधर को मिलाकर बिंबाधर शब्द बनते हैं। इसी तरह औरों का भी वर्णन करना चाहिए।

रूपक के भेद

दोहा

ताके भेद अनेक सब, तीनै कहो सुभाव।
अद्भुत एक विरुद्ध अरु, रूपकरूपक नाव ॥ १४ ॥

इस रूपक के कई भेद हैं पर मैं तीन भेदों का ही वर्णन करता हूँ। उनमें से एक 'अद्भुत' दूसरा 'विरुद्ध' और तीसरा 'रूपक रूपक' नाम का है।

१—अद्भुत रूपक

दोहा

सदा एकरस वर्णिय, और न जाहि समान।
अद्भुत रूपक कहत हैं, तासों बुद्धिनिधान ॥ १५ ॥

जहा रूपक का वर्णन करते समय कोई ऐसी विचित्रता का उल्लेख भी कर दिया जाता है कि जिसके समान दूसरी न हो, उसे बुद्धि निधान (बुद्धिमान) अद्भुत रूपक कहते हैं।

उदाहरण—३

कवित्त

शोभा सरवर मांहि फूल्यो ई रहत सखि,
राजैं राजहंसिनि समीप सुख दानिये।
"केशौदास" आसपास सौरभ के लोभ घनी
घ्रानिनि की देवि भौंरि भ्रमत बखानिये।
होति जाति दिन दूनी, निशि में सहस गुनी,
सूरज सुहृद चारु चन्द्र मन मानिय।
रति को सदन छुई सकै न मदन ऐसो,
कमल-वदन जग जानकी को जानिये॥ १६॥

श्री जानकीजी का मुख-कमल संसार में ऐसा है कि वह शोभा के सरोवर में सदा फूला ही रहता है। उसके पास सखियां रूपी राजहंसिनी आनन्द प्रदान करती रहती हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि उसके आस-पास सुगन्ध के लोभ से, भ्रमरी-रूपी घ्राण देवियां मंडराया करती हैं। उसकी दिन में दूनी और रात में सहस्र गुणी कांति बढ़जाती है क्योंकि (दिन में सूर्य और (रात में श्रीराम) चंद्र उसके सुहृद होते हैं। इसको मन में सच्चा समझिए। वह रति का सदन है, परन्तु मदन (कामदेव) उसे छू भी नहीं सकता।

२—विरुद्धरूपक

दोहा

जहँ कहिये अनमिल कछू, सुमिल सकल विधि अर्थ।
सो विरुद्ध रूपक कहत, केशव बुद्धि समर्थ॥१७॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ पर अर्थ के सब प्रकार के सुमिल होने पर भी कुछ अनमिल (जो न मिलता हो) कहा जाय, वहां समर्थ-बुद्धि वाले 'विरुद्ध' रूपक कहते हैं।

१-मणि दीपक।

दोहा

वरषा, शरद बसंत, शशि सुभता, शोभ सुगध।
प्रेम, पवन, भूषण भवन, दीपक दीपकबंधु ॥ २३ ॥
इनमें एक जु वरणिये, कौनहु बुद्धि विलास।
तासों मणिदापक सदा, कहिये केशवदास ॥ २४ ॥

'केशवदास कहते हैं कि वर्षा, शरद, वसत, चन्द्रमा, सौंदर्य, शोभा सुगन्ध, प्रेम, पवन, भूषण और भवन ये दीपक अलकार के बधु हैं अर्थात् इन्हीं के वर्णन से दीपक अलकार का वर्णन अच्छा लगता है। इनमें से यदि एक का भी वर्णन अपनी बुद्धि के चमत्कार से किया जाय तो उसे सदा 'मणिदीपक' कहना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

प्रथम हरिन नैनी ! हेरि हरे हरि की सौं,
हरषि हरषि तम तेजहि हरतु हैं।
'केशौदास' आस-पास परम प्रकास सों,
विलासिनी ! विलास कछु कहि न परतु है।
भाँति भाँति भामिनि ! भवन यह भूषो नव,
सुभग सुभाय शुभ शोभा को धरतु है।
मानिनि ! समेत मान मानिनीनि वश कर,
मेरो दीप तेरो मन दीपत करतु है॥ २५ ॥

हे हरिण नैनी ! पहले श्रीकृष्ण के सामने को देख, प्रसन्न हो होकर तेरे मानरूपी अन्धकार को अपने तेज से हरे लेते हैं। 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते हैं कि हे विलासिनी ! आसपास उनके सौन्दर्य का परम प्रकाश फैला है। उसकी शोभा कुछ कही नहीं जा सकती। हे

भामिनी ! तेरा यह भाँति भाँति से सुसज्जित और नया भवन उनको सुन्दर स्वाभाविक शोभा धारण कर रहा है। हे मानिनी। मान समेत अनेक मानिनी नायिकाओं को वश में करने वाला मेरा यह श्रीकृष्ण रूपी दीपक तेरे मन को प्रदीप्त कर रहा है।

उदाहरण (२)

कवित्त

दक्षिण पवन दक्षि यक्षनि रमण लगि,
लोलन करत लौंग लवली लता को फरु।
'केशौदास' केसर-कुसुम-कोश रसकण,
तनु तनु तिनहू को सहत सकल भरु।
क्यों हूँ कहूं होत हठि साहस विलाशवश,
चपक चमेली मिलि मालती सुवास हरु।
शीतल सुगन्ध मंद गति नँद नँद की सौं,
पावत कहाँ न तेज तोरिवे को मान तरु ॥२६॥

दक्षिणी पवन-रूपी यक्षिण नायक यक्षिणी स्त्रियों के रमने के स्थान-हिमालय-तक, लौंग और लवली लताओं के फलों को हिला देता है। 'केशवदास' कहते हैं कि केसर के कुसुम कोषों के जो छोटे छोटे रसकण हैं। उनका भी पूरा भार सहन करता है। कहीं-कहीं, किसी प्रकार हठपूर्वक तथा साहस से, विलाश वश होकर, चम्पक चमेली और मालती से मिलकर उनकी सुवास को हरता है। श्रीकृष्ण की शपथ, यह शीतल सुगन्ध और मंद गति वाला दक्षिण पवन, न जानें कहा से मानरूपी वृक्ष को तोड़ने की सामर्थ्य पाजाता है।

२—मालादीपक

दोहा

सबै मिलें जहँ बरणिये, देशकाल बुधिवन्त।
मालादीपक कहत हैं, ताके भेद अनन्त ॥ २७ ॥

बैल, सूर्य और अरुण के एकएक कुल आठ, सूर्य के घोड़ों के सात, सूर्य के दो स्त्रियों के दो) उनसठ आखें, (क्योंकि श्री शङ्करजी के तीन नेत्र प्रतिमुख के हिसाब से ५ अधिक) ५८ चरण (क्योंकि सूर्य के घोड़ों के केवल मुख ही सात हैं, चरण केवल चार हैं) और बीस भुजायें (क्योंकि हंस, गरुड़, बैल और घोड़े भुजा रहित हैं और ब्रह्माजी, आदि देवताओं की चार चार भुजायें हैं । निवास करती हैं, वह सूर्य मडल है ।

उदाहरण (२)

प्रभाकर मण्डल

दोहा

चरण अठारह, बाहुदस, लोचन सत्ताईस।
भारत है प्रति पालि कै, शोभित ग्यारह शीश ।। ३२ ।।

जहा अठारह चरण (श्रीविष्णु के दो, श्री लक्ष्मी जी के दो, गरुड़ के दो, श्री शङ्करजी के दो, उनके वृषभ के चार, श्री पार्वतीजी के दो उनके सिंह के चार) दस भुजाएँ (चार श्रीविष्णु की दो श्रीलक्ष्मी जी की दो, श्री शङ्करजी की और दो श्री पार्वती जी की) सत्ताईस नेत्र (श्री शङ्करजी के पाँच मुखों को तीन-तीन नेत्रों के हिसाब से १५ और सब के दो, दो) और ग्यारह (श्री शङ्करजी के पाच तथा और सब के एकएक) शिर हैं, वह प्रभाकर मण्डल सारे ससार को जिलाता और मारता है ।

उदाहरण (३)

दोहा

नौ पशु नवही देवता, द्वै पक्षी, जिहि गेह ।
केशव सोई राखि है, इन्द्रजीत सै देह ।। ३३ ।।

'केशवदास' कहते हैं कि जिसके घर मे नौ सूर्य के सात घोड़े एक श्री शङ्करजी का बैल (श्री पार्वती जी का सिंह) पशु, नौ देवता

(श्री ब्रह्माजी श्री विष्णुजी, श्री शङ्करजी, श्री सावित्री, श्रीलक्ष्मी, श्रीपार्वती, सूर्य, चन्द्रमा, और श्री शङ्करजी के मस्तक के अग्निदेव) तथा दो पक्षी (श्रीविष्णु जी का गरुड़ और श्री ब्रह्माजी का हंस) हैं, राजा इन्द्रजीत सिंह के शरीर की रक्षा करेगा।

उदाहरण (४)

दोहा

देखै सुनै न खाय कुछ, पाय न, युवती जाति।
केशव चलत न हारई, वासर गनै न राति ॥ ३४ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि एक वस्तु कौन सी है जो न देखती है, न कुछ खाती है, न उसके पैर हैं और वह स्त्री जाति की है। वह चलते-चलते नहीं थकती, न दिन गिनती है न रात। [उत्तर—राह (मार्ग)]

उदाहरण (५)

दोहा

केशव ताके नामके, आखर कहिये दोय।
सूधे भूषण मित्रके, उलटे दूषण होय ॥३५॥

'केशवदास कहते हैं कि उस शब्द के दो अक्षर कहे जाते हैं, जिसके सीधे रहने से मित्र की शोभा होती है और उलट देने से दोष हो जाता है।

[उत्तर—राज जिसे उलटने से जरा (बुढापा) बनता है]

उदाहरण ६)

दोहा

जाति लता दुहुँ आखरहि, नाम कहै सब कोय।
सूधे सुख मुख भक्षिये, उलटे अम्बर होय ॥३६॥

जब व्रजनाथ (श्रीकृष्ण) ने तेरा हाथ प्रेम से पकड़ा, तब तो मानो उनका धैर्य छूट गया। तूने पान तो मुख में खाये हैं, परन्तु उनका रग नेत्रों पर चढा है। न हो, तो दर्पण देख ले कि मैं ठीक ही कह रही हूं हे सुखदायनी सजनी (सखी) तूने आलिङ्गन देकर मोहन (श्रीकृष्ण) का मन मोह लिया और गोपाल लाल ने तेरे गालों पर नख-क्षत दिया है, उससे तेरी बड़ी शोभा हो गई है।

उदाहरण (३)

सवैया

जीव दियो जिन जन्म दियो जगी जाही की जोति बडी जग जानैं।
ताही सों बैर मनो वच काय करै कृत केशव को उरआनैं।
मूषक तो ऋषि सिंह करयो फिरि ताही को मूरुख रोष बितानैं।
ऐसो कछू यह कालहै जाको भलो करिए सु बुरो करि मानैं॥४२॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिस (भगवान्) ने यह जीव और जन्म दिया और जिसकी बड़ी भारी ज्योति को सारा ससार जानता है, उसीसे तू मन, वचन और कर्म से वैर करता है तथा उसके किये हुए उपकारों को नहीं मानता। ऋषि ने तो चूहे को सिंह बनाया पर उस मूर्ख ने उन्हीं के सामने क्रोध प्रकट किया। यह समय ही कुछ ऐसा है कि जिनका भला करो वही बुरा करके मानता है।

—:o:—

चौदहवाँ प्रभाव

३५—उपमालंकार

दोहा

रूप, शील, गुण होय सम, ज्यो क्योंहूँ अनुसार।
तासो उपमा कहत कवि, केशव वहुत प्रकार ॥ १ ॥

केशवदास' कहते हैं कि जब किसी वस्तु या व्यक्ति का रूप, शील और किसी अन्य वस्तु या व्यक्ति के अनुरूप होता है, तब कविलोग उसे उपमा कहते हैं। इसके बहुत से प्रकार हैं।

उपमा लकार के भेद

दोहा

संशय हेतु, अभूत, अरु, अद्भुत, विक्रिय जान।
दूषण, भूषण, मोहमय, नियम गुणाधिक आन ॥ २ ॥
अतशय, उत्प्रेक्षित कहौ श्लेप, धर्म विपरीत।
निर्णय, लाक्षनिकोपमा असंभावित मीत ॥ ३ ॥
युध विरोध, मालोपमा, और परस्पर गीस।
उपमा भेद अनेक हैं मैं बरणे इकवीश ॥ ४ ॥

नशय, हेतु, अभूत, अद्भुत, विक्रय, दूषण, भूषण, मोह, नियम, गुणाधिक, अतिशय, उत्प्रेक्षित, श्लेष धर्म, विपरीत, निर्णय, लाक्षणिक, असंभावित, विरोध, माल और परस्पर ये इक्कीस भेदही मैंने वर्णन किये हैं, यद्यपि उपमा के बहुत से भेद हैं।

उदाहरण

कवित्त

दुरि है क्यों भूषन बसन दुति यौवन की,
　　देह ही की जोति होति द्यौस ऐसी राति है।
नाह की सुवास लागै ह्वै है कैसी 'केसव',
　　सुभाव ही की बास भौरभीर फारखाति है।
देखि तेरी मूरति की, सूरति बिसूरति हौं,
　　लालन का दृग देखिबे का ललचाति है।
चलिहैं क्यों चन्द्रमुखी, कुचनि के भारभये,
　　कचन के भार ते लचकि लकजाति है॥१०॥

तेरे यौवन की द्युति भूषण और वस्त्रों से कैसे छिपेगी, जब तेरी देह की ज्योति से ही रात दिन के समान हो जाती है। 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते हैं कि पति की सुगन्ध लगने से क्या दशा होगी, जब तेरी स्वाभाविक सुगन्ध को भौंरों की भीड़ खाये डालती है (अर्थात् इतनी सुगन्ध है कि भौंरों के झुंड के झुंड मंडराया करते हैं)। इसीलिए मैं तो तेरी सूरत को देख-देख कर ऐसे सोचा करती हूँ और तू श्रीकृष्ण के मुख को देखने को ललचाती है। हे चन्द्रमुखी। कुचों का भार होने पर तू कैसे चलेगी, जब बालों के भार ही से तेरी कमर लचकी सी जाती है।

४—अद्भुतोपमा

दोहा

जैसी भई न होति अब, आगे कहै न कोय।
केशव ऐसी बरणिये, अद्भुत उपमा होय॥ ११॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ ऐसा वर्णन किया जाय कि जो न तो कभी पहले हुआ हो, य वर्तमान हो रहा हो और न भविष्य मे होने ही वाला हो, उसे अद्भुतोपमा कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

पीतमको अपमान न माननि ज्ञान सयाननि रीझिरिझावै।
वंकविलोकनि बोल अमोलनि तौ बोलि केशव मोद बढ़ावै॥
हावहू भाव विभाव के भाव प्रभाव के भावनि चित्त चुरावै।
ऐसे विलास जो होयँ सरोज में तौ उपमा मुख तेरे कि पावै॥ १२॥

'केशवदास' कहते कि जो मान करके अपमान न करे और सयानता के साथ गान करके स्वय भी प्रसन्न हो और उन्हे भी प्रसन्न करे। तिरछी चितवन तथा मीठे वचनों से उनके मन के प्रसन्नता को बढावे। हाव, भाव, विभाव तथा प्रेम के प्रभाव से उनका मन चुरावे। जब इतने गुण कमल में हों, तब कहीं वह तेरे मुख की समता को पासके।

५—विक्रियोपमा

दोहा

क्योंहू क्योंहू वर्णिये, कौनहु एक उपाइ।
विक्रय उपमा होत तहँ, वरणत केशवराइ॥ १३॥

'केशवराय' कहते हैं कि जहाँ उपमेय के एक होने पर उपमान को, कभी एक प्रकार और कभी दूसरी प्रकार वर्णन किया जाय, वहाँ विक्रियोपमा होती है।

उदाहरण

कवित्त

'केशोदास' कुंदन के कोशतें प्रकाश मान,
चिंतामणि ओपनि सों ओपिकै उतारी सी।

सोभा सुभसानी, परमारथ निधानी, दीह,
कलुष कृपानीमानी, सब जग जानी है।
पूरव के पूरे पुण्य, सुनिये प्रवीणराय,
तेरी वाणी मेरी रानी गगा को सो पानी है ॥१८॥

हे मेरी रानी प्रवीण राय ! तेरी वाणी गगा की पानी जैसी है। क्योंकि जैसे गगा का पानी सुवरण युत अर्थात् सुन्दर रग का होता है, वैसे ही तेरी वाणी सुवरण युत अर्थात् अच्छे अक्षरों वाली है। जिस प्रकार गङ्गा जल सुरवरन कलित अर्थात् श्रेष्ठ देवताओं से युक्त होता है, उसी प्रकार तेरी वाणी भी सुरवरन युक्त अर्थात् श्रेष्ठ स्वरों से भरी है। जिस प्रकार गङ्गा जल भैरव जी (श्रीशङ्कर जी) से सम्बन्ध रखता है, उसी प्रकार तेरी वाणी मे भैरव राग है। जैसे गङ्गा जल ललितगति (मोक्ष) देने वाला है, वैसे ही तेरी वाणी मे ललित गति (सुन्दर प्रवाह) है। जैसे गङ्गाजल वितानी (विस्तृत भूमि में बहने वाला है) वैसे ही तेरी वाणी भी वितानी अर्थात् विशेष तानों वाली है। जैसे गङ्गाजल पवित्र है, उसी तरह तेरी वाणी भी व्याकरण से शुद्ध है। गङ्गाजल मे जिस प्रकार द्विज (ब्राह्मण) स्नान करते दिखलायी पड़ते हैं, उसी प्रकार तेरी वाणी में भी द्विजों (दाँतों) की चमक दिखलायी पड़ती है। जैसे गगाजल श्रुति सुखदानी अर्थात् वेद सम्बन्धी कार्यों के लिए शुभ है, उसी प्रकार तेरी वाणी भी श्रुति सुखदानी (कानों के लिए सुख देने वाली) है। गगाजल जैसे शोभा से सना हुआ है वैसे ही तेरी वाणी भी परम अर्थ मय है। जैसे गगाजल कलुषदीह (पापों के समूह) को कृपानी (तलवार के समान काटने वाला) है, वैसे ही तेरी वाणी भी (भजनादि से पूर्ण होने के कारण) कलुषनाशिनी मानी गई है। जिस प्रकार गगाजल को सारा ससार जानता है उसी प्रकार तेरी वाणी भी जगत मे प्रसिद्ध है।

८—मोहोपमा

दोहा

रूपक के अनुरूप ज्यों, कौनहु विधि मन जाय।
ताहीसों मोहोपमा, सकल कहत कविराय ॥१९॥

जहाँ रूपक अर्थात् उपमेय को किसी प्रकार अनुरूप (उपमान) समझ लिया जाय उसे सभी महाकवि लोग मोहोपमा कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

खेलौ न खेल कछू, हाँसी न हँसत हरि,
सुनत न गान कान तान बान सी बहै।
ओढ़त न अंबरन, डोलत दिगंबर सो
शंबर ज्यों शंबरारि दुःख देह को दहै।
भूलिहु न सूंघे फूल, फूल तूल कुम्हलात,
गात, खात बीरा हू न बात काहू सो कहै।
जानि जानि चंदमुख केशव चकोर सम,
चंदमुखी चंद ही के बिंब त्यों चितैरहै ॥ २० ॥

(एक सखी नायिक से कहती है कि) हे चंदमुखी ! श्रीकृष्ण न तो कोई खेल खेलते हैं, न हँसी ही करते हैं, न गान ही सुनते हैं, क्योंकि गाने की तान तो उनके कानों में बाण सी लगती है। वह कपड़े भी नहीं ओढ़ते, दिगंबर (नंगे) से घूमा करते हैं और शंबरारि (काम) पीड़ा तो उनको उसी प्रकार उनके शरीर को कष्ट देती है जैसे स्वयं काम ने शंकर को कष्ट दिया था। वह भूलकर भी फूल नहीं सूंघते, क्योंकि फूल के समान शरीर उसके सूंघने से मुर्झा जाता है। वह पान भी नहीं खाते और न किसी से बातें करते हैं। केशवदास (सखी की ओर से) कहते हैं कि वह तो मुख

वे सब डरते हैं (कि कोई यज्ञ करके मेरा आसन न छीन ले)। ये कलक रक (कलक से दरिद्र) अर्थात् निष्कलक हैं, वे कलक (अहल्या-गमन के कारण) से युक्त हैं। वे अमृत पान किये हुए हैं और इन्होंने श्री शङ्कर जी महाराज की भक्ति का रस पान किया है। ये सचमुच पवित्र हैं और वे पवित्र जैसे सुने भर जाते हैं। ये बिना दिये दान देते हैं, वे बिना दिये कुछ देते नहीं अतः इन्द्र महाराज इन्द्रजीत के समान न तो कभी थे, न हैं और न होंगे ही।

११—अतिशयोपमा

दोहा

एक कछू एकै बिपे, सदा होय रस एक।
अतिशय उपमा होति तहँ, कहत सुबुद्धि अनेक ॥२५॥

जहाँ किसी उपमेय का एक ही विषय में (सभी उपमानो से) बढ़ कर वर्णन किया जाता है, वहाँ अतिशय उपमा होता है, इस बात को अनेक सुबुद्धि वाले कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

'केशवदास' प्रगट अकास में प्रकाम मान,
ईश हू के शीश, रजनीश अवरेखिये।
थल थल, जल जल अमल अचल अति
कोमल कमल बहु बरण बिशेखिये।
मुकुर कठोर बहु नाहिं ने अचल यश,
वसुधा सुधाहू तिय अधरन लेखिये।
एक रस, एक रूप, जाकी गीता सुनियत,
तेरो मो बदन सीना। तोही बिपे देखिए ॥ २६ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि यदि चन्द्रमा को आपके मुख के समान कहें तो वह आकाश मे प्रकट ही (कलकी रूप में) प्रकाशित हो रहा है दूसरा रूप (जो निष्कलंक है) वह श्री शङ्कर जी के शिर पर (क्षीण रूप मे), यदि कमल सा मुख बतलाऊँ तो वे स्थान-स्थान पर, जलाशय, जलाशय में निर्मल, अचल और कोमल रूप के अनेक रगों के दिखलायी पड़ते हैं अर्थात् बहुत से हैं और मुख अपनी शोभा का एक ही है। यदि दर्पण जैसा बतलाऊ तो वह बहुत कठोर है और उसका यश भी अचल नहीं है अर्थात् कुछ समय पश्चात् बिगड जाता है। यदि अमृत जैसा कहूँ, तो अमृत तो इस पृथ्वी पर की अनेक स्त्रियों के ओठों मे पाया जाता है। इसलिए हे सीता जी ! जो सदा एक रस और एक रूप रहता है और जिसकी बड़ी प्रशसा सुनी जाती है, ऐसा आपका मुख आपही जैसा है।

१८—उत्प्रेक्षितोपमा

दोहा

एकै दीपति एककी, होय अनेकनि माह।
उत्प्रेक्षित उपमा सुनो, कहा कविनके नाह ॥२७॥

जहाँ उपमेय का गुण अनेक उपमानो में भी पाया जाय वहा उत्प्रेक्षितोपमा कही जाती है। इसको अनेक कविसम्राटों ने बतलाया है।

उदाहरण

कवित्त

न्यारो ही गुमान मन मीननि के मानियत,
आनियत सबही सु कैसे न जनाइये।
पचबान बाननि के आन आन भांतिगर्व,
बाढ्यो परिमान बिनु कैसे सो बताइये।

उदाहरण

कवित्त

ऊजरे उदार उर बासुकी विराजमान,
हार के समान आन उपमा न टोहिये।
शोभिजे जटान बीच गंगाजू के जल विंदु,
कुन्द कलिका से 'केशौदास' मन मोहिये।
नख कासी रेखा चंद, चंदन सा चारु रज,
अंजन सिंगार हू गरल रुचि रोहिये।
सब सुख सिद्धि शिवा सोहैं शिवजू के साथ,
जावक सो पावक लिलार लाग्यो सोहिये ॥३२॥

उज्वल और विशाल वक्षस्थल पर, हार के समान वासुकी सुशोभित हो रहे थे, जटाओं के बीच गंगाजी के जल-बिन्दु सुशोभित हो रहे थे। "केशवदास" कहते हैं कि वे कुन्दकली के समान मनको मोहे लेते थे। नखकी रेखा जैसा (क्षीण) चन्द्रमा चन्दन जैसी सुन्दर भस्म, शृंगार मे काम आनेवाले अजन जैसी विष की काली आभा विद्यमान थी इस प्रकार सब सुखों और सिद्धियों को स्वरुप श्री पार्वतीजी श्री शङ्कर जी के साथ सुशोभित थीं और महावर जैसी अग्नि प्रभा उनके मस्तक पर विराज मान थी।

१५—विपरीतोपमा

दोहा

केशव पूरे पुण्यके तेई कहिये हीन।
तासों विपरीतोपमा, केशव कहत प्रवीन ॥ ३३ ॥

केशवदास कहते हैं कि जब पूर्व पुण्य के कारण भाग्यवान हों उन्हें हीन वर्णन किया जाय तब प्रवीणजन उसे विपरीतोपमा कहते हैं

उदाहरण

सवैया

भूपितदेह विभूति, दिगम्बर, नाहिंन अम्बर अंग नवीनो।
दूरिकै सुन्दर सुन्दरी केशव, दौरी दरीन में मन्दिर कीनो॥
देखि विमंडित दंडिनसों, भुजदंड दुवौ असि दण्ड विहीनो।
राजनि श्रीरघुनाथ के राज, कुमण्डल छांडि कमण्डल लीनो॥३४।

उनके शरीर विभूति (भस्म) से भूपित (सुशोभित) हैं। वह दिगम्बर हैं और उनके शरीर पर नये वस्त्र नहीं हैं। 'केशवदास' कहते हैं कि सुन्दरी स्त्रियों को छोड़कर उन्होंने दौड़ कर पहाड़ों की गुफाओं मे घर बनाया है। उनके भुजदण्ड दण्डियों (सन्यासियों) के दण्डों से सुशोभित हैं और दोनों दण्डों अर्थात् तलवार तथा राजदण्ड से विहीन हैं। श्री रघुनाथ जी के राज्य में, राजाओं ने पृथ्वी मण्डल को छोड़कर कमण्डल ले लिया है अर्थात् सन्यासी हो गये हैं।

१६–निर्णयोपमा

दोहा

उपमा अरु उपमेय को, जहँ गुण दोप विचार।
निर्णय उपमा होत तहँ, सब उपमनि को सार॥२५॥

जहाँ उपमान के दोषों पर तथा उपमेय के गुणों पर विचार करके, समता दी जाती है, वहाँ निर्णयोपमा होती है, जो सब उपमाओं का सार है।

उदाहरण

कवित्त

एकै कहैं अमल कमल मुख सीता जू को,
एकै कहैं चन्द्र सम आनँद को कन्दरी।

उदाहरण

कवित्त

जैसे अति शीतल सुबास मलयज माहि
अमल अनल बुद्धिबल पहिचानिये।
जैसे कौनो काल वश, कोमल कमल माहि,
केशरैई 'केशौदास' कंटक से जानिये।
जैसे विधु सधर मधुर मधुमय माहिं,
मोहै मोहरुख, विष विषम बखानिये।
सुन्दरि, सुलोचनि, सुवचनि, सुदति तैसे,
तेरे मुख आखर परुषरुख मानिये ॥ ०॥

जिस प्रकार अत्यन्त शीतल और सुगन्धमय चन्दन में बुद्धिबल से अग्नि पहचानी जाती है केशवदास कहते हैं जिस प्रकार किसी काल-वश (विरह के समयाधीन) को कोमल कमल में केसर भी काँटों जैसी जान पड़ती है, जैसे पूर्ण चन्द्रमा को मधुर तथा मधुमय होते हुए भी मोह से मोह रुख (मूर्छा से मूर्छित प्रायः) विषय विषमय (कठोर विष से भरा) कहा करता है, उसी प्रकार हे सुन्दरी, सुलोचनी तथा सुन्दर दाँतों वाली, तेरे मुख में कठोर-वचनों को मानना चाहिए अर्थात् ऊपर लिखी बातें असम्भव हैं उसी प्रकार तेरे मुख में कठोर वचनों का होना असम्भव है।

१९—विरोधोपमा

दोहा

जहँ उपमा उपमेयसों आपस माहि विरोध।
सो विरोध उपमा सदा, वरणत जिनहि प्रबोध ॥ ५१ ॥

जहाँ उपमा और उपमेय में आपस का विरोध प्रदर्शित किया जाय वहाँ उसे जानकार लोग सदा विरोधोपमा कहा करते हैं।

उदाहरण

कवित्त

कोमल कमल, कर कमला के भूषण को,
'केशौदास' दूषण शरद शशिठाई है।
शशि अति अमल अमृतमय मणिमय,
सीता को बदन देखि ताको मतिनाई है।
सीता को बदन सब सुख को सदन, जाहि,
मोहत मदन, दुख कदन निकाई है।
आधो पल माधो जू के देखे विनु सोई शशि,
सीता के बदन कहूँ होत दुखदाई है ॥४२॥

'केशवदास' कहते हैं कि कमला (श्रीलक्ष्मी जी) के भूषण स्वरूप कोमलकरों के लिए शरद ऋतु का चन्द्रमा दूषण स्वरूप ही है। चन्द्रमा अत्यन्त निर्मल, अमृत पूर्ण, तथा कांति वाला है, परन्तु फिर भी श्री सीता जी के मुख को देखकर उसमें मलिनता आ जाती है। श्री सीताजी का मुख सब सुखों का घर है, जिसे देखकर काम भी मोहित हो जाता है तथा दुखों को दूर करने वाली जिसकी शोभा है वही चन्द्रमा श्रीरामचन्द्र को आधे पल के लिए भी बिना देखे, सीता जी के मुख को दुखदाई हो जाता है।

२०—मालोपमा

दोहा

जो जो उपमा दीजिये, सो सो पुनि उपमेय।
सो कहिये मालोपमा केशव कविकुल गेय ॥४३॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ उपमान, उपमेय और उपमेय, उपमान बनते चले जाँय वहाँ उसे कवि लोगों के द्वारा 'मालोपमा' कहा जाता है।

२२—संकीर्णोपमा

दोहा

बन्धु चोर, वादी, सुहृद कल्पपृच्छ प्रभु जान।
अगी रिपु, सोदर आदिदै, इनके अर्थ बखान ॥४६॥

बन्धु, चोर, वादी, सुहृद (मित्र), कल्प (शरीर), पृच्छ (विवादी), प्रभु, अगी, रिपु (शत्रु) तथा सोदर (सगा भाई) आदि संकीर्णोपमा के वाचक समझने चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

विधु को सो बधु किधौं चोर हास्य रस कोकि,
कुन्दन को वादी, किधौं मोतिन को मति है।
कल्प कल हँस को कि छीन निधि छवि प्रच्छ,
हिमगिरि-प्रभा-प्रभु प्रगट पुनीत है।
अमल अमित अगी गंगा के तरंगन को,
सोदर सुधा को, रिपु रूपे को अमीत है।
देस देस दिस दिस परम प्रकाशमान,
किधौं 'केशौदास' रामचन्द्र जू को गीत है ॥४८॥

चन्द्रमा का भाई है कि हास्यरस का चोर है कि कुन्दन (सोने) का वादी है, कि अमृत का सगा भाई है अथवा मोतियों का मित्र है। सुन्दर हँस का शरीर है कि क्षीर निधि का प्रति द्वन्द्वी है कि हिमालय की शोभा का स्वामी अथवा प्रत्यक्ष पवित्रता है। गङ्गा जी की निर्मल तरंगों का साथी है कि अमृत का सगा भाई है कि चादी का निरादर शत्रु है अथवा केशवदास' कहते हैं कि देश देशान्तरों में प्रकाशमान यह श्री रामचन्द्र जी का गीत है।

—:*:—

पन्द्रहवाँ प्रभाव

३६—यमक अलंकार

दोहा

पद एकै नाना अरथ, जिनमें जेतोवित्तु।
तामे ताको काढ़िये, चमक मांहि दै चित्तु ॥१॥

जहाँ शब्द एक ही हो अर्थ अनेक हों, वहाँ यमक होता है। इस यमक में चित्त लगाकर, जिसमें जितनी प्रतिभा शक्ति होती है, उतने ही अर्थ निकाल सकता है।

आदि पदादिक यमक सब, लिखे ललित चितलाय।
सुनहु सुबुद्धि उदाहरण, केशव कहत बनाय ॥२॥

केशवदास कहते हैं कि मैंने यमक के आदि पदादिक अनेक सुन्दर भेद मन लगाकर लिखे हैं। हे सुबुद्धि! अब उनके उदाहरणों को सुनो, जो मैंने बनाये हैं।

आदिपद यमक

दोहा

सजनी सज नीरद निरखि, हरपि नचत इत मोर।
पीय पीय चातक रटत, चितवहु पिय की ओर ॥३॥

हे सजनी! बादलों की सज (सजावट) को देख! यहाँ मोर हर्षित होकर नाच रहे हैं, अतः तू भी पति की ओर देख।

[इसमें सजनी-सजनी में यमक है जो आदि में है, इसीलिए आदि-पद यमक नाम रखा गया है]

हे मानिनी ! तुझे तेरा प्राण प्यारा स्वयं मना रहा है, देख और मान जा। हरि (श्रीकृष्ण) को सुजान जानकर अपने चित्त में इसका विचार कर

[इसमें 'माननि-माननि', तथा 'सुजान' मे यमक है। एकपादान्त है, दूसरा पादादि]

द्विपादांत यमक

दोहा

जिन हरि जगको मन हर्यो, बाम बानदृग चाहि।
मनसा वाचा कर्मणा, हरि बनिता बनि ताहि ॥१२॥

हे वाम ! जिन हरि (श्रीकृष्ण) ने वाम दृग (तिरछी दृष्टि) से देखकर सारे संसार का मन हर लिया है, उन हरि की तू मन, वचन और कर्म से वनिता (स्त्री) बन जा।

[इसमें वाम वाम तथा वनिता-वनिता मे यमक है]

उत्तरार्द्ध यमक

दोहा

आजु छबीली छवि बनी, छांड़ि छलिन के संग।
तरुनि, तरुनि के तर मिलौ, केशव के सब अंग ॥१३॥

आज (श्रीकृष्ण की शोभा अच्छी बनी है। अतः छलियों का संग छोड़कर, हे तरुणि ! वृक्षों के नीचे, श्रीकृष्ण के सब अंगों से लिपट कर मिल

[इसमें उत्तरार्द्ध के दोनों चरणों में 'तरुनि-तरुनि' तथा 'केशव, केसव' में यमक है]

द्विपादयमक (प्रथम और तीसरे में)

दोहा

अलिनी अलि नीरज बसे, प्रति तरुवरनि विहग ।
है मनमथ मनमथन हरि, बसै राधिका संग ॥ ९ ॥

जिस प्रकार भ्रमरी और भ्रमर कमल में बसते हैं और जिस प्रकार प्रति वृक्षपर पक्षियों के जोड़े रहते हैं, उसी प्रकार मनमथ (कामदेव) के मन को मथने वाले श्रीकृष्ण श्रीराधाजी के साथ रहते हैं ।

[इसमें पहले चरण में 'अलिनी अलिनी' में यमक हैं और तीसरे चरण में 'मनमथ-मनमथ' में यमक है]

त्रिपद यमक

दोहा

सारस सारसनैन सुनि, चन्द्र चन्द्रमुखि देखि ।
तू रमणी रमणीयतर, तिनते हरिमुख लेखि ॥१०॥

हे सारस नैन (कमलवत नेत्र वाली) सुन ! हे चन्द्रमुखी ! सारस (कमल) और चन्द्रमा को देख ! हे रमणी ! तू इनसे भी रमणीयतर (बढ़कर) है ! उनसे भी बढ़कर हरिमुख (श्री कृष्ण के मुख) को समझ ।

[इसमे पहले चरण मे 'सारस सारस' में, दूसरे मे 'चन्द्र, चन्द्र' मे और तीसरे मे 'रमणी, रमणी' मे यमक है अतः त्रिपाद यमक हुआ]

पादान्तपादादियमक

दोहा

आप मनावत प्राणपिय, मानिनि ! मान निहार ।
परम सुजान सुजान हरि, अपने चित्त विचार ॥११॥

हे मानिनी ! तुझे तेरा प्राण प्यारा स्वयं मना रहा है, देख और मान जा। हरि (श्रीकृष्ण) को सुजान जानकर अपने चित्त में इसका विचार कर

[इसमें 'माननि-माननि', तथा 'सुजान' मे यमक है। एकपादान्त है, दूसरा पादादि]

द्विपादांत यमक

दोहा

जिन हरि जगको मन हरयो, वाम वामदृग चाहि।
मनसा वाचा कर्मणा, हरि वनिता वनि ताहि ॥१२॥

हे वाम ! जिन हरि (श्रीकृष्ण) ने वाम दृग (तिरछी दृष्टि) से देखकर सारे ससार का मन हर लिया है, उन हरि की तू मन, वचन और कर्म से वनिता (स्त्री) बन जा।

[इसमें वाम वाम तथा वनिता-वनिता में यमक है]

उत्तरार्द्ध यमक

दोहा

आजु छबीली छबि बनी, छांड़ि छलिन के संग।
तरुनि, तरुनि के तर मिलौ, केशव के सब अंग ॥१३॥

आज (श्रीकृष्ण) की शोभा अच्छी बनी है। अतः छलियों का संग छोड़कर, हे तरुणि ! वृक्षों के नीचे, श्रीकृष्ण के सब अंगों से लिपट कर मिल

[इसमें उत्तरार्द्ध के दोनों चरणों मे 'तरुनि-तरुनि' तथा 'केशव, केशव' में यमक है]

[इसमें 'धव, धव' तथा माधव, माधव में जो यमक है, उसके आगया है। ये पद सटे हुए नहीं है अतः सव्ययेत बीच में दूसरा पद कहलाते हैं।]

आदिअन्त यमक

दोहा

सीयस्वयम्बर माझ जिन, बनितन देखे राम।
ता दिनतें उन सबन सखि, तजे स्वयम्बर धाम ॥ २० ॥

श्री सीता जी के स्वयम्बर में जिन स्त्रियों ने श्री राम को देखा, उसी दिन से उन सबों ने, हे सखि ! अपने पतियों के घर छोड़ दिये (कि वन में जाकर तपस्या करें और श्रीराम सा वर पावें)

अथ पादांत निरन्तर यमक

दोहा

पाप भजत यों कहत ही, रामचन्द्र अवनीप।
नीप प्रफुल्लित देखि त्यों, विरही प्रिया समीप ॥२१॥

राजा रामचन्द्र कहते ही जिस प्रकार पाप भाग जाते हैं, उसी प्रकार कदम्ब को फूला हुआ देखकर विरही प्रिया के पास भागता है।

[इसमें 'नीप, नीप में यमक है, जो एक पद के अन्त में है और दूसरा चरण के आरम्भ में]

दोहा

जैसे छुवे न चन्द्रमा, कमलाकर सविलास।
तैसेही सब साधुवर, कमला करन उदास ॥२२॥

जैसे चन्द्रमा फूले हुए कमलों को नहीं छूता वैसे ही सब साधुजन लक्ष्मी को हाथ से नहीं छूते

[इसमें दूसरे तथा चौथे चरण के 'कमलाकर-कमलाकर' पदों को मिलाकर यमक बनता है।]

पूर्वोत्तर यमक

दोहा

परम तरुणि यों शोभियत, परमईशअरधंग।
कल्पलता जैसी लसै, कल्पवृक्ष के संग ॥२३॥

परम तरुणी (श्री पार्वती जी) परमईश (श्री शङ्कर जी) के अर्द्धाङ्ग में इस प्रकार शोभित हो रही है, जिस प्रकार कोई स्वेव लता कल्पवृक्ष में लिपटी हो।

[इसमें पूर्व पदों में 'परम-परम' और उत्तर पदों में 'कल्प-कल्प' का यमक है]

त्रिपादादि यमक

दोहा

दान देत यों शोभियत, दान रतन के हाथ।
दान सहित यों राजहीं, मत्तगजनि के माथ ॥२४॥

दान देते समय दान रत्नों अर्थात् श्रेष्ठ दानियों के हाथ इस प्रकार सुशोभित होते हैं जिस प्रकार मतवाले हाथियों के मस्तक दान (मद) सहित सुशोभित होते हैं।

[इसमें 'दान' शब्द का यमक है]

चतुष्पदादि यमक

दोहा

नरलोकहि रावत सदा, नरपति श्री रघुनाथ।
नरक निवारण नाम जग, नर बानर को नाथ ॥२५॥

दुखकर यमक—६

दोहा

सुरतरवर में रंभा बनी, सुरतरवर मे रंभा बनी ।
सुरतरंगिनी करि किन्नरी,सुरतरंगिनी करि किन्नरी ॥३२॥

मैने सुरतरुवर (पारिजात) युक्त रंभावनी (कदली की वनी या वगीची) में, सुरतरव अर्थात् अपने सगीत में लीन घूमती हुई और रभा जैसी वनी ठनी, सुरतरंगिनी स्वरों की नदी स्वरूपिणी किन्नरी (सारगी) लिए, सुरत (सुन्दरता में रगिनी अनुरक्त करने वाली किन्नरी देखी ।

दुखकर यमक—७

दोहा

श्रीकठ उर वासुकि लसत, सर्वमंगलामार ।
श्रीकठ उर वासुकि लसत, सर्वमगलामार ॥ ३३ ॥

श्रीकठ अर्थात् श्रीशङ्कर जी महाराज के हृदय पर वासुकि नाग सुशोभित होता है और वह सर्व मंगलामार (सर्व मगल + अमार) अर्थात् मगलमूर्त्ति और काम रहित हैं । सर्वमगला (श्री पार्वतीजी) श्रीकट (सुशोभित कठ वाली) हैं तथा मा (लक्ष्मी) और (अग्नि) स्वरूपिणी हैं

दुखकरयमक—८

सवैया।

दूषण दूषण के यश भूषण, भूषणअंगनि केशव सोहै ।
ज्ञान सँपूरण पूरणके, परिपूरण भावनि पूरण जोहै ॥
श्री परमानँद की परमा, परमानँद की परमा कहि कोहै ।
पातुरसी तुरसी मतिको अवदात रमी तुलसीपति मोहै ॥३४॥

'केशवदास' कहते हैं कि जो 'दूषण-दूषण' अर्थात दूषण राक्षस के वैरी श्रीरामचन्द्र जी के यशरूपी भूषणों (शंख, चक्रादिकों को) अपने अंगों पर धारण करके सुशोभित होता है, जो ज्ञान से भरी हुई भावनाओं के द्वारा ईश्वर को संसार व्यापी देखती है। जो परमानंद (श्री भगवान) की परमा (शोभा) पर मुग्ध है अर्थात् उनमें लीन है. उसके लिए आनन्द की परमा (अधिकता) क्या है। अर्थात् वह आनन्द को कुछ नहीं समझता। उसकी मति में (उसके विचार में) वेश्याएं तुरसी (खट्टी या बुरी) हैं, उसकी बुद्धि अवदातरसी (शांत रस में सनी हुई) रहती है तथा वह तुरसी पति (तुलसीपति) श्री विष्णु पर मोहित होती है।

दोहा

इहिविधि औरहु जानिये, दुस्वकर यमक अनेक।
वरणत चित्रकवित्त अब, सुनियो सहित विवेक ॥३५॥

इसी तरह और बहुत से दुसकर यमक हो सकते हैं। अब मैं चित्र अलंकार के कवित्तों (छन्दों, रचनाओं) में वर्णन करता हूँ। जो विवेकवान हैं, वे सुनें।

ये नीचे लिखे छन्द प्रक्षिप्त से ज्ञात होते हैं, क्योंकि यमकालंकार से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

१—अनुप्रास

छन्द

जो तू सखि न कहै कछु चालहि, तौलौं कहूँ इकयान रसालहि
तो कहुँ देहुँ बनी बनमालहि, मोकहँ तू मिलवै नँदलालहि ॥३६॥

दोहा

अतिरति मतिगति एककर, बहु विवेक युतचित्त।
ज्यों न होय क्रमभंग त्यों, बरनो चित्रकवित्त॥ ४॥

बड़े प्रेम के साथ, मति (बुद्धि) की गति को एकत्र करते हुए, अर्थात् जहाँ तक बुद्धि जा सके वहाँ तक, अपने चित्त को विवेक युत करके चित्रालंकार युक्त रचना करो, जिससे पहले लिखे हुए नियमों का (जहाँ तक हो सके) क्रम भंग न हो। [भाव यह है कि यद्यपि चित्रालंकार में, दोषों पर ध्यान नहीं देने का अधिकार प्राप्त है, परन्तु फिर भी जहाँ तक हो सके दोषों से बचना ही चाहिए]

१—निरोष्ठ

दोहा

पढ़त न लगै अधर सों, अधर वरण त्यों मंडि।
और वर्ण वरणौ सबै, उ पवर्ग को छंडि॥ ५॥

'निरोष्ठ' में ऐसे अक्षरों को रखो कि उसे पढ़ते समय, ओठ से ओठ न छूने पावें। इस तरह की रचना में उ' ऊ' पवंग (प, फ, ब, भ, म) को छोड़ कर, सभी अक्षरों का प्रयोग करो।

उदाहरण

कवित्त

लोक लीक नीकी, लाज ललित है नंदलाल,
लोचन ललित लोल लीला के निकेत हैं।
सौं हन को सोच न सकोच लोका लोकनि को,
देत सुख, ताको सखी दूनो दुख देत हैं।
'केशोदास' कान्हर कनेर ही के कोरक से,
आछे रंग राते अंग, अतस में सेत हैं।

देखि देखि हरि की हरनता हरिन नैनी,
देखत ही देखा नहीं हियो हरि लेत हैं ॥ ६ ॥

हे सखी ! श्रीकृष्ण लोक मर्यादा तथा लज्जा को छुड़ा देते हैं। उनके सुन्दर नेत्र हैं तथा वह लीला के घर हैं। न तो उन्हें शपथ खाने का कुछ शोच है और न सांसारिक निंदा ही का कुछ ध्यान है। जो उन्हें सुख देता है उसे वह दूना दुख देते हैं। केशवदास (उस सखी की ओर से) कहते हैं कि श्रीकृष्ण कन्हेर के फूल की भाँति बाहर रङ्गबिरङ्गे और भीतर सफेद हैं। अर्थात् उनका बाहर-भीतर एक सा नहीं है; मन में कुछ रखते हैं और ऊपर दूसरा व्यवहार करते हैं। हे हरिण नैनी ! श्रीकृष्ण की हरण करने की शक्ति तो देख ! वह देखते ही देखते क्या हृदय को हरण नहीं कर लेते ?

२—मात्रारहित वर्णन

दोहा

एकैस्वर जहँ बरणिये, अद्भुतरूप अवर्ण।
कहिये मात्रारहित जहँ, मित्र चित्र आभर्ण ॥ ७ ॥

हे मित्र ! जहाँ किसी रचना में केवल एक ही स्वर 'अ' का अद्भुत रूप से प्रयोग किया जाता है, वहाँ, उसे मात्रा रहित चित्रालंकार कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

जग जगमगत भगत जन रस बस,
भव भयहर कर, करत अचर चर।
कनक बसन तन असन अनल घट,
घटदल बसन, सजलथल थलकर।

अजर अमर अज बरद चरन धर,
परम धरम गन, अरन शरन पर।
अमल कमल वर वदन, सदन जस,
हरन मदन मद, मदन-कदन हर ॥८॥

जो भक्तों की भक्ति के वश में होकर जग में जगमगाते रहते हैं अर्थात् भक्तों का कष्ट दूर करने के लिए ससार में अवतरित होकर शोभा धारण करते हैं। जो ससार के भय को दूर करके, अचर को चर करने वाले हैं। जो शरीर पर कनक अर्थात् सोने के रग का कपड़ा धारण करते हैं, जिन्होंने बड़ी भारी अग्नि को भोजन बना डाला अर्थात् दावाग्नि को पी गये। जो वट के पत्तेपर निवास करते हैं तथा जिन्होंने समस्त पृथ्वी को सजल अर्थात् जलमय कर दिया था। चिरजीव देवता गण तथा श्री ब्रह्माजी एव श्रीशकर जी जिनके चरण छूते हैं। जो अत्यन्त धर्म परायणों को शरण देने वाले हैं। जिनका निर्मल कमल जैसा श्रेष्ठ मुख हैं, जो कीर्ति के घर हैं, जो अपनी सुन्दरता से काम-देव के गर्व को भी हरण कर लेते हैं, ऐसे काम के नाश को दूर करने वाले अर्थात् काम को (प्रधुम्न के रूप में) पुनः उत्पन्न करने वाले श्रीकृष्ण हैं।

४ एकाक्षर रचना

दोहा

एकादिक दै वर्ण बहु, वर्णों शब्द बनाय।
अपने अपने बुद्धिबल, समुझत सब कविराय ॥९॥

एक से लेकर दो, तीन, चार आदि अनेक वर्णों की रचना की जा सकती है। कवि सम्राट अपने अपने बुद्धिबल से उसे समझ लेते हैं।

उदाहरण

४—एकाक्षर

दोहा

गो० गो० गं० गो० गी० अ० आ०, श्री० धी० ह्री० भी० भा० न।
भू० वि०प० स्व० छा०धौ०,हि० हा०, नौ०ना० सं०,मं० मा० न।१०।

सूर्य चन्द्र, श्रीगणेश, गाय, सरस्वती, श्रीविष्णु, श्रीब्रह्मा, और श्री लक्ष्मीजी को धारण कर लज्जा और भय न कर। इससे पृथ्वी और आकाश तेरे लिए अपने नमस्कार पढ़ेंगे। तेरा हृदय प्रकाशित होगा। तुझे नया कष्ट न मिलेगा तथा तू प्रकाशित होगा और तेरी मृत्यु न होगी।

५—द्व्याक्षर शब्द रचना

दोहा

रमा, उमा, बानी, सदा, हरि, हर, विधि, सँग वाम।
छमा, दया, सीता, सती, कीनी रामा० राम ॥११॥

श्री लक्ष्मी जी पार्वतीजी और सरस्वती जी सदा श्रीविष्णु, श्री शंकरजी तथा श्री ब्रह्माजी के साथ रहने वाली हैं, परन्तु श्री रामजी की पत्नी सती साध्वी सीताजी ही क्षमा और दया से युक्त हैं।

६—त्र्याक्षर शब्द रचना

दोहा

श्रीधर, भूधर, केसिहा, केशव, जगत, प्रमाण।
माधव, राघव, कंसहा, पूरन, पुरुष, पुराण ॥१२॥

'केशवदास' कहते हैं कि श्रीकृष्ण श्री (शोभा) को धारण करने वाले, गोवर्द्धन पर्वत धारी, केशी को मारने वाले, माधव, राघव, कंस को मारनेवाले तथा पूर्ण पुरुष हैं, इसका जगत साक्षी है।

७—चतुराक्षर रचना

कवित्त

सीतानाथ, सेतुनाथ, सत्यनाथ, रघुनाथ,
जगनाथ, ब्रजनाथ, दीनानाथ देवगति।
देवदेव, यज्ञदेव, विश्वदेव व्यासदेव
वासुदेव, वसुदेव, दिव्यदेवदीन रति।
रणवीर, रघुवीर, यदुवीर, ब्रजवीर,
बलवीर, वीरवर, रामचन्द्र चारुमति।
राजपति, रमापति, रामापति, राधापति,
रसपति, रसापति, रासपति, रागपति। १३॥

दोहा

अक्षर षटविसति सवै, भाषा बरनि बनाव।
एकएक घटि एक लगि, केशवदास सुनाव॥ १४॥

'केशवदास' कहते हैं कि अत्र मैं छब्बीस वर्णों के दोहे से आरम्भ करके, एक एक वर्ण घटते हुए एकाक्षर तक की रचना सुनाता हूँ।

छब्बीस वर्ण की रचना

दोहा

चोरीमाखन दूध ध्यो हू दृत हठि गोपाल।
डरो न जल थल भटकि फिरि, झगरत छवि मो लाल॥१५॥

कोई गोपी श्री कृष्ण से कहती है कि हे गोपाल! तुम मक्खन, दूध और घी की हठपूर्वक चोरी करने के लिए, जल, स्थल सभी जगह भटकते फिरते हो और डरते नहीं। साथ ही बड़ी छवि से अर्थात बड़े अभिमान से लड़ने को भी उद्यत होते हो।

पचीस वर्ण की रचना

दोहा

चेरी चंदन हाथ कै, रीझ चढ़ायो गात।
विह्वलक्षितिधर डिभशिशु. फूले वपुष नमात ॥ १६ ॥

जब चेरी (कूबरीदासी) ने, रीझ कर, श्रीकृष्ण के शरीरपर चंदन लगाया, तब राजा कंस बहुत विह्वल (व्याकुल) हुआ और बालरूप धारी कृष्ण फूले न समाये।

चौबीस वर्ण की रचना

दोहा

अघ, वक, शकट प्रलंब हनि. मारयो गज चाणूर।
धनुषभंजि दृढ़दोरि पुनि कंसमथ्यो मद मूर ॥१७॥

(श्री कृष्ण ने अघासुर, वकासुर. शकटासुर और प्रलंबासुर को मारकर गज (कुवलया हाथी) और चाणूर का संहार किया। फिर दौड़कर मतवाले कंस के दृढ़ धनुष को तोड़ते हुए, उसे भी मार डाला।

तेईस वर्ण की रचना

दोहा

मूधी यशुमति नन्द पुनि, भोर गोकुलनाथ।
माखनचोरी झूठ हठ, पढ़े कौन के साथ ॥१८॥

यशोदा जी सीधी हैं, और गोकुलनाथ नंद भी भोले-भाले हैं, फिर बताओ मक्खन की चोरी करना, झूठ बोलना, तथा हठ करना, किनके साथ रहकर सीखा है?

बाईस वर्ण की रचना

दोहा

हरि हठ बल गोविंद विभु. मायक सीतानाथ।
लोकप विट्ठल शंखधर, गरुडध्वज रघुनाथ ॥१६॥

इक्कीस वर्ण की रचना।

दोहा

जैसे तुम सब जग रच्यो, दियो कालके हाथ।
तैसे अब दुख काटि, करमफन्द दृढ नाथ ॥२०॥

जैसे आपने सारी सृष्टि रचकर, काल के हाथ में (नाश करने के लिए) दे दी है, वैसे ही, हे नाथ! मेरे दुःखों तथा कर्म फदों को भी काट दीजिए।

बीस अक्षर की रचना

दोहा

थके जगत समुझाय सब, निपट पुराण पुकारि।
मेरे मनमें चुभिरहे, मधुमर्दन मुरहारि ॥२१॥

जगत के सब लोग मुझे समझा समझाकर हार गये और पुराण भी पुकार पुकारकर रह गये, परन्तु मेरे मन में तो मधुराक्षस को मारनेवाले तथा मुरारि (श्रीकृष्ण) ही चुभे हुए हैं।

उन्नीस अक्षर की रचना

दोहा

को जानै को कहिगयो, राधा सों यह बात।
करी जु माखनचोरिबलि, उठत बड़े परभात ॥२२॥

पता नहीं, राधा से यह बात कौन कह गया कि मैं बलि जाऊँ, बड़े प्रातः उठत ही मैंने देखा है कि किसी ने तुम्हारे यहाँ मक्खन की चोरी की है।'

अठारह अक्षर की रचना

दोहा

यतन जमायो नेहतरु, फूलत नंदकुमार।
खंडत कम कत जो न अब, कपट कठोर कुठार ॥२३॥

हे नन्द कुमार ! यत्न से जमाए हुए प्रेम-वृक्ष को, फूलते देखकर, कपट के कठोर कुल्हाड़े से उसे काटने में आपका मन दुखी नहीं होता ?

सत्रह अक्षर की रचना

दोहा

बालापन गोरस हरे, बड़े भये जिमिचित्त ।
तिमि केशव हरि देहहू, जो न मिलो तुम मित्त ।२४॥

हे मित्र, यदि तुम मिलना नहीं चाहते हो जिस प्रकार बचपन में गोरस चुराया, और बड़े होने पर मन की चोरी की, उसी प्रकार हे श्रीकृष्ण ! मेरी देह को भी अब हरण कर लो ।

सोरह अक्षर

दोहा

तुम घरघर मडरात अति, बलिभुक से नँदलाल ।
जाकी मति तुमहीं लगी, कहा करै वह बाल ।२५॥

हे नदलाल ! तुम तो घर-घर पर कौए की तरह मँडराते रहते हो, पर जिनका मन तुम्हीं में लगा हुआ है, वह बेचारी बाला क्या करे ?

पंद्रह अक्षर

दोहा

जो काहूपै वह सुनै, ढूँढत डोलत सांझ ।
तौ सिगरो ब्रज डूबिहै वाके अँसुवन मांझ ॥ २६ ॥

(कोई एक गोपी श्रीकृष्ण से कहती है कि) यदि वह राधा किसी से यह सुन लेगी कि 'तुम सन्ध्या होते ही किसी अन्य स्त्री को खोजने फिरते हो, तो उनके आँसुओं से सारा ब्रज डूब जायगा ' अर्थात वह इस समाचार को सुनकर बहुत रोवेगी ।

चौदह अक्षर

दोहा

ढूका ढाकी दिनकरी, टकाटकी अरु रैनि।
यामें केशव कौन सुख, वेरुकरैंपिकबैनि ॥२७॥

तुम दिन में तो लुक-छिपकर और रात में टकटकी लगाकर देखा करते हो हे कृष्ण इसमें भला कौन सा सुख मिलता है ' इसकी तो बहुत सी पिक बैनी स्त्रिया निन्दा ही करती हैं।

तेरह अक्षर

दोहा

कह्यो और को मैं सुन्यों, मन दीनो हरिहाथ।
वा दिनतें वन में फिरै को जानै किहि साथ ॥ २८ ॥

मैंने दूसरों का कहना मान कर, अपना मन श्रीकृष्ण के हाथ में देदिया। उसी दिन से वह मन, न जानें किसके साथ, वन-वन में घूमता फिरता है।

बारह अक्षर

दोहा

काहू वैरिन के कहे, जी जुरि गयो सनेहु।
तारेते टूटै नहीं, कहा करों अलेहु ॥ २९ ॥

किसी वैरिन के कहने से, मेरे मन मे स्नेह जुड गया। अब वह तोड़ने पर भी नहीं टूटता। लो अब मैं क्या करूँ।

ग्यारह अक्षर

दोहा

वे सब मोहैं कालकी, बिसरो गोकुल राज।
मुख देखो ले मुकुरकर करी कलेवा लाज ॥ ३० ॥

हे गोकुल राज (कृष्ण) तुम्हें कल की सब शपथें भूल गईं ? तनिक दर्पण लेकर अपना मुँह तो देखो। तुम तो जैसे लज्जा का कलेवा कर गए हो।

दश अक्षर

दोहा

ले ताके मनमानिकहि, कत काहूपै जात।
जब कहूँ जिय जानिहै, तब कैहै कह बात ॥३१॥

उसके मनरूपी माणिक्य को लेकर अब किसी और के पास क्यों जाते हो? इस बात को जब वही किसी तरह जानेगी, तब भला क्या कहेगा?

नव अक्षर

दोहा

चंचू चुँगे अँगारग जाको कर जियजोर।
सोऊ जो जारै हिये, कैसे जियै चकोर ॥ ३२ ॥

जिसके बल को हृदय में धारण करके, चकोर अंगारों को चुगा करता है, वही यदि हृदय को जलाने लगे, तो चकोर बेचारा कैसे जीवित रह सकेगा?

आठ अक्षर

दोहा

नैन नवावहु नेकहू, कमलनैन नवनाथ।
आलन के मनमोहि लै, बेचे मनमथ हाथ ॥ ३३ ॥

हे नये स्नेही! हे कमल नयन! तनिक आँखें नीची करो। तुमने स्त्रियों के मनों को मोहित करके, (अपने पास न रख कर) कामदेव के हाथ उन्हें बेच डाला।

आधा एकाक्षर

दोहा

केकी केका की कका, कोक कीकका कोक।
लोल लालि लोलै लली, लाला लीला लोल ॥ १॥

मोर की ध्वनि क्या है चक्रवाक और मेंढकों की ध्वनि भी क्या है। क्योंकि वह नायिका पुत्र प्रेम मे भरी हुई घूमती रहती है और उसी की चंचल लीलाओं पर मुग्ध रहती है।

प्रतिपदाअक्षर

दोहा

गो गो गीगो गोगगज, जीजै जीजी जोहि।
रूरे रूरे रेरु ररि, हाहा हूहू होहि ॥४२॥

हे जलमें डूबते हुए गज। तुम 'गो, गा, की पुकार करो अर्थात् यह कहो कि 'मैं तुम्हारी गऊ हूं'। भाव यह है कि दीन स्वर से पुकारो। प्राणों के भी प्राण उन (श्रीकृष्ण) को देख कर तुम जी जाओगे। उन अच्छे सहायक की रट लगाओ तथा उन्हीं से हा हा खाओ अर्थात् विनती करो, क्योंकि तुम्हें पकड़ने वाला 'हू हू' गन्धर्व है।

युगलपद एक अक्षर

दोहा

केकी केका कीक का, कोक कुकि का कोक।
काक कूक कोकी कुकी कूके केकी कोक ॥४३॥

बहिर्लापिका अन्तर्लापिका

दोहा

उत्तरवरण जु वाहिरे, वहिरलापिका होइ।
अन्तर अन्तरलापिका, यह जाने सब कोइ ॥४४॥

जिस रचना में प्रश्नों का उत्तर बाहर से निश्चित करना पड़े, उसे बहिर्लापिक तथा जिसमें उत्तर रचना के भीतर ही निकल आवे, उसे अन्तर्लापिक कहते हैं।

उदाहरण

बहिर्लापिका

दोहा

अक्षर कौन विकल्प को, युवति बसत कोहि अंग
बलिराजा कौने छल्यो सुरपति के परसंग ॥४५॥

प्रश्न—(१) विकल्प का अक्षर कौन है ? (२) स्त्री का स्थान शरीर के किस ओर है ? (३) इन्द्र के लिए राजा बलि को किसने छला था ? उत्तर— १) 'वा' (२) वाम (३) वामन।

[ये सभी अक्षर छंद में सम्मिलित नहीं है प्रत्युत बाहर से लाने पड़े हैं, अतः बहिर्लापिका अलंकार है]

उदाहरण

अन्तर्लापिका

दोहा

कौन जाति सीता सती, दई कौन कहँ तात।
कौन ग्रन्थ वरण्यो हरी रामायण अवदात ॥४६॥

प्रश्न—(१) सती सीताजी किस जाति की स्त्री थीं ? (२) उनके पिता ने उन्हें किसको दिया ? (३) उनका हरण किस ग्रन्थ में वर्णन किया गया है ? उत्तर (१) रामा (२) रामाय (३) रामायण।

[इसमें उत्तर के सभी अक्षर छन्द के अन्तर्गत ही आ गये हैं, अतः अन्तर्लापिका अलंकार है।]

आधा एकाक्षर

दोहा

केकी केका की कका, कोक कीकका कोक।
लोल लालि लोलै लली, लाला लीला लोल॥ ४१॥

मोर की ध्वनि क्या है चक्रवाक और मेंढकों की ध्वनि भी क्या है। क्योंकि वह नायिका पुत्र प्रेम मे भरी हुई घूमती रहती है और उसी की चंचल लीलाओं पर मुग्ध रहती है।

प्रतिपदाअक्षर

दोहा

गो गो गीगो गोगगज, जीजै जीजी जोहि।
रूरे रूरे रेरु ररि, हाहा हूहू होहि॥४२॥

हे जलमें डूबते हुए गज। तुम 'गो, गो', की पुकार करो अर्थात् यह कहो कि 'मैं तुम्हारी गऊ हूं'। भाव यह है कि दीन स्वर से पुकारो। प्राणों के भी प्राण उन (श्रीकृष्ण) को देख कर तुम जी जाओगे। उन अच्छे सहायक की रट लगाओ तथा उन्हीं से हा हा खाओ अर्थात् विनती करो, क्योंकि तुम्हें पकड़ने वाला 'हू हू' गन्धर्व है।

युगलपद एक अक्षर

दोहा

केकी केका कीक का, कोक कुकि का कोक।
काक कूक कोकी कुकी कूके केकी काक॥४३॥

बहिर्लापिका अन्तर्लापिका

दोहा

उत्तरवरण जु बाहिरे, बहिरलापिका होइ।
अन्तर अन्तरलापिका, यह जाने सब कोइ॥४४॥

जिस रचना में प्रश्नों का उत्तर बाहर से निश्चित करना पड़े, उसे बहिर्लापिक तथा जिसमें उत्तर रचना के भीतर ही निकल आवे, उसे अन्तर्लापिक कहते हैं।

उदाहरण
बहिर्लापिका
दोहा

अक्षर कौन विकल्प को, युवति बसत किहि अंग
बलिराजा कौने छल्यो सुरपति के परसंग ॥४५॥

प्रश्न—(१) विकल्प का अक्षर कौन है? (२) स्त्री का स्थान शरीर के किस ओर है? (३) इन्द्र के लिए राजा बलि को किसने छला था? उत्तर—(१) 'वा' (२) वाम (३) वामन।

[ये सभी अक्षर छंद में सम्मिलित नहीं हैं प्रत्युत बाहर से लाने पड़े हैं, अतः बहिर्लापिका अलंकार है]

उदाहरण
अन्तर्लापिका
दोहा

कौन जाति सीतासती दई कौन कहँ तात।
कौन ग्रन्थ बरण्यो हरी रामायण अवदात ॥४६॥

प्रश्न—(१) सती सीताजी किस जाति की स्त्री थीं? (२) उनके पिता ने उन्हें किसको दिया? (३) उनका हरण किस ग्रन्थ में वर्णन किया गया है? उत्तर (१) रामा (२) रामाय (३) रामायण।

[इसमें उत्तर के सभी अक्षर छन्द के अन्तर्गत ही आ गये हैं, अतः अन्तर्लापिका अलंकार है।]

गूढ़ोत्तर

दोहा

उत्तर जाको अतिदुरयो, दीजै केशवदास।
गूढ़ोत्तर तासों कहत, बरणत बुद्धिविलास ॥४७॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ प्रश्न का उत्तर छिपे हुए रूप में दिया जाय, उसे बुद्धिमान लोग गूढ़ोत्तर अलकार कहते हैं।

उदाहरण—१

सवैया

नखते शिखलौं सुखदैके सिंगारि सिंगार न केशव एक बच्यो।
पहिराइ मनोहर हार हिये पियगात समूह सुगन्ध सच्यो॥
दरसाइ सिरी कर दर्पण लै कपिकुञ्जर ज्यों बहु नाच नच्यो।
सखि पान खवावतही किहिं कारण कोप पिया परनारि रच्यो ४८॥

'केशवदास' कहते हैं कि नायक ने नखसे शिख तक अपनी नायिका का ऐसा शृङ्गार किया कि कोई शृङ्गार बाकी न बचा। फिर सुन्दर हार गले मे पहना कर, शरीर में सब प्रकार की सुगन्ध लगाई। तब उसने एक दर्पण लेकर उसकी शोभा दिखलाई। परन्तु जब वह पान खिलाने लगा, तब तो उसने बड़े बन्दर की भाँति अनेक नाच नाचे अर्थात् बड़ी उछल कूद मचाई। यह देख एक सखी पूछने लगी कि 'बताओ तो सखी अपने नायक पर श्री क्यों क्रुद्ध हुई?' [इसका उत्तर—अतिम चरण के 'पिया पर नारि रूच्यों' मे छिपा हुआ है। अर्थात् उसने पान खिलाते समय ऐसे चिन्ह देखे जिससे उसे ज्ञात हो गया कि मेरा नायक पर स्त्री से सम्बन्ध रखता है इसीसे वह क्रुद्ध हुई]

उदाहरण—२

सवैया

हास विलास निवास हैं केशव, केलि विधान निधान दुनी में।
देवर जेठ पिता सु सहोदर हैं सुखही युत बात सुनी में॥
भोजन भाजन, भूषण, भौन भरे यश पावन देवधुनी में।
क्यों सब यामिनि रोवत कामिनि कंत करै सुभगान गुनी में ॥४९॥

'केशव' कहते हैं कि कोई सखी अपनी सहेली से किसी नायिका के बारे में प्रश्न करती हुई पूछने लगी कि 'वह नायिका हास-विलास की तो मानो घर ही है अर्थात् हास-विलास खूब जानती है। संसार में सब प्रकार के केलि विधानों की जानकारी भी उसे है। उसके देवर, जेठ, पिता, तथा सगे भाई सब कोई हैं और मैंने सुना है कि उसको सब प्रकार के सुख हैं उसका घर भोजन बर्त्तन तथा भूषणों से भरा है और गंगा जैसा पवित्र यश भी उसे प्राप्त है। उसका पति गुणीजनों में उसकी प्रशंसा भी करता है। तब क्या कारण है कि वह स्त्री रात भर रोया करती है? [इसका उत्तर अंतिम चरण के 'सुभगा न गुनी में' शब्दों में छिपा हुआ है अर्थात् मैंने समझ लिया है कि 'वह सुभगा (सुन्दर) नहीं है]

उदाहरण—३

सवैया

नाह नयो, नित नेह नयो, परनारि सो केशो कहूँ न जोवे।
रूप अनूपम भूपर भू सो, आनँदरूप नहीं गुन गोवे॥
भौन भरी सब संपति दंपति, श्रीपति ज्यों सुखसिंधु में सोवे।
देव सो देवर प्राण सो पूत सु कौन, दशा सुदती जिहि रोवे ॥५०॥

'केशवदास' कहते हैं कि उसका नायक नया है स्नेह भी नया है, और वह दूसरी स्त्री की ओर (स्वप्न में भी) नहीं देखता। अनुपम इतनी

सुन्दरता है, पृथ्वी पर राजा के समान आनन्द रूप है तथा के गुण उससे छिपा नहीं है। घर में सब प्रकार की सम्पत्ति भरी हुई है और दोना ही पति पत्नी लक्ष्मी समेत क्षीर समुद्र में सोने वाले श्री विष्णु भगवान् की भाँति सुख के समुद्र में साया करते हैं। उसका देवता स्वरूप देवर तथा प्राण जैसा प्रिय पुत्र हैं। फिर ऐसी कौनसी परिस्थिति है, जिसके वश होकर वह सुदती सुन्दर दाँतों वाली) रोया करती है। [इसका उत्तर अंतिम वाक्यांश 'नद सासु दती जेहि रोवै' में निकलता है अर्थात् नन्द और सास कष्ट देती है, इसलिए रोती है।]

एकानेकोत्तर

दोहा

एकहि उत्तर में जहाँ, उत्तर गूढ अनेक।
उत्तर नेकानेक यह, बरणत सहित विवेक ॥५१॥

जहाँ एक ही उत्तर मे अनेक गूढ अर्थ निकल आवें, विवेकी (बुद्धिमान) लोग, उसे 'एकानेकोत्तर' अलङ्कार कहते हैं।

दोहा

उत्तर एक समस्त को, व्यस्त अनेकन मानि।
जोर अन्त के वर्ण मों क्रमहीं बरण बखानि ॥५२॥

परन्तु वह समस्त उत्तर, अनेक अक्षरों मे व्यस्त (सम्मिलित) रहता है, अतः अंतिम अक्षर में आरम्भ से लेकर क्रमशः एक एक अक्षर जोडते हुए उत्तर निकालना चाहिए।

उदाहरण

छप्पय

कहा न सज्जन बुवन कहा, सुनि गोपी मोहित।
कहा दाम को नाम, कवित्त में कहियत कोहित ॥

को प्यारो जगमाहि, कहा चित लागे आवत।
को बासर को करत, कहा संसारहि भावत॥
कहु काहि देखि कायर कँपत, आदि अन्त को है शरन।
तहँ उत्तर केशवदास दिय 'सबै जगत शोभाधरन' ॥५३॥

सज्जन लोग क्या नहीं खोते ? गोपियाँ क्या सुनकर मोहित होती हैं ? दास का क्या नाम है ? कवित्त के लिए हितकारी कौन कहलाता है ? संसार में प्यारा कौन है ? चाव लगने पर क्या आता है ? दिन को कौन करता है ? संसार को क्या अच्छा लगता है ? कायर लोग किसे देखकर काँपने लगते हैं ? आदि और अन्त में कौन शरण है ? 'केशवदास' इन सबों का उत्तर 'सब जगत शोभा धरन' से देते हैं। [यहाँ 'सबै जगत शोभा धरन' वाक्य का अंतिम अक्षर 'न' है। इसी 'न' में इसी वाक्य के आदि से एक-एक अक्षर क्रम से जोड़ते चलिए तो सभी प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार निकलेंगे। पहला अक्षर 'स' है उसमें 'न' जोड़ा तो 'सन' बना। यह पहले प्रश्न का उत्तर हुआ। इसी तरह 'जन', गन' (कविता के शुभगण) 'तन' 'शोन (रक्त), 'भान' (सूर्य), 'धन' और 'रन' (रण) शब्दों के बनने से सभी प्रश्नों के उत्तर निकल आते हैं। अंतिम प्रश्न 'आदि अन्त का शरण कौन है ?' का उत्तर अन्त का पूरा वाक्य 'सबै जगत शोभा धरन' है अर्थात् सारे संसार की शोभा को धारण करने वाले श्रीकृष्ण ही आदि अन्त में प्राणियों की शरण हैं।

व्यस्त समस्तोत्तर

दोहा

मिलै आदि के बरणसों, केशव करि उचार।
उत्तर व्यस्त समस्तसों, मोंकर के अनुहार ॥५४॥

'केशवदास' कहते हैं कि आदि के अक्षर-अक्षर को कड़ियों की तरह जोड़ने से जहाँ प्रश्नों के उत्तर बनते जाते हैं वहाँ 'व्यस्त समस्तोत्तर' अलङ्कार होता है।

उदाहरण

छप्पय

को शुभ अच्छर, कौन युवति योधन बस कीनी।
विजय सिद्धि संग्राम, रामकहँ कौने दीनी॥
कंसराज यदुवंस, बसत कैसे केशव पुर।
बटसों कहिये कहा, नाम जानहु अपने उर॥
कहि कौन जननि जगजगत की, कमल नयन कंचन बरणि।
सुनि वेद पुराणन में कही, सनकादिक 'शंकरतरुणि'॥५५॥

शुभ अक्षर कौन है? योद्धों ने किस युवती को अपने वश में कर लिया है? श्रीरामचन्द्र को युद्ध में विजय प्राप्त किसने कराई? 'केशव' कहते हैं कि कंस के राज्य में यदुवंश कैसे निवास करता था? वट से क्या कहते हैं? इसे अपने हृदय में विचारो। कमल जैसे नेत्रवाली तथा कंचन जैसे रंग की समस्त जग की माता कौन कहलाती है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर सनकादि ने, वेद और पुराणों के अनुसार 'तरुनि' वाक्य में दे दिया है। [इसमें अंतिम उत्तर 'शङ्कर तरुनि' के सबसे पहले अक्षर 'श' को लीजिए। यह पहले प्रश्न का उत्तर हुआ फिर उसमें आगे का अक्षर 'क' जोड़िए यह 'शक' दूसरे प्रश्न का उत्तर हुआ। इसी तरह से शकर, शकरत, 'शक तरु' और 'शङ्कर तरुणि' उत्तर बनते हैं]

उदाहरण—

कवित्त

कोल काहि धरा धारि धीरज धरमहित,
मारयो केहि सूत बलदेव जोर जब सों।
जाँचे कहा जग जगदीश सों 'केशवदास',
गायो काने रामायण गीत शुभरव सों।

जब अग अवदात जात वन तातन स्यों,
कही कौन कुन्ती मात बात नेह नव सों।
बाम धाम दूरि करि, देव काम पूरि करि,
मोहे राम कौन सों संग्राम कुशलव सों ॥५६॥

बराह भगवान् ने, धर्म के लिए, शरीर धारण करके किसको धारण किया? श्री बलदेव जी ने, किससे बड़े वेग से सूत को मारा? 'केशवदास' कहते हैं कि जगदीश अर्थात् भगवान ने सारा संसार क्या माँगता है? 'रामायण' को किसने शुभ राग से गाया था? जब श्रेष्ठ अंग वाले (युधिष्ठिर) वन भाइयों सहित को जाने लगे थे, तब माता कुन्ती ने प्रेम पूर्वक कौन सी बात कही थी? अपनी स्त्री सीता को निकालकर, देवताओं का कार्य पूर्ण करके, श्रीरामचन्द्र जी किनके द्वारा मूर्छित किये गये थे? इन सबका उत्तर है 'कुशलवसों' [इसमें भी पहले उदाहरण की तरह पहले 'कु' शब्द लीजिए तो वह पहले प्रश्न का उत्तर होगा अर्थात् वाराह भगवान ने 'कु' अर्थात् पृथ्वी को धारण किया। फिर इसमें दूसरा अक्षर 'श' जोड़िए तो 'कुश' बना, जो दूसरे प्रश्न का उत्तर हुआ अर्थात् श्री बलदेव जी ने सूत को 'कुश' से मारा। इसी प्रकार 'कुशलव' 'कुशल वसों' (कुशल से रहो), और 'कुश लव सों' अर्थात् कुश और लव के साथ ये उत्तर क्रम से बनते हैं।]

व्यस्त गतागत उत्तर वर्णन

दोहा

एक एक तजि बरण को, युग युग बरण विचारि।
उत्तर व्यस्त गतागतनि, एक समस्त निहारि ॥५७॥

जब उत्तर के बाले दो अक्षर लेकर, आगे का एक एक अक्षर छोड़ते हुए अर्थ निकलता है, तब उसे 'व्यस्त' तथा इसी, को

इसी क्रम से उलटने पर जो अर्थ आता है, उसे 'समस्त' समझना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

कै है रस, कैसे लई लक, काहे पति पट,
होत, 'केशौदास' कौन शोभिये सभा मे जन।
भोगनि को भोगवत, कौने गनें भागवत
जीने का यतीन, कौन हैं प्रनाम के वरन।
कौन करी सभा, कौन युवती अजीत जग,
गावैं कहा गुणी, कहा भरे हैं भुजंग गन।
कापै मोहैं पशु, कहा करैं तपी तप इन्द्र.
जीत जी वसत कहाँ 'नवरंगराय मन' ॥५८॥

रस कितने हैं ? लङ्का कैसे ली ? पीला वस्त्र कैसे होता है ? केशव दास' कहते हैं कौन मनुष्य सभा में सुशोभित होता होता है ? कौन भोगों को भोगता है ? भागवत में किसको गिनते हैं ? यतियों ने किसे जीता है ? 'प्रणाम के कौन अक्षर हैं ? सभा किसने बनाई ? कौन स्त्री अजीत है ? गुणी लोग क्या गाते हैं ? साँपों में क्या भरा है ? पशु (हिरन) किस पर मोहते हैं ? तपस्वी कहाँ पर तप करते हैं ? तथा इन्द्रजीत जी कहाँ बसते हैं। 'इन सभी प्रश्नो का उत्तर 'नवरंग-राय मन' निकलता है। [ऊपर दी हुई परिभाषा के अनुसार पहले 'व्यस्त' और फिर समस्त उत्तरों का अर्थ निकालिए। पहले दो अक्षर 'नव' लीजिए। यह पहले प्रश्न का उत्तर हुआ। फिर पिछला अक्षर 'न' छोड़ दीजिए और आगे का अक्षर 'र' मिला दीजिए तो वर' बना, यह दूसरे प्रश्न का उत्तर हुआ। इसी क्रम से 'रग' 'गरा' अर्थात् गम्भीर, 'राय', 'यम' और 'मन' उत्तर निकलते हैं पहले ७ प्रश्नों के

उत्तर हैं। फिर इन्हीं को उलट दीजिए तो 'नमः' 'मय' 'यरा' (जरा = बुढ़ापा), 'राग', गर', 'रन' और 'वन' उत्तर निकलते हैं। ये पिछले ७ प्रश्नों के उत्तर हुए अंतिम प्रश्न 'इन्द्रजीत कहाँ रहते हैं' का उत्तर 'नवरगराय मन' होगा। अर्थात् वह 'नवरङ्गराय' के मन में निवास करते हैं। इसमें आवश्यकतानुसार अनुस्वार छोड़ दिया गया है और 'य' को 'ज' मान लिया गया है, क्योंकि चित्रालङ्कार में यह दोष नहीं माना जाता।]

दोहा

उत्तर व्यस्त समस्तको, दुवो गतागत जान।
केशव दास विचारिके भिन्न पदारथ आन ॥ ५९ ॥

'केशवदास' कहते हैं कि इसमें व्यस्त और समस्त दोनों अर्थ होते हैं, जिनमें व्यस्त उत्तर गतागत (सीधे-उलटे) होते हैं और समस्त सीधे ही होते हैं परन्तु उनमें पदों का अर्थ भिन्न हो जाता है।

उदाहरण

सवैया

दाननसों, परसों, परमानकों, आनसों बात कहा कहिये नय।
भूपनसों उपदेश कहा, किहि रूपभले, किहि नीति तजे भय ॥
आपु रिपुनसों क्यों कहिये रिनकाहि भये, छितिपालन के छय।
न्याय कै बोल्यो कहा नृप केशव, को अहिमेध कियो जनमेजय ॥६०॥

दानों से क्या मांगते हैं? शत्रु से क्या करना चाहिए? प्रमाण की बात को नीति पूर्वक से क्या करना चाहिए? राजाओं को क्या उपदेश देना उचित है? किससे रूप अच्छा लगता है? नीति को छोड़ देने पर क्या भय है? आगे से लड़ाई रखने वालों से क्या करना चाहिए? क्या न होने से राजाओं का नाश होता है? 'केशवदास' कहते हैं कि पापियों का न्याय करके राजा क्या करते हैं? तथा नरेश

यज्ञ किसने किया ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर 'जनमेजय' में है।
[पहले प्रश्नों के उत्तर व्यस्त गतागत ढग से निकालिए तो पहले प्रश्न का उत्तर 'जन' निकलेगा। दूसरे का 'नमे', तीसरे का 'मेय' (ठीक-ठीक) और चौथे का 'जय'। इसके बाद पिछले प्रश्नों के उत्तरों के लिए क्रम को उलटिए तो यज', जमे' अर्थात् यमे या यमराज का, मैन' और नय' [नीति उत्तर निकलेंगे। फिर समस्तोत्तर भिन्न पदार्थ से निकालिए ता जनमे जय' अर्थात् जन्म धारण करने से जीत हागी तथा 'जनमे जय' ने ये उत्तर निकलेंगे]

विपरीत व्यस्त समस्त

उदाहरण (१)

रोला छन्द

कै ग्रह, कै मधु हत्यो, प्रेम केहि पलुहत प्रभुमन।
कहा कमल को गेह, सुनत मोहत किहि मृगगन॥
कहाँ बसत सुखसिद्ध, कविन कौतुक किहि बरनन।
किहि सेये पितु मातु कहो, कवि केशव 'सरवन, ॥६१॥

ग्रह कितने हैं ? श्रीविष्णु ने मधु को कैसे मारा ? प्रभु के मन में प्रेम कैसे पल्लवित होता है ? कमल का घर कौन सा है ? किसको सुनकर मृग मोहित हो जाते हैं ? सिद्ध लोग आनन्द पूर्वक कहाँ रहते हैं। कवि कौतुक के साथ किसका वर्णन करते हैं ? माता-पिता की सेवा किसने की ? 'केशव कहते हैं कि इनका उत्तर 'सरवन' ।

[पहले प्रश्नों का उत्तर अत की ओर से आरम्भ कीजिए तो पहले प्रश्न का उत्तर 'नव हुआ। फिर 'न' छोड़ कर आगे का अक्षर लीजिए तो 'वर' बना। इसी तरह तीसरे का उत्तर 'रस हुआ। अब सीधी ओर से चलिए तो चौथे प्रश्न का उत्तर 'सर' निकला। अब आगे का अक्षर मिलाइए तो 'रव' बना। यह पाँचवे प्रश्न का

उत्तर हुआ। इसी तरह से छठे प्रश्न का उत्तर 'वन' निकला। अंतिम दो प्रश्नों के उत्तरों के लिए पूरे शब्द सरवन को पहले उलटिए तो 'नवरस' उत्तर मिलेगा। फिर सीधे पढ़िए तो ८ वें प्रश्न का उत्तर सरवन' अर्थात् श्रवण कुमार निकल आवेगा।]

उदाहरण—२

सोरठा

कठबरत को सात, कोक कहा बहुविधि कहै।
को कहिय सुर तात, का कामीहित 'सुरतरन ॥ ६२ ॥

कट में कौन सात बनते हैं? कोकशास्त्र अनेक विधि से क्या कहता है? देवताओं का प्यारा कौन कहलाता है? कामी का हितैषी कौन है? उत्तर 'सुरतरन। [इसमें भी पहले उदाहरण की भाँति उत्तर निकालने पर पहले प्रश्न का उत्तर 'सुर' होगा। दूसरे का 'सुरत' तीसरे का 'सुरतर (कल्प वृक्ष) और चौथे का 'सुरत रन,। इसमें एक विशेषता और है कि उलटने पर भी यही शब्द बनते हैं]

दोहा

उत्तर व्यस्त समस्त को, दुवो गतागत जान।
एकहि अर्थ समर्थ मति, केशवदास बखान ॥ ६३ ॥

व्यस्त समस्त का उत्तर गतागत (उलटा-सीधा) दोनों प्रकार से दिया जाता है। परन्तु 'केशवदास कहते हैं कि जो समर्थ मति अर्थात् मतिमान ज्ञानी होते हैं, वे ऐसी रचना करते हैं जिनमें उलटा-सीधा दोनों प्रकार से पढ़ने पर एक ही अर्थ निकलता है [ऊपर लिखे सोरठा में 'सुरतरन' उत्तर में यही बात है। दोनों ओर से एक ही अर्थ में पढ़ा जा सकता है]

शासनोत्तर

दोहा

तीनि शासननि को, एकहि उत्तर जानि ॥
शासनउत्तर कहत हैं, बुधजन ताहि बखानि ॥६४॥

जहाँ तीन-तीन बातों का उत्तर एक ही वाक्य में दिया जाता है, वहाँ बुद्धिमान लोग उसे शासनोत्तर अलंकार कहते हैं।

छप्पै

चौक चारु करु, कूप ढार घरियार बाँध घर।
मुक्तमोल करु खग्ग खोल, सींचहि निचोल वर ॥
हय कुदाव, दै सुरकुदाव, गुणगाव रंकको ।
जानुभाव, सिवधाम धाव, धन ल्याव लंकको ॥
यह कहत मधुकरशाहि के, रहे सकलदीवानदबि ।
तब उत्तर केशवदास दिय, घरी न, पानी, जान, कवि, ॥ ६५ ॥

(१) सुन्दर चौक लगा (२) कुए से पानी निकाल (३) घड़ियाल बाँध। (४) मोतियों का मोलकर (५) खड्ग निकाल (६) सुन्दर कपड़े को धो (७) घोड़े को कुदा दे (८) स्वर से धोखा दे (९) रंक का गुण गा। (१०) भावों का जान (११) सबके घर जा (१२) लंका का धन ले आ। इन प्रश्नों को राजा मधुकर शाह ने किया तो सभी सभा चुप हो गई, अर्थात् कोई उत्तर न दे सका। यह देख 'केशवदास' ने (ऊपरलिखे) तीन-तीन प्रश्नों का एक-एक उत्तर 'घरीन' पानीन 'जान न' और 'कवित्त' में दे दिया। [पहले तीन प्रश्नों का उत्तर है कि घड़ी नहीं है। अर्थात् चौक पूरने के लिए घड़ी या मुहूर्त नहीं है पानी खींचने के लिए धरी या गराड़ी नहीं है और घड़ियाल बाँधने के लिए घड़ी नहीं है। इस तरह आगे के तीन प्रश्नों का उत्तर 'पानी नहीं है। अर्थात् मोती में आब नहीं है तलवार पानी-

दार नहीं है और कपड़ा धोने के लिए पानी नहीं है। फिर तीन प्रश्नों का उत्तर, जान नहीं है। अर्थात् घोड़ा कुदाने के लिए जानु अर्थात् जंघा नहीं है, वह लंगड़ा है, शत्रुओं से धोखा देने का मुझे ज्ञान अर्थात् ध्यान नहीं है और रक्त के गुण बताने की मुझे जानकारी नहीं है अन्तिम तीन प्रश्नों का उत्तर 'कवि नहीं' है। अर्थात् भावों को जानने के लिए मैं कवि नहीं हूँ, सब के घर जाने के लिए भी कपि हूँ, जो सब जगह पहुँच सकूँ, प्रत्येक घर में आदर हो और लंका का धन लाने के लिए भी मैं कवि अर्थात् शुक्राचार्य नहीं हूँ जो अपने यजमान रावण से धन माँग लाऊँ।]

प्रश्नोत्तर

दोहा

जेई आखर प्रश्न के, तेई उत्तर जान।
यहि विधि प्रश्नोत्तर सदा, कहैं सुबुद्धिनिधान ॥६६॥

जहाँ जो अक्षर प्रश्न के होते हैं वे ही उत्तर के भी बन जाते हैं। इस तरह की रचना को बुद्धिमान लोग सदा प्रश्नोत्तर अलंकार कहते हैं।

उदाहरण—१

दोहा

को दण्डधारी सुभट, को कुमार रतिवंत।
को कहिये शशिते दुखी, को कोमल मन सन्त ॥६७॥

कौन सुभट दण्ड धारी (कर वन्दने वाला) होता है? कौन कुमार रतिवंत (प्रेमी) होता है? चन्द्रमा से कौन दुखी कहलाता है? और हे सन्त! कोमल मन वाला कौन होता है? इन प्रश्नों के उत्तर प्रश्न के शब्दों में ही निकल आते हैं। पहले का उत्तर है 'को दण्ड धारी' अर्थात् धनुर्धारी, दूसरे का उत्तर 'को कुमार रतिवंत' है अर्थात् कौन

शास्त्र और काम से प्रेम रखने वाला। तीसरे का उत्तर 'को कहिये शशि तें दुखी' निकलता अर्थात् चकवा का हृदय चन्द्रमा से दुखी रहता है। अंतिम प्रश्न का उत्तर 'कोमल मन सन्त' है अर्थात् सन्त कोमल मन वाले होते हैं।

उदाहरण—२

दोहा

कालि काहि पूजै अली, कोकिलकंठहि नीक।
को कहिये कामी सदा, काली काहै लीक ॥६८॥

हे सखी कल किसे पूजा था? किसका कंठ अच्छा होता है? कौन सदा कामी कहलाता है और लीक अर्थात् वास्तव में काली कौन है? इनका उत्तर भी पहले उदाहरण की भाँति प्रश्नों के अक्षरों से ही निकल आता है। पहले का उत्तर है कि 'कलिका हि पूजै अली' अर्थात् हे सखी मैंने कालिका की पूजा की। दूसरे का अर्थ है कि 'कोकिल कंठहि नीक' अर्थात् कोयल का कंठ अच्छा होता है। तीसरे का उत्तर 'को कहिये कामी सदा' अर्थात् चकवा का हृदया सदा कामी संयोग का इच्छुक रहता है और अंतिम प्रश्न का उत्तर काली का है लीक' अर्थात् काजल की रेखा काली है।

गतागत

दोहा

सूधो उलटो बाँचिये, एकहि अर्थ प्रमान।
कहत गतागत ताहि कवि, केशवदास सुजान ॥६९॥

केशवदास कहते हैं कि हे सुजान! जहाँ सीधा और उलटा पढ़ने पर एक ही अर्थ निकलता है, उसे कवि लोग 'गतागत' कहते हैं।

वश में ही हैं और दास हैं अतः वही केलि (क्रीडा) वनी है अर्थात् क्रीड़ा स्थली है और बलमा (प्रियतम) भी वही हैं।

व्यस्त गतागत

सवैया

सैनन माधव, ज्यों सर के सबरेख सुदेश सुवेश सबै।
नैनवकी तचि जी तरुणी रुचि चीर सबै निमिकाल फलै।।
तैं न सुनी जस भीर भरी धार धीरऽबरीत सु का न वहै।
मैनमनी गुरुचाल चलै शुभसा बन में सरसी व लसै ॥७२॥

माधव को सैन (शयन, नींद) नहीं आती। सुदेश (सुन्दर) और सुवेश (अच्छे वेशवाली) सभी स्त्रियाँ उन्हें बाण सम ज्ञात होती हैं। उन्होंने जी में तचकर (दुखी होकर जलकर) नैनव अर्थात् नयी नीति को अपनाया है। अन्य तरुणियों की रुचि (शोभा) और चीर (वस्त्र) उन्हें नीम तथा कालफल (इन्द्रायण) जैसे कटु लगते हैं। वहाँ स्त्रियों की जितनी भीड़ रहती है, उसे क्या तूने नहीं सुना ? वे स्त्रियाँ इतनी सुन्दर हैं कि उन्हें देखकर रीति अर्थात् कुल मर्यादा का वहन कौन कर सकता है ? भाव यह है कि उन्हें देख लेने पर कुलमर्यादा का निर्वाह करना कठिन है– विचलित हो जाने की सम्भावना है। पर वह मैंनमणि अर्थात् कामदेव जैसा सुन्दर नायक गुरुचाल (मर्यादा की चाल) पर चलता है और वह शुभ नायक (श्रीकृष्ण) इस समय वन में सरसी (जलाशय) के निकट बैठा है।

इसे उलट कर पढ़ने से जो सवैया बनेगा वह इस प्रकार है:—

सवैया

(४) शैल वसा रसमैनवशोभ सु लै चल चारुगुणी मनमैं।
(३) हैं वनको सु, ति, री, धर, धीर, धरी भर, भीसजनीसुनतै।।
(२) लै फन्त कामिनि, वैसरची, चिरु, नीरुतजीचितकीवननै।
(१) वैसमुवेशसदेसुखरेवसकैरसज्योवधमाननसै ॥ ७३ ॥

गोमूत्रिका

दोहा

इन्द्रजीत सगीत लै, किये रामरस लीन।
क्षुद्रगीत सगीत लै, भये कमावस दीन ॥ ७५ ॥

गोमूत्रिका चक्र

इ	द्र	ना	त	सं	गा	त	लै	कि	य	रा	म	र	स	ली	न
क्षु	द्र	गो	न	सं	गा	त	लै	भ	ये	का	म	ब	स	दी	न

इसका नाम गोमूत्रिका इसलिए पडा कि बैल के मूतते हुए चलने पर जैसी टेढी मेढी रेखाए बनती है, वैसी इसमें भी बन जाती है—

अश्वगतिचक्र

दोहा

इन्द्रजीत सगीतलै, किये रामरस लीन।
क्षुद्रगीत सगीतलै भये कामवस दीन ॥ ७६ ॥

अश्वगतिचक्र

इं	द्र	जी	त	सं	गा	त	लै
कि	ये	रा	म	र	स	ली	न
क्षु	द्र	गी	त	स	गी	त	लै
भ	ये	का	म	व	स	दी	न

[यह घोड़े की चाल के अनुसार पढा जाता है]

है तो भी वह बड़ी ही सुशोला है। (सभी कष्ट को शान्ति पूर्वक सहलेती है)

त्रिपदी

दोहा

रामदेव नरदेव गति, परशु धरन मद धारि।
वामदेव गुरदेव गति, पर कुधरन हद धारि॥ ७९॥

श्री राम तो पर ब्रह्म हैं पर उनकी गति नरदेव अर्थात् राजाओं जैसी है। उनके सामने परसुधर अर्थात् श्री परशुराम जी भी अपने मद को धारण न किये रह सके। वही शिवरूप हैं, वही गुरुदेव हैं, उनकी गति सबसे परे हैं, वही कु अर्थात् पृथ्वी को धारण करते हैं और वही मर्यादा धारी हैं।

[इस दोहे से नीचे लिखे तीन प्रकार के चित्र बन सकते हैं:—

(१)

रा	दे	न	दे	ग	प	शु	र	म	धा
म	व	र	व	ति	र	ध	न	द	रि
वा	दे	गु	दे	ग	प	कु	र	ह	धा

(२)

राम	वन	देव	तिप	शुध	नम	धा
दे	र	ग	र	र	द	रि
वाम	वगु	देव	तिप	कुध	नह	धा

(३)

राम	नर	गति	सुध	मद
दे	देव	पर	रन	धारि
धाम	गुरु	गति	क्रुध	हृद

चरण गुप्त

दोहा

राजत अँगरस विरस अति, सरस सरस रस भेव।
पग पग प्रति द्युति बढ़ति अति, वयनवमन मतिदेव ॥८०॥

सुवरण वरण सु सुवरणनि रचित रुचिर रुचि लीन।
तन मन प्रकट प्रवीन मति, नवरंग राय प्रवीन ॥८१॥

नवरंग राय का अंगरस (प्रेम) और विरस (मान) दोनों समय में सुशोभित होता जाता है। वह सरस अर्थात् रसीला है और रस-भेद (काम क्रीडा) में सरस (चतुर) है। उसकी (नाचते समय) पग पग पर द्युति बढ़ती है उसकी नवीन रत है और उसकी मति देवता में लगी रहती है। उसका वरण अर्थात् रंग सुवरण (सोने) जैसा है और उसकी रुचि (शोभा) में सुवरणरचित (सोने से बने) गहना में लीन हो जाती है। उसके तन तथा मन में प्रवीणता प्रकट होती है

चरणगुप्त (१)

५ ४ ३

रा	ज	त	श्रॉ	ग	र	स	वि	र
स	श्र	ति	स	र	स	स	र	स
र	स	भे	व॥	प	ग	प	ग	प्र
ति	ध्रु	ति	च	ढ	ति	श्र	ति	व
य	न	व	म	न	म	ति	दे	व॥
सु	व	र	ण	व	र	ण	सु	सु
व	र	ण	नि	र	चि	त	रु	चि
र	रु	चि	ली	न॥	त	न	म	न
प्र	क	ट	प्र	वी	न	म	ति	न

६ २ १

७ ८ ९

(२)

५ ४ ३

रा	जतश्रॉ	ग	रसवि	र
स र ति	श्र तस सभेव॥ ध्रु तिच	र प ढ	ससर गपग तिश्रति	स प्र व
य	न वम	न	मतिदे	व॥
सु व र	वरण रणनि रुचिली	व र न॥	रणसु चितरु तनम	सु चि न
प्र	कटप्र	वी	नमति	न

६ २

[इनमें 'नवग्रहराय प्रवीन' चरणगुप्त हो जाता है और १, २, ३, ४ आदि अंकों द्वारा सूचित अक्षरों को जोड़कर पढ़ने से प्रकट हो जाता है]

चक्रबन्ध

दोहा

मुरलीधर मुख दरसि सुख संमुख सुख श्रीधाम।
सुनि सारन नैनी सिखैं, श्री मुख पूजै काम ॥८२॥

सर्वतोभद्र

कामदेव चित्त दाहि, वाम देव मित्त ताहि।
वामदेव चित्त चाहि धाम देव नित्त ताहि ॥८३॥
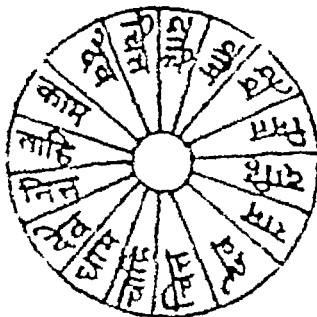
अथ कमलबन्ध

दोहा

राम राम रम छेम छम, शम दम क्रम धम वाम ।
दाम काम यम प्रेम वम, यम यम दम श्रम त्राम ॥८४॥

अथ धनुपबद्ध

दोहा

परम धरम हरि हेरही, केशव सुने पुरान ।
मन मन जानै नारि द्वै, जिय यश सुनत न आन ॥८५॥

धनुपबद्ध
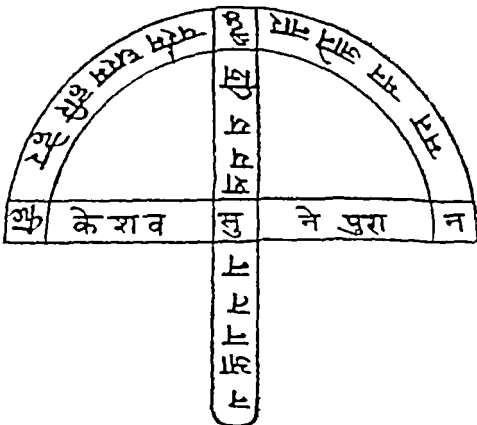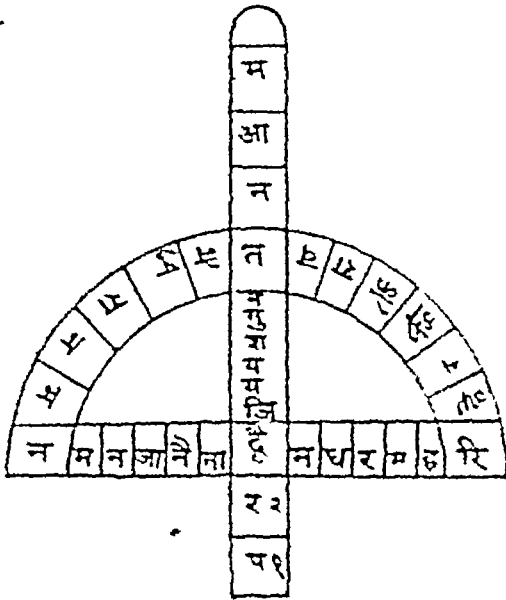
द्वितीय धनुपत्रबन्ध

सर्वतोभद्र

अथ सर्वतोभद्र

श्लोक

सीता सो न न सीता सो सार सार रसा रता।
ताम्रा कर्णा सोक सामा नरला न नसारन ॥८३॥

सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
न	र	ली	न	न	ली	र	न
न	र	ली	न	न	ली	र	न
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी

इसको कामधेनु भी कहते हैं।

अथ पर्वतबन्ध

१
या
म
य
रा गे बु
तौ हि त चौ र
ही का म म नो ह र
है अ भ या मी त अ मो त
नि को दु ख दे त द या ल क हा
व न हो न द या स त्य क हो क हा भू
ठ मे पा व न दे खो वे ई जि न रे खी क या
स

अथ पर्वतबन्ध चित्र

सवैया

यामय रागेसुती हितचोरटी काम मनोहर है अभया।
मीत अमीतनिको दुख देत दयाल कहावत हीन दया॥
सत्य कहो कहा झूठ में पावत देखो वेई जिन रेखी क्या।
यामें जे तुम मीत मये ससवेंम तमीमन रेयमया॥८७॥

अथ सर्वतोमुखचित्र को मूल

सवैया

काम, अरै, तन, लाज, भरै, कच, मानि, लिये, रति, गान, गई, रूख।
धाम, धरै, गम, साज, करै, अच, कानि, किये, पति, थान, दई, दुख॥
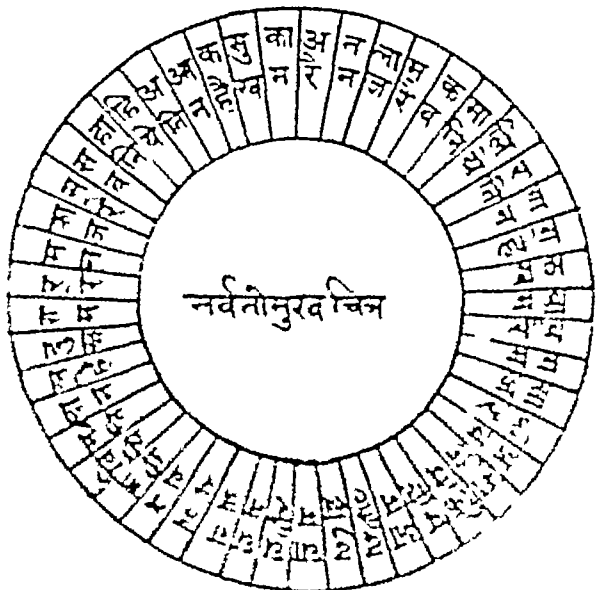
धाम, धरै, धन, राज, हरै, तब, बानि, बिये, मति, दान, लहै,' दुख।
राम, ररै, मन, काज, सरै, सब, हानि हिये, अति, आन, कहै, सुख॥८८॥

हारबन्ध

दोहा

हरि हरि हरि ररि दौरि दुरि, फिरि फिरि करि करि आर।
मरि मरि जरि जरि हारि परि, परि हरि अरि तरि तारि॥८९॥

हारबन्ध
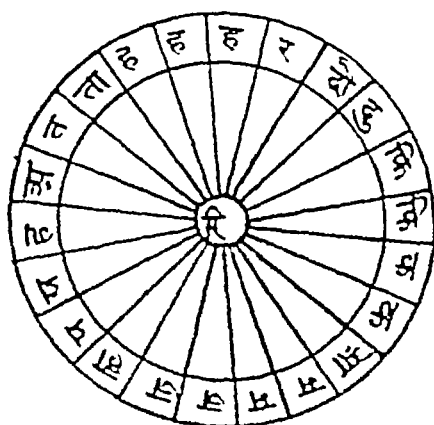
अथ मंत्रीगति चित्र

रा	म	फ	हो	न	र	जा	न	हि	ये	मृ	त	ला	ज	स	वै	ध	रि	मौ	न	ज	ना	व	त
ना	म	ग	हो	उ	र	मा	न	कि	ये	कृ	त	का	ज	ज	वै	क	रि	तौ	न	ब	ता	व	त
ऋा	म	द	हो	हृ	र	श्रा	न	हि	य	वृ	त	रा	ज	ज	वै	भ	रि	भौ	न	अ	ना	व	त
जा	म	च	हो	व	र	पा	न	पि	य	धृ	त	आ	ज	अ	वै	ह	रि	क्यौं	न	म	ना	व	त

अथ डमरूबद्ध चौकीबद्ध

नर मरवर श्री सदातन मन सरस सुर बसि करन।
नरकसि विरसुसकल सुख दुख हीन जीवन मरन॥
नर मन जीवन हीन रदय मदय मति मतहरन।
नरहत मति मय जगत केशवदास श्रीवसकरन ॥९२॥

सुवरण जटित पदारथनि, भूषण भूषित मान।
कविप्रिया है कविप्रिया, कविकी जीवन जान ॥३।
पल पल प्रति अवलोकिबो, सुनिबो गुनिबो चित्त।
कविप्रिया को रच्छिये, कविप्रिया ज्यों मित्त ॥४॥
अनल अनिल जल मलिन ते, विकट खलन तें नित्त।
कविप्रिया ज्यों रच्छिये, कविप्रिया ज्यो मित्त ॥५॥
केशव सोरह भाव शुभ, सुवरन मय सुकुमार।
कविप्रिया के जानिये, यह सोरह शृङ्गार ॥६॥

केशवदास कहते हैं कि इस प्रकार कामधेनु से लेकर कल्पवृक्ष पर्यन्त अनेक प्रकार के चित्र काव्य कविगण वर्णन किया करते हैं। अतः चित्रकाव्यों को असंख्य मानना चाहिये। मैंने तो अपनी बुद्धि के अनुकूल उनके वर्णन करने का मार्ग भर बतला दिया है। सोने के बने हुए मणि जटित गहनों के समान सुशोभित यह 'कवि प्रिया कवियों की प्यारी है और उसको कवि प्राणों जैसा प्रिय मानते हैं। हे मित्र ! इस पल-पल देखना, सुनता और मन से समझता तथा इस कवि-प्रिया' को कविप्रिया की भाँति ही रक्षा करना तथा इसकी आग, पानी तथा विकट दुष्टों से नित्य रक्षा करना। 'कविप्रिया' के सुवरन (सुन्दर अक्षरों युक्त), तथा सुकुमार (कोमल) भावो से युक्त सोलहो प्रभावों को सोलह शृङ्गार के समान मानिए।